4:18
47
Edit Annotate Fill & Sign Convert All

इकाई- 1 लोक प्रशासन का अर्थ, प्रकृति, क्षेत्र एवं महत्व

इकाई की संरचना

1.1 प्रस्तावना
1.2 उद्देश्य
1.3 लोक प्रशासन का अर्थ
    1.3.1 लोक प्रशासन की विभिन्न परिभाषाएँ
    1.3.2 लोक प्रशासन की प्रमुख विशेषताएँ
1.4 लोक प्रशासन की प्रकृति
    1.4.1 एकीकृत एवं प्रबन्धकीय दृष्टिकोण
    1.4.2 लोक प्रशासन विज्ञान है या कला
1.5 लोक प्रशासन का विषय क्षेत्र
    1.5.1 संकुचित दृष्टिकोण
    1.5.2 व्यापक दृष्टिकोण
    1.5.3 पोस्डकार्ब दृष्टिकोण
    1.5.4 आदर्शवादी दृष्टिकोण
1.6 लोक प्रशासन का महत्व
1.7 सारांश
1.8 शब्दावली
1.9 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
1.10 संदर्भ ग्रन्थ सूची
1.11 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री
1.12 निबंधात्मक प्रश्न

1.1 प्रस्तावना

किसी भी विषय का अध्ययन प्रारंभ करते समय विधार्थी सर्वप्रथम विषय की आधारभूत बातों से परिचित होना चाहते हैं। आप अपने दिनानुदिन के अनेक कार्यों के सन्दर्भ में प्रशासन के सम्पर्क में आते होंगे और इतना तो जानते ही होगे कि प्रशासन वह संगठन है जो हमारे जीवन की विभिन्न क्रियाओं को नियत्रित एवं प्रभावित करता है। स्नातकोत्तर स्तर पर 'लोक प्रशासन' के इस पाठयक्रम की इस प्रथम इकाई में लोक प्रशासन के अर्थ, प्रकृति, क्षेत्र एवं महत्व पर प्रकाश डाला गया है। एक क्रिया के रूप में लोक प्रशासन उतना ही प्राचीन है जितना कि मानव का संगठित जीवनए किन्तु अध्ययन के एक विषय के रूप में इसका विकास आधुनिक काल में हुआ है, प्रारंभिक काल में लोक प्रशासन का कार्य शांति एवं व्यवस्था बनाये रखनाए अपराध रोकना तथा पारस्परिक विवादों को सुलझाने जैसे कार्यों तक सीमित था। किन्तु आधुनिक लोक कल्याणकारी राज्यों में इसका कार्य-क्षेत्र

एवं प्रभाव कई गुणा बढ़ गया है, शासन का स्वरुप चाहे कैसा भी हो, लोक प्रशासन राजनितिक व्यवस्था का एक अपरिहार्य तत्व है। इस इकाई के अध्ययन के वाद आप समझा सकेंगे कि लोक प्रशासन क्या है, इसके अन्तर्गत किन विषयों का अध्ययन किया जाता है तथा इसका हमारे व्यक्तिगत एवं सार्वजनिक जीवन में क्या महत्व है।

1.2 उद्देश्य

सुलझाने जैसे कार्यों तक सीमित था। किन्तु आधुनिक लोक कल्याणकारी राज्यों में इसका कार्य-क्षेत्र

एवं प्रभाव कई गुणा बढ़ गया है, शासन का स्वरुप चाहे कैसा भी हो, लोक प्रशासन राजनितिक व्यवस्था का एक अपरिहार्य तत्व है। इस इकाई के अध्ययन के वाद आप समझा सकेंगे कि लोक प्रशासन क्या है, इसके अन्तर्गत किन विषयों का अध्ययन किया जाता है तथा इसका हमारे व्यक्तिगत एवं सार्वजनिक जीवन में क्या महत्व है।

1.2 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के उपरान्त आप-

- लोक प्रशासन के अर्थ को समझ सकेंगे तथा इसकी परिभाषा कर सकेंगे।
- लोक प्रशासन की प्रमुख विशेषताओं को रेखांकित कर सकेंगे।
- लोक प्रशासन की प्रकृति को स्पष्ट कर सकेंगे।
- लोक प्रशासन के महत्व पर प्रकाश डाल सकेंगे।

1.3 लोक प्रशासन का अर्थ

लोक प्रशासन, प्रशासन का एक विशिष्ट अंग है। प्रशासन एक सुनिश्चित उद्देश्य की पूर्ति के लिए मनुष्यों द्वारा परस्पर सहयोग का नाम है। इसका अर्थ है 'कार्यों का प्रबन्ध करना अथवा लोगों की देखभाल करना।' यह एक व्यापक प्रक्रिया है, जो सभी सामूहिक कार्यों के विषय में चाहे सार्वजनिक हो या व्यक्तिगत, नागरिक हो या सैनिक, बड़े कार्य हों या छोटे, सभी के सम्बन्ध में लागू होता है। दूसरे शब्दों में प्रशासन शब्द के अंतर्गत निजी एवं सरकारी गतिविधियों का प्रबन्धन सम्मिलित है। इस अर्थ में प्रशासन को विश्वविद्यालयों, चिकित्सालयों, व्यापारिक कम्पनियों, विभिन्न सरकारी विभागों आदि में देखा जा सकता है। लोक प्रशासन, प्रशासन का वह भाग है जिसका सम्बन्ध शासन की गतिविधियों से होता है। व्यक्तिगत प्रशासन के विपरीत यह शासकीय कार्यों का प्रबन्धन है। एक विशिष्ट राजनैतिक व्यवस्था के अंतर्गत लोक प्रशासन राजनीतिक निर्णयों को कार्यरूप में परिवर्तित करने का एक साधन है। इसके द्वारा ''सरकार के उद्देश्यों एवं लक्ष्यों की प्राप्ति होती है'' इसका सम्बन्ध सार्वजनिक समस्याओं से है। यह लोक हित के लिए सरकार द्वारा किया गया संगठित प्रयास है। यह राजनीतिक प्रक्रिया का भी एक भाग है क्योंकि लोकनीति के निर्धारण में यह महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है। समाज को सुविधायें प्रदान करने हेतु अनेक निजी समूहों और व्यक्तियों से इसका घनिष्ठ सम्बन्ध है। यह निजी प्रशासन से कई दृष्टियों से भिन्न है।

1.3.1 लोक प्रशासन की विभिन्न परिभाषाएँ

अध्ययन के एक विषय के रूप में लोक प्रशासन सामाजिक विज्ञान की वह शाखा है जो मुख्य रूप से शासन के क्रियाकलापों तथा प्रक्रियाओं से संबंध रखता है। इसे जन प्रशासन, सार्वजनिक प्रशासन या सरकारी प्रशासन भी कहा जाता है।' लोक' शब्द का प्रयोग सार्वजनिकता का सूचक है तथा इस विषय को एक विशिष्टता प्रदान करता है।सरकार के तीन अंग होते है: व्यवस्थापिका, कार्यपालिका और न्यायपालिका। क्या लोक प्रशासन में सरकार के तीनों अंगो का अध्ययन किया जाना चाहिए?

इसका सम्बन्ध सार्वजनिक समस्याओं से है। यह लोक हित के लिए सरकार द्वारा किया गया संगठित प्रयास है। यह राजनीतिक प्रक्रिया का भी एक भाग है क्योंकि लोकनीति के निर्धारण में यह महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है। समाज को सुविधायें प्रदान करने हेतु अनेक निजी समूहों और व्यक्तियों से इसका घनिष्ठ सम्बन्ध है। यह निजी प्रशासन से कई दृष्टियों से भिन्न है।

1.3.1 लोक प्रशासन की विभिन्न परिभाषाएँ

अध्ययन के एक विषय के रूप में लोक प्रशासन सामाजिक विज्ञान की वह शाखा है जो मुख्य रूप से शासन के क्रियाकलापों तथा प्रक्रियाओं से संबंध रखता है। इसे जन प्रशासन, सार्वजनिक प्रशासन या सरकारी प्रशासन भी कहा जाता है।' लोक' शब्द का प्रयोग सार्वजनिकता का सूचक है तथा इस विषय को एक विशिष्टता प्रदान करता है।सरकार के तीन अंग होते है: व्यवस्थापिका, कार्यपालिका और न्यायपालिका। क्या लोक प्रशासन में सरकार के तीनों अंगो का अध्ययन किया जाना चाहिए?

इस विषय पर विद्वानों में मतभेद है जिसके कारण लोक प्रशासन की अलग-अलग परिभाषाएं की गयी है।

लोक प्रशासन की कुछ प्रमुख परिभाषायें निम्नलिखित है-

- ''लोक प्रशासन में वे सभी कार्य आ जाते है, जिनका उद्देश्य सार्वजनिक नीतियों को पूरा करना अथवा क्रियान्वित करना होता है''- एल0डी0 व्हाइट
- ''कानून को विस्तृत एवं क्रमबद्ध रूप से क्रियान्वित करने का नाम ही लोक प्रशासन है। कानून को क्रियान्वित करने की प्रत्येक क्रिया एक प्रशासकीय क्रिया है।'' - वुडरो विल्सन
- ''साधारण प्रयोग में लोक प्रशासन का अर्थ उन क्रियाओं से है जो राष्ट्रीय, प्रान्तीय तथा स्थानीय सरकारों की कार्यपालिका शाखाओं द्वारा सम्पादित की जाती है।''- एच.साइमन
- ''सामान्यतः लोक प्रशासन, प्रशासन विज्ञान का वह भाग है जो शासन से विशेषकर इसके कार्यपालिका पक्ष से सम्बन्धित है जहाँ सरकार का कार्य किया जाता है। यद्यपि विधायिका एवं न्यायपालिका से सम्बन्धित समस्यायें भी स्पष्ट रूप से प्रशासकीय समस्याऐं ही है।''- लूथर गुलिक

उपर्युक्त परिभाषाओं के अवलोकन से स्पष्ट है कि लोक प्रशासन शब्द का प्रयोग संकुचित तथा व्यापक दोनों सन्दर्भों में किया जाता है। संकुचित संदर्भ में, इसका प्रयोग केवल कार्यपालिका द्वारा किये जाने वाले कार्यों के संदर्भ में किया जाता है। व्यापक संदर्भ में, लोक प्रशासन को सरकार अर्थात व्यवस्थापिका, कार्यपालिका तथा न्यायपालिका के कार्यों के समग्र अध्ययन से जोड़ा गया है। मोटे तौर पर एल0डी0 व्हाइट के इस कथन से सहमति व्यक्त की जा सकती है कि ''लोक प्रशासन में वे सभी कार्य आ जाते है जिनका उददेश्य लोक नीति को पूरा करना अथवा क्रियान्वित करना होता है।''

1.2.2 लोक प्रशासन की प्रमुख विशेषताएँ

लोक प्रशासन का अर्थ एवं इसकी विभिन्न परिभाषाओं को जानने के उपरान्त आप इसकी प्रमुख विशेषताओं को निम्नलिखित रूपों में रेखांकित कर सकते हैं-

1. लोक प्रशासन, प्रशासन का वह भाग है जिसका सम्बन्ध लोकनीतियों को कार्यरूप में परिणत करने से है।
2. यह सार्वजनिक हित के लिए व्यक्ति तथा उसके साधनों का संगठित प्रयास है।
3. इसके अंतर्गत व्यवस्थापिका, कार्यपालिका एवं न्यायपालिका तीनों शाखायें और उनके परस्पर संबंध आते हैं, किन्तु औपचारिक रूप से यह सरकारी अधिकारी-तंत्र पर ही विशेष रूप से केन्द्रित होता है।
4. आधुनिक काल में लोकनीति के निर्धारण में भी यह महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।
5. इसका उददेश्य निश्चित नियमों के अनुसार सरकारी कार्यों का निर्देशन तथा संचालन है।

6. यह किसी विशेष उद्देश्य की पूर्ति के लिए किया जाने वाला कार्य है।
7. प्रशासन करने वाले व्यक्ति के पास अधिकार का होना आवश्यक है। इसी के आधार पर वह दूसरों से किसी कार्य में सहयोग प्राप्त करता है।
8. इसमें एक से अधिक व्यक्तियों के सहयोग से कार्य किया जाता है। एक व्यक्ति द्वारा किये गये कार्य को लोक प्रशासन की संज्ञा प्रदान नहीं की जा सकती है।
9. यह निजी प्रशासन से कई दृष्टियों में भिन्न है।
10. समाज को सुविधायें प्रदान करने की प्रक्रिया में यह निजी समूहों और व्यक्तियों से निकट संबंध रखता है।

अभ्यास प्रश्न- 1

व्यापक दोनों सन्दर्भों में किया जाता है। संकुचित संदर्भ में, इसका प्रयोग केवल कार्यपालिका द्वारा किये जाने वाले कार्यों के संदर्भ में किया जाता है। व्यापक संदर्भ में, लोक प्रशासन को सरकार अर्थात व्यवस्थापिका, कार्यपालिका तथा न्यायपालिका के कार्यों के समग्र अध्ययन से जोड़ा गया है। मोटे तौर पर एल0डी0 व्हाइट के इस कथन से सहमति व्यक्त की जा सकती है कि ''लोक प्रशासन में वे सभी कार्य आ जाते है जिनका उददेश्य लोक नीति को पूरा करना अथवा क्रियान्वित करना होता है।''

1.2.2 लोक प्रशासन की प्रमुख विशेषताएँ

लोक प्रशासन का अर्थ एवं इसकी विभिन्न परिभाषाओं को जानने के उपरान्त आप इसकी प्रमुख विशेषताओं को निम्नलिखित रूपों में रेखांकित कर सकते हैं-

1. लोक प्रशासन, प्रशासन का वह भाग है जिसका सम्बन्ध लोकनीतियों को कार्यरूप में परिणत करने से है।
2. यह सार्वजनिक हित के लिए व्यक्ति तथा उसके साधनों का संगठित प्रयास है।
3. इसके अंतर्गत व्यवस्थापिका, कार्यपालिका एवं न्यायपालिका तीनों शाखायें और उनके परस्पर संबंध आते हैं, किन्तु औपचारिक रूप से यह सरकारी अधिकारी-तंत्र पर ही विशेष रूप से केन्द्रित होता है।
4. आधुनिक काल में लोकनीति के निर्धारण में भी यह महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।
5. इसका उददेश्य निश्चित नियमों के अनुसार सरकारी कार्यों का निर्देशन तथा संचालन है।

6. यह किसी विशेष उद्देश्य की पूर्ति के लिए किया जाने वाला कार्य है।
7. प्रशासन करने वाले व्यक्ति के पास अधिकार का होना आवश्यक है। इसी के आधार पर वह दूसरों से किसी कार्य में सहयोग प्राप्त करता है।
8. इसमें एक से अधिक व्यक्तियों के सहयोग से कार्य किया जाता है। एक व्यक्ति द्वारा किये गये कार्य को लोक प्रशासन की संज्ञा प्रदान नहीं की जा सकती है।
9. यह निजी प्रशासन से कई दृष्टियों में भिन्न है।
10. समाज को सुविधायें प्रदान करने की प्रक्रिया में यह निजी समूहों और व्यक्तियों से निकट संबंध रखता है।

अभ्यास प्रश्न- 1

1. प्रशासन एक सुनिश्चित उद्देश्य की पूर्ति के लिए मनुष्यों द्वारा परस्पर सहयोग का नाम है। सत्य/ असत्य
2. प्रशासन का सम्बन्ध निजी समस्याओं से है। सत्य/ असत्य
3. प्रशासन में वे सभी कार्य आ जाते हैं, जिनका उद्देश्य सार्वजनिक नीतियों को लागू करना है। सत्य/ असत्य

1.3 लोक प्रशासन की प्रकृति

अब तक आप यह समझ चुके होंगे कि लोक प्रशासन का अर्थ क्या है? अब हम इस विषय की प्रकृति पर विचार करेंगे।

लोक प्रशासन एक गतिशील विषय है जिसकी प्रकृति में निरन्तर परिवर्तन होता रहा है। इस विषय के स्वरूप पर बदलती हुई सामाजिक, आर्थिक एवं राजनैतिक परिस्थितियों एवं अन्य संबंधित सामाजिक विज्ञानों का व्यापक प्रभाव पड़ा है। सामान्यतया लोक प्रशासन की प्रकृति पर दो दृष्टियों से विचार किया जाता है- प्रथम इस दृष्टि से कि इस विषय के अंतर्गत किन क्रियाकलापों का अध्ययन किया जाना चाहिए और दूसरे इस दृष्टि से कि यह विज्ञान है या कला या दोनों का समन्वित रूप।

1.3.1 एकीकृत एवं प्रबन्धकीय दृष्टिकोण

लोक प्रशासन की परिभाषा की तरह इसकी प्रकृति के विश्लेषण के सम्बन्ध में भी विद्वान एकमत नहीं है। इस सम्बन्ध में मुख्यतया दो दृष्टिकोण है जिन्हें एकीकृत तथा प्रबन्धकीय दृष्टिकोण कहा जा सकता है।

एकीकृत दृष्टिकोण के अनुसार किसी निश्चित लक्ष्य की प्राप्ति के लिए सम्पादित की जाने वाली क्रियाओं का समग्रीकरण का योग ही प्रशासन है चाहे वे क्रियायें लेखन,प्रबन्धन या सफाई सम्बन्धी ही क्यों न हो। इस प्रकार उपक्रम अथवा उद्यम विशेष में कार्यरत संदेशवाहक, फोरमैन, चौकीदार, सफाई कर्मचारी तथा शासन के सचिवो एवं प्रबन्धको तक के कार्य को प्रशासन का भाग माना गया

है। इस दृष्टिकोण में उपक्रम में कार्यरत छोटे कर्मचारियों से लेकर बड़े अधिकारियों तक के कार्यों को प्रशासन का भाग माना जाता है। व्हाइट इसी दृष्टिकोण के समर्थक है।

रूप।

1.3.1 एकीकृत एवं प्रबन्धकीय दृष्टिकोण

लोक प्रशासन की परिभाषा की तरह इसकी प्रकृति के विश्लेषण के सम्बन्ध में भी विद्वान एकमत नहीं है। इस सम्बन्ध में मुख्यतया दो दृष्टिकोण है जिन्हें एकीकृत तथा प्रबन्धकीय दृष्टिकोण कहा जा सकता है।

एकीकृत दृष्टिकोण के अनुसार किसी निश्चित लक्ष्य की प्राप्ति के लिए सम्पादित की जाने वाली क्रियाओं का समग्रीकरण का योग ही प्रशासन है चाहे वे क्रियायें लेखन,प्रबन्धन या सफाई सम्बन्धी ही क्यों न हो। इस प्रकार उपक्रम अथवा उद्यम विशेष में कार्यरत संदेशवाहक, फोरमैन, चौकीदार, सफाई कर्मचारी तथा शासन के सचिवो एवं प्रबन्धको तक के कार्य को प्रशासन का भाग माना गया

है। इस दृष्टिकोण में उपक्रम में कार्यरत छोटे कर्मचारियों से लेकर बड़े अधिकारियों तक के कार्यों को प्रशासन का भाग माना जाता है। व्हाइट इसी दृष्टिकोण के समर्थक है।

दूसरी तरफ प्रबन्धकीय दृष्टिकोण केवल उन्हीं लोगों के कार्यों को प्रशासन मानता है, जो किसी उपक्रम सम्बन्धी केवल प्रबन्धकीय कार्यों का सम्पादन करते हैं। प्रबन्धकीय कार्य का लक्ष्य उपक्रम के विभिन्न क्रियाओं का एकीकरण, नियन्त्रण तथा समन्वय करना होता है। साइमन, स्मिथबर्ग तथा थॉमसन इस दृष्टिकोण के समर्थक हैं। उनके मतानुसार ''प्रशासन शब्द अपने संकुचित अर्थों में आचरण के उन आदर्शों को प्रकट करने के लिए प्रयोग किया जाता है, जो अनेक प्रकार के सहयोगी समूहों में समान रूप से पाये जाते हैं।'' लूथर गुलिक के अनुसार, ''प्रशासन का सम्बन्ध कार्य पूरा किये जाने और निर्धारित उददेश्यों की पूर्ति से है।''

उपर्युक्त दोनों दृष्टिकोणों में मौलिक अंतर है। एकीकृत दृष्टिकोण को स्वीकार करने पर हमें किसी उद्यम में लगे सभी कर्मचारियों के कार्यों को प्रशासन के अंतर्गत मानना पड़ेगा। इसके अतिरिक्त, विषय वस्तु के अंतर के कारण एक क्षेत्र का प्रशासन दूसरे क्षेत्र के प्रशासन से भिन्न होगा। जैसे- शिक्षा के क्षेत्र का प्रशासन लोक निर्माण के प्रशासन से भिन्न होगा। दूसरी तरफ प्रबन्धकीय दृष्टिकोण को स्वीकार करने पर प्रशासन प्रबन्धन की तकनीक बनकर रह जाती है। प्रबन्धक का कार्य संगठन करना तथा उददेश्य की प्राप्ति हेतु जन तथा साधन सामग्री का प्रयोग करना है। यह दृष्टिकोण प्रशासन को अपने आप में भिन्न तथा पृथक क्रिया मानता है तथा प्रत्येक क्षेत्र के प्रशासन को एक ही दृष्टि से देखता है।

अब आपके मन में यह दुविधा उत्पन्न हो गयी होगी कि उपर्युक्त दोनों दृष्टिकोणे में किसे उपयुक्त माना जाय? वास्तव में उपर्युक्त दोनों दृष्टिकोणों में किसी की भी पूर्णतः उपेक्षा नहीं की जा सकती। सच तो यह है कि प्रशासन का ठीक अर्थ उस प्रसंग पर निर्भर करता है जिस संदर्भ में शब्द का प्रयोग किया जाता है। अध्ययन विषय के रूप में प्रशासन उन सरकारी प्रयत्नों के प्रत्येक पहलू की परीक्षा करता है, जो कानून तथा लोक नीति को क्रियान्वित करने हेतु सम्पादित किये जाते हैं। एक प्रक्रिया के रूप में इससे वे सभी प्रयत्न आ जाते है जो किसी संस्थान में अधिकार-क्षेत्र प्राप्त करने से लेकर अंतिम ईंट रखने तक उठाये जाते हैं तथा व्यवसाय के रूप में यह किसी भी सार्वजनिक संस्थान के क्रियाकलापों का संगठन तथा संचालन करता है।

1.3.2 लोक प्रशासन विज्ञान है या कला

लोक प्रशासन की प्रकृति को पूर्ण रूप से समझने के लिए आपको यह भी जानना होगा कि यह विषय कला है अथवा विज्ञान अथवा दोनों का समन्वित रूप।एक प्रक्रिया के रूप में लोक प्रशासन को सामान्तया एक कला समझा जाता है। कला का अपना कौशल होता है और वह व्यवस्थित ढंग से व्यवहार में लायी जाती है। प्रशासन एक विशेष क्रिया है जिसमें एक विशेष ज्ञान तथा तकनीकी कौशल की आवश्यकता होती है। अन्य कलाओं की भाँति प्रशासन को भी अभ्यास से सीखा जा सकता है। वर्तमान में प्रशासनिक दक्षता के लिए ' निपुण' तथा ' विशिष्ट' प्रकार के दक्ष लोगों

की आवश्यकता सरकार के विभिन्न आयामो में महसूस की जा रही है। प्रशासनिक कला में निपुणता हासिल करने के लिए व्यक्ति में धैर्य, नियन्त्रण, हस्तान्तरण, आदेश की एकता आदि गुणों का होना आवश्यक है। इन गुणों के अभाव में प्रशासक अपने कर्तव्यों का सफलतापूर्वक निष्पादन नहीं कर सकता।

लूथर गुलिक के अनुसार ''एक अच्छे प्रशासक को 'पोस्डकार्ब' तकनीकों में पारंगत होना चाहिए।'' जो विचारक प्रशासन को कला नहीं मानते, उनका तर्क है कि प्रशासन की सफलता और असफलता मानवीय वातावरण एवं परिस्थितियों पर निर्भर करती है। एक स्थान पर एक प्रशासक उन्ही तकनीको से सफल हो जाता है और दूसरे स्थान पर असफल हो जाता है। यह सच है कि सामाजिक और मानवीय पर्यावरण प्रशासन की कार्यकुशलता को उसी प्रकार प्रभावित करते हैं जिस प्रकार खेल का मैदान बदलने पर नया वातावरण खिलाडी के कौशल को प्रभावित करता है। किन्तु

करता है, जो कानून तथा लोक नीति को क्रियान्वित करने हेतु सम्पादित किये जाते हैं। एक प्रक्रिया के रूप में इससे वे सभी प्रयत्न आ जाते है जो किसी संस्थान में अधिकार-क्षेत्र प्राप्त करने से लेकर अंतिम ईंट रखने तक उठाये जाते हैं तथा व्यवसाय के रूप में यह किसी भी सार्वजनिक संस्थान के क्रियाकलापों का संगठन तथा संचालन करता है।

1.3.2 लोक प्रशासन विज्ञान है या कला

लोक प्रशासन की प्रकृति को पूर्ण रूप से समझने के लिए आपको यह भी जानना होगा कि यह विषय कला है अथवा विज्ञान अथवा दोनों का समन्वित रूप।एक प्रक्रिया के रूप में लोक प्रशासन को सामान्तया एक कला समझा जाता है। कला का अपना कौशल होता है और वह व्यवस्थित ढंग से व्यवहार में लायी जाती है। प्रशासन एक विशेष क्रिया है जिसमें एक विशेष ज्ञान तथा तकनीकी कौशल की आवश्यकता होती है। अन्य कलाओं की भाँति प्रशासन को भी अभ्यास से सीखा जा सकता है। वर्तमान में प्रशासनिक दक्षता के लिए ' निपुण' तथा ' विशिष्ट' प्रकार के दक्ष लोगों

की आवश्यकता सरकार के विभिन्न आयामो में महसूस की जा रही है। प्रशासनिक कला में निपुणता हासिल करने के लिए व्यक्ति में धैर्य, नियन्त्रण, हस्तान्तरण, आदेश की एकता आदि गुणों का होना आवश्यक है। इन गुणों के अभाव में प्रशासक अपने कर्तव्यों का सफलतापूर्वक निष्पादन नहीं कर सकता।

लूथर गुलिक के अनुसार ''एक अच्छे प्रशासक को 'पोस्डकार्ब' तकनीकों में पारंगत होना चाहिए।'' जो विचारक प्रशासन को कला नहीं मानते, उनका तर्क है कि प्रशासन की सफलता और असफलता मानवीय वातावरण एवं परिस्थितियों पर निर्भर करती है। एक स्थान पर एक प्रशासक उन्ही तकनीको से सफल हो जाता है और दूसरे स्थान पर असफल हो जाता है। यह सच है कि सामाजिक और मानवीय पर्यावरण प्रशासन की कार्यकुशलता को उसी प्रकार प्रभावित करते हैं जिस प्रकार खेल का मैदान बदलने पर नया वातावरण खिलाडी के कौशल को प्रभावित करता है। किन्तु प्रशासन एक कौशल है। प्रत्येक व्यक्ति इस कौशल को हासिल नहीं कर सकता। प्रशिक्षण और अभ्यास के बाद ही इस उच्चतम कला को ग्रहण किया जा सकता है।अतः यह कहना उचित हो गा कि लोक प्रशासन एक कला है।

अब प्रश्न यह उठता है कि इस विषय को विज्ञान का दर्जा दिया जाय या नहीं। यह एक विवादित प्रश्न है तथा इसका उत्तर इस बात पर निर्भर करता है कि हम विज्ञान शब्द का प्रयोग किस अर्थ में करते हैं। साधारणतः विज्ञान शब्द का प्रयोग दो अर्थों में किया जाता है- व्यापक और संकीर्ण।

व्यापक अर्थ में इस शब्द का प्रयोग 'अनुभव एवं पर्यवेक्षण से प्राप्त क्रमबद्ध ज्ञान' के रूप में किया जाता है। इसी अर्थ में हम सामाजिक विज्ञानों को जिनमें राजनीतिशास्त्र,अर्थशास्त्र, समाजशास्त्र,आदि शामिल है, विज्ञान की संज्ञा प्रदान करते है। दूसरे अर्थ में, विज्ञान ज्ञान का वह निकाय है जो ऐसे परिशुद्ध सामान्य सिद्धान्तों की स्थापना करता है जिनके आधार पर एक बड़ी सीमा तक परिणामों के सम्बन्ध में पूर्वकथन किया जा सकता है। इस प्रकार के विज्ञानों को ' शुद्ध विज्ञान' के नाम से पुकारा जाता है, जैसे-भौतिकी, रसायनशास्त्र और गणित। सामान्यता लोक प्रशासन को एक 'सामाजिक विज्ञान' माना जाता है, यद्यपि इस विषय पर सभी विद्वान एकमत नहीं है। विद्वानों का एक ऐसा वर्ग भी है जो इस विषय को विज्ञान नहीं मानते।ऐसे विद्वानों द्वारा निम्नलिखित तर्क प्रस्तुत किये जाते हैं- मानवीय क्रियाओं से सम्बन्धित हो ने के कारण लोक प्रशासन के नियम कम विश्वसनीय होते है। ये स्थान और काल के अनुसार बदलते रहते हैं।

1. लोक प्रशासन के क्षेत्र में सर्वसम्मत एवं सार्वभौमिक सिद्धान्तों का अभाव है।
2. विज्ञान की भांति लोक प्रशासन के पास कोई ऐसी प्रयोगशाला नहीं है जहॉं पूर्व अर्जित तथ्यों की सत्यता स्थापित की जा सके।
3. विज्ञान में नैतिक मूल्यों एवं आदर्शों का कोई स्थान नहीं होता जबकि लोक प्रशासन के सिद्धान्त निरन्तर प्रशासकीय क्रिया की तथ्यपरक एवं आदर्शपरक धारणाओं अर्थात 'क्या है' और 'क्या हो ना चाहिए' के बीच झूलते रहते हैं।

4. इसमें पूर्व कथनीयता अर्थात भविष्यवाणी करने की क्षमता का अभाव है।
5. प्रशासकीय आचरण न तो पूर्णतः विवेकनिष्ठ होता है और न ऐसा होना सम्भव ही है। ऐसी स्थिति में उसके विज्ञान हो ने का प्रश्न ही नहीं उठता।

इसमें कोई दो राय नहीं कि संकीर्ण अर्थ में लोक प्रशासन को विज्ञान की संज्ञा प्रदान नहीं की जा सकती, परन्तु विषय से सम्बद्ध अधिकांश विद्वानों में इस बात पर मतैक्य पाया जाता है कि व्यापक अर्थ में लोक प्रशासन के विज्ञान हो ने के दावे को अस्वीकार नहीं किया जा सकता।

लोक प्रशासन के विज्ञान होने के समर्थन में निम्नलिखित तर्क प्रस्तुत किये जाते हैं-

1. एक विषय के रूप में लोक प्रशासन, प्रशासन से सम्बन्धित ज्ञान का क्रमबद्ध अध्ययन

भी है जो इस विषय को विज्ञान नहीं मानते।ऐसे विद्वानों द्वारा निम्नलिखित तर्क प्रस्तुत किये जाते हैं- मानवीय क्रियाओं से सम्बन्धित हो ने के कारण लोक प्रशासन के नियम कम विश्वसनीय होते है। ये स्थान और काल के अनुसार बदलते रहते हैं।

1. लोक प्रशासन के क्षेत्र में सर्वसम्मत एवं सार्वभौमिक सिद्धान्तों का अभाव है।
2. विज्ञान की भांति लोक प्रशासन के पास कोई ऐसी प्रयोगशाला नहीं है जहॉं पूर्व अर्जित तथ्यों की सत्यता स्थापित की जा सके।
3. विज्ञान में नैतिक मूल्यों एवं आदर्शों का कोई स्थान नहीं होता जबकि लोक प्रशासन के सिद्धान्त निरन्तर प्रशासकीय क्रिया की तथ्यपरक एवं आदर्शपरक धारणाओं अर्थात 'क्या है' और 'क्या हो ना चाहिए' के बीच झूलते रहते हैं।

4. इसमें पूर्व कथनीयता अर्थात भविष्यवाणी करने की क्षमता का अभाव है।
5. प्रशासकीय आचरण न तो पूर्णतः विवेकनिष्ठ होता है और न ऐसा होना सम्भव ही है। ऐसी स्थिति में उसके विज्ञान हो ने का प्रश्न ही नहीं उठता।

इसमें कोई दो राय नहीं कि संकीर्ण अर्थ में लोक प्रशासन को विज्ञान की संज्ञा प्रदान नहीं की जा सकती, परन्तु विषय से सम्बद्ध अधिकांश विद्वानों में इस बात पर मतैक्य पाया जाता है कि व्यापक अर्थ में लोक प्रशासन के विज्ञान हो ने के दावे को अस्वीकार नहीं किया जा सकता।

लोक प्रशासन के विज्ञान होने के समर्थन में निम्नलिखित तर्क प्रस्तुत किये जाते हैं-

1. एक विषय के रूप में लोक प्रशासन, प्रशासन से सम्बन्धित ज्ञान का क्रमबद्ध अध्ययन करता है।
2. इस विषय के अध्ययन के लिए लगभग सुनिश्चित क्षेत्र निर्धारित कर लिया गया है तथा इस आधार पर इसे अन्य शास्त्रों से पृथक किया जा सकता है।
3. गत वर्षों में प्रशासन के क्षेत्र में जो पर्यवेक्षण, परीक्षण तथा अनुसंधान हुए हैं, उनके परिणामस्वरूप अनेक सुनिश्चित अवधारणायें तथा परिकल्पनायें विकसित हुई है।
4. भारी संख्या में ऐसे तथ्यों का संग्रह कर लिया गया है, जिन पर वैज्ञानिक अध्ययन की पद्धतियों का प्रयोग किया जा रहा है।
5. अन्य सामाजिक विज्ञानों की भांति लोक प्रशासन में भी कुछ ऐसे सामान्य सिद्धान्त विकसित किये जा चुके हैं, जो प्रभावी शासन की स्थापना के लिए पथ प्रदर्शक का काम कर सकते है।
6. यह विषय तथ्यों एवं घटनाओं की वैज्ञानिक विवेचना करता है और इसके माध्यम से प्रशासक अनुमान लगा सकते है कि इन घटनाओं के क्या परिणाम होंगे। अर्थात इसमें भविष्यवाणी करने की क्षमता है।
7. इस विषय से सम्बन्धित घटनाओं का वैज्ञानिक ढंग से अध्ययन करने के उपरान्त इस प्रकार के कारण खोजे जा सकते हैं, जिनके आधार पर यह कहा जा सकता है कि समान कारणों का काफी बड़ी सीमा तक समान प्रभाव होता है। उक्त संदर्भ में सच तो यह है कि प्रत्येक ज्ञान के दो पहलू होते हैं- एक कला काऔर दूसरा विज्ञान का। उदाहरण के लिए, फोटोग्राफी अथवा औषधि विज्ञान कला भी है और विज्ञान भी। इसी प्रकार लोक प्रशासन विज्ञान और कला दोनों का समन्वित रूप है। चार्ल्स बेयर्ड के अनुसार, लोक प्रशासन उतना ही विज्ञान है जितना कि अर्थशास्त्र। उनके मत में जिस प्रकार प्राकृतिक विज्ञानों के क्षेत्र में अनुसंधान, वैज्ञानिक समितियों तथा वैज्ञानिकों द्वारा ज्ञान एवं परिकल्पनाओं के आदान प्रदान ने ज्ञान की परिशुद्धता में वृद्धि की है, उसी प्रकार हम यह आशा कर सकते है कि प्रशासन के क्षेत्र में भी अनुसंधान, प्रशासकीय समितियो तथा प्रशासकों के पारस्परिक आदान प्रदान भी ज्ञान की परिशुद्धता में वृद्धि करने में सहायक सिद्ध हो सकते हैं।यहॉं पर

ध्यान देने योग्य बात यह है कि लोक प्रशासन केवल तथ्यों अर्थात 'क्या है' का ही अध्ययन नहीं करता, वरन आदर्शो अर्थात 'क्या हो ना चाहिए' का भी अध्ययन करता है। इस प्रकार अन्य सामाजिक विज्ञानों की भॉंति यह तथ्यपरक एवं आदर्शपरक दोनों प्रकार का विज्ञान हो सकता है। अपने पारंपरिक रूप में यह एक तथ्यपरक विज्ञान ही बना रहा है। परन्तु अर्वाचीन विचारकों ने इस दृष्टिकोण को स्वीकार नहीं किया। उनका कहना है कि प्रशासन का ध्येय श्रेष्ठ प्रशासन है। इस धारणा को स्वीकार कर लेने के बाद यह प्रश्न सहज ही उठता है कि श्रेष्ठ प्रशासन की कसौटी क्या है? स्पष्टतः इन प्रश्नों में प्रयोजनो और मूल्यों की समस्या निहित है और यह प्रश्न लोक प्रशासन को आदर्शमूलक अध्ययन का स्वरूप प्रदान करता है।

निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि लोक प्रशासन एक प्रगतिशील विज्ञान है जिसके निष्कर्ष

कर सकते है।

6. यह विषय तथ्यों एवं घटनाओं की वैज्ञानिक विवेचना करता है और इसके माध्यम से प्रशासक अनुमान लगा सकते है कि इन घटनाओं के क्या परिणाम होंगे। अर्थात इसमें भविष्यवाणी करने की क्षमता है।
7. इस विषय से सम्बन्धित घटनाओं का वैज्ञानिक ढंग से अध्ययन करने के उपरान्त इस प्रकार के कारण खोजे जा सकते हैं, जिनके आधार पर यह कहा जा सकता है कि समान कारणों का काफी बड़ी सीमा तक समान प्रभाव होता है। उक्त संदर्भ में सच तो यह है कि प्रत्येक ज्ञान के दो पहलू होते हैं- एक कला काऔर दूसरा विज्ञान का। उदाहरण के लिए, फोटोग्राफी अथवा औषधि विज्ञान कला भी है और विज्ञान भी। इसी प्रकार लोक प्रशासन विज्ञान और कला दोनों का समन्वित रूप है। चार्ल्स बेयर्ड के अनुसार, लोक प्रशासन उतना ही विज्ञान है जितना कि अर्थशास्त्र। उनके मत में जिस प्रकार प्राकृतिक विज्ञानों के क्षेत्र में अनुसंधान, वैज्ञानिक समितियों तथा वैज्ञानिकों द्वारा ज्ञान एवं परिकल्पनाओं के आदान प्रदान ने ज्ञान की परिशुद्धता में वृद्धि की है, उसी प्रकार हम यह आशा कर सकते है कि प्रशासन के क्षेत्र में भी अनुसंधान, प्रशासकीय समितियो तथा प्रशासकों के पारस्परिक आदान प्रदान भी ज्ञान की परिशुद्धता में वृद्धि करने में सहायक सिद्ध हो सकते हैं।यहाँ पर

ध्यान देने योग्य बात यह है कि लोक प्रशासन केवल तथ्यों अर्थात 'क्या है' का ही अध्ययन नहीं करता, वरन आदर्शो अर्थात 'क्या हो ना चाहिए' का भी अध्ययन करता है। इस प्रकार अन्य सामाजिक विज्ञानों की भाँति यह तथ्यपरक एवं आदर्शपरक दोनों प्रकार का विज्ञान हो सकता है। अपने पारंपरिक रूप में यह एक तथ्यपरक विज्ञान ही बना रहा है। परन्तु अर्वाचीन विचारकों ने इस दृष्टिकोण को स्वीकार नहीं किया। उनका कहना है कि प्रशासन का ध्येय श्रेष्ठ प्रशासन है। इस धारणा को स्वीकार कर लेने के बाद यह प्रश्न सहज ही उठता है कि श्रेष्ठ प्रशासन की कसौटी क्या है? स्पष्टतः इन प्रश्नों में प्रयोजनो और मूल्यों की समस्या निहित है और यह प्रश्न लोक प्रशासन को आदर्शमूलक अध्ययन का स्वरूप प्रदान करता है।

निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि लोक प्रशासन एक प्रगतिशील विज्ञान है जिसके निष्कर्ष अथवा सिद्धान्त भी नये अनुसंधान तथा नये अनुभव के अनुसार अपने आप को भी बदल डालते है। यह सही है कि समय समय पर प्रतिपादित किये जाने बाले विभिन्न मतों से लोक प्रशासन की समस्या के बारे में सही समझ कायम करने में सहायता मिली है तथापि उनके सम्बन्ध में पूर्णता का दावा नहीं किया जा सकता है।

अभ्यास प्रश्न- 2

1. एकीकृत द्रष्टिकोण में लोक प्रशासन के अंतर्गत किन कार्यों को सम्मिलित किया जाता है?
2. प्रबंधकीय दृष्टिकोण केवल उन्ही लोगों के कार्यों को प्रशासन मानता है जो किसी उपक्रम संबंधी केवल प्रबंधकीय कार्यों का संपादन करते हैं। सत्य/असत्य
3. एकीकृत द्रष्टिकोण प्रत्येक क्षेत्र के प्रशासन को एक ही दृष्टि से देखता है। सत्य/असत्य
4. एक अच्छे प्रशासक को पोस्डकॉब तकनीकों में पारंगत होना चाहिए। यह किसका कथन है?
5. लोक प्रशासन के विज्ञान होने के पक्ष में दो तर्क प्रस्तुत कीजिए।

1.4 लोक प्रशासन का विषय क्षेत्र

लोक प्रशासन की प्रकृति को समझने के उपरान्त आप यह जानने को उत्सुक होंगे कि इस विषय के अंतर्गत किन तथ्यों तथा समस्याओं का अध्ययन किया जाता है अर्थात लोक प्रशासन का अध्ययन क्षेत्र क्या है? जिस प्रकार आपने इस विषय की परिभाषा तथा इसके स्वरूप के सम्बन्ध में विद्वानों में तीव्र मतभेद पाया, इसी प्रकार का मतभेद विषय के अध्ययन क्षेत्र के सम्बन्ध में भी पाया जाता है। वास्तव में, परिवर्तन के इस युग में लोक प्रशासन जैसे गतिशील विषय का क्षेत्र निर्धारित करना अत्यन्त मुश्किल कार्य है। मोटे तौर पर इस सम्बन्ध में निम्न लिखित दृष्टिकोण प्रचलित है-

1.4.1संकुचित दृष्टिकोण

इस दृष्टिकोण के अनुसार लोक प्रशासन का सम्बन्ध शासन की कार्यपालिका शाखा से है, इसलिए इसके अंतर्गत केवल कार्यपालिका से सम्बन्धित कार्यों का अध्ययन किया जाना चाहिए।

हरवर्ट साइमन तथा लूथर गुलिक जैसे विद्वान इस दृष्टिकोण के समर्थक है। इस दृष्टिकोण को स्वीकार करने पर लोक प्रशासन के क्षेत्र के अंतर्गत निम्नलिखित बातें सम्मिलित की जा सकती हैं- कार्यरत कार्यपालिका अर्थात असैनिक कार्यपालिका का अध्ययन, सामान्य प्रशासन का अध्ययन, संगठन सम्बन्धी समस्याओं का अध्ययन, कार्मिक प्रशासन का अध्ययन, वित्तीय प्रशासन का अध्ययन

है?

5. लोक प्रशासन के विज्ञान होने के पक्ष में दो तर्क प्रस्तुत कीजिए।

1.4 लोक प्रशासन का विषय क्षेत्र

लोक प्रशासन की प्रकृति को समझने के उपरान्त आप यह जानने को उत्सुक होंगे कि इस विषय के अंतर्गत किन तथ्यों तथा समस्याओं का अध्ययन किया जाता है अर्थात लोक प्रशासन का अध्ययन क्षेत्र क्या है? जिस प्रकार आपने इस विषय की परिभाषा तथा इसके स्वरूप के सम्बन्ध में विद्वानों में तीव्र मतभेद पाया, इसी प्रकार का मतभेद विषय के अध्ययन क्षेत्र के सम्बन्ध में भी पाया जाता है। वास्तव में, परिवर्तन के इस युग में लोक प्रशासन जैसे गतिशील विषय का क्षेत्र निर्धारित करना अत्यन्त मुश्किल कार्य है। मोटे तौर पर इस सम्बन्ध में निम्न लिखित दृष्टिकोण प्रचलित है-

1.4.1संकुचित दृष्टिकोण

इस दृष्टिकोण के अनुसार लोक प्रशासन का सम्बन्ध शासन की कार्यपालिका शाखा से है, इसलिए इसके अंतर्गत केवल कार्यपालिका से सम्बन्धित कार्यों का अध्ययन किया जाना चाहिए।

हरवर्ट साइमन तथा लूथर गुलिक जैसे विद्वान इस दृष्टिकोण के समर्थक है। इस दृष्टिकोण को स्वीकार करने पर लोक प्रशासन के क्षेत्र के अंतर्गत निम्नलिखित बातें सम्मिलित की जा सकती हैं- कार्यरत कार्यपालिका अर्थात असैनिक कार्यपालिका का अध्ययन, सामान्य प्रशासन का अध्ययन, संगठन सम्बन्धी समस्याओं का अध्ययन, कार्मिक प्रशासन का अध्ययन, वित्तीय प्रशासन का अध्ययन और प्रशासनिक उत्तरदायित्व एवं उपलब्धियों का अध्ययन।

1.4.2 व्यापक दृष्टिकोण

यह दृष्टिकोण लोक प्रशासन के क्षेत्र के अंतर्गत उन सभी क्रियाओं के अध्ययन पर बल देता है जिनका उददेश्य लोक नीति को पूरा करना अथवा क्रियान्वित करना होता है। दूसरे शब्दों में इस दृष्टिकोण के अनुसार लोक प्रशासन के अंतर्गत सरकार के तीनो अंगो- कार्यपालिका, व्यवस्थापिका एवं न्यायपालिका से सम्बन्धित कार्यों का अध्ययन किया जाना चाहिए। निग्रो, व्हाइट, मार्क्स, विलोबी आदि विद्वान इस दृष्टिकोण के समर्थक है। इस दृष्टिकोण को स्वीकार करने पर लोक प्रशासन के विषय क्षेत्र की व्याख्या में निम्नलिखित बातें दृष्टिगोचर होती है- 1. समाज के सहयोगात्मक प्रयास का अध्ययन, 2. सरकार के तीनों अंगो का अध्ययन और 3. लोक नीति के निर्माण एवं क्रियान्वयन का अध्ययन और 4. प्रशासन के सम्पर्क में आने वाले निजी संगठनों एवं व्यक्तियों के व्यवहार का अध्ययन।

1.4.3 पोस्डकार्ब दृष्टिकोण

इस दृष्टिकोण के प्रमुख प्रणेता लूथर गुलिक है। यद्यपि गुलिक से पहले उर्विक, हेनरी फेयोल इत्यादि विद्वानो ने भी पोस्डकॉब दृष्टिकोण अपनाया था, किन्तु इन विचारो को सुव्यवस्थित ढंग से प्रस्तुत करने का श्रेय गुलिक को जाता है। पोस्डकॉब शब्द अंग्रेजी के सात शब्दों के प्रथम अक्षरों से मिलकर बना है। ये शब्द निम्नवत है- 1. Planing- योजना बनाना, 2. Organization- संगठन बनाना, 3. Staffing- कर्मचारियों की व्यवस्था करना, 4. Directing- निर्देशन करना, 5.Coordinaton- समन्वय करना, 6. Reporting- रपट देना और 7. Budgeting- बजट तैयार करना ।

1.4.4 आदर्शवादी दृष्टिकोण

यह दृष्टिकोण इस मान्यता पर आधारित है कि लोककल्याणकारी राज्य और लोक प्रशासन में कोई अंतर नहीं है। जिस प्रकार लोक कल्याणकारी राज्य का उद्देश्य जनता का हित करना है, ठीक उसी प्रकार लोक प्रशासन का अर्थ जनता के हित में सरकार के कल्याणकारी कार्यों को मूर्त रूप प्रदान करना है। लोक प्रशासन एक व्यापक विषय है और इसके अंतर्गत जनहित में किये जाने वाले समस्त कार्यों का अध्ययन किया जाना चाहिए। उपर्युक्त दृष्टिकोण की समीक्षा करने पर आपको यह स्पष्ट हो जायेगा कि इनमें से कोई भी दृष्टिकोण पूर्ण नहीं है।

प्रथम दृष्टिकोण लोक प्रशासन को शासन की कार्यपालिका शाखा से सम्बन्धित मानता है, लेकिन यथार्थ में यह केवल कार्यपालिका शाखा का ही अध्ययन नहीं है, बल्कि इससे बहुत ज्यादा है। दूसरे

व्यापक दृष्टिकोण के मुताबिक लोक प्रशासन में सरकार के तीनों अंगों को शामिल किया गया है जिसे भी पूर्णतः उचित नहीं कहा जा सकता है। अगर इस दृष्टिकोण को माना जाय तो लोक प्रशासन अस्पष्ट विषय बनकर रह जायेगा। तीसरे दृष्टिकोण की जिसे 'पोस्डकॉर्ब' का नाम दिया जाता है इस आधार पर आलोचना की जा सकती है कि यह केवल प्रशासन की तकनीकों से सम्बन्धित है, उसके पाठ्य विषय से नहीं। इस दृष्टिकोण में यह भी कमी है कि इसमें मानवीय पहलू की उपेक्षा की गयी है। अंत में चौथा दृष्टिकोण आदर्शवादी दृष्टिकोण भी सही नहीं कहा जा सकता, क्योंकि यह लोक प्रशासन के वास्तविक क्षेत्र का विवेचन नहीं करके भविष्य में बनने वाले लोक प्रशासन के क्षेत्र का काल्पनिक वर्णन करने लगता है।

1.4.4 आदर्शवादी दृष्टिकोण

यह दृष्टिकोण इस मान्यता पर आधारित है कि लोककल्याणकारी राज्य और लोक प्रशासन में कोई अंतर नहीं है। जिस प्रकार लोक कल्याणकारी राज्य का उद्देश्य जनता का हित करना है, ठीक उसी प्रकार लोक प्रशासन का अर्थ जनता के हित में सरकार के कल्याणकारी कार्यों को मूर्त रूप प्रदान करना है। लोक प्रशासन एक व्यापक विषय है और इसके अंतर्गत जनहित में किये जाने वाले समस्त कार्यों का अध्ययन किया जाना चाहिए। उपर्युक्त दृष्टिकोण की समीक्षा करने पर आपको यह स्पष्ट हो जायेगा कि इनमें से कोई भी दृष्टिकोण पूर्ण नहीं है।

प्रथम दृष्टिकोण लोक प्रशासन को शासन की कार्यपालिका शाखा से सम्बन्धित मानता है, लेकिन यथार्थ में यह केवल कार्यपालिका शाखा का ही अध्ययन नहीं है, बल्कि इससे बहुत ज्यादा है। दूसरे

व्यापक दृष्टिकोण के मुताबिक लोक प्रशासन में सरकार के तीनों अंगों को शामिल किया गया है जिसे भी पूर्णतः उचित नहीं कहा जा सकता है। अगर इस दृष्टिकोण को माना जाय तो लोक प्रशासन अस्पष्ट विषय बनकर रह जायेगा। तीसरे दृष्टिकोण की जिसे 'पोस्डकॉर्ब' का नाम दिया जाता है इस आधार पर आलोचना की जा सकती है कि यह केवल प्रशासन की तकनीकों से सम्बन्धित है, उसके पाठ्य विषय से नहीं। इस दृष्टिकोण में यह भी कमी है कि इसमें मानवीय पहलू की उपेक्षा की गयी है। अंत में चौथा दृष्टिकोण आदर्शवादी दृष्टिकोण भी सही नहीं कहा जा सकता, क्योंकि यह लोक प्रशासन के वास्तविक क्षेत्र का विवेचन नहीं करके भविष्य में बनने वाले लोक प्रशासन के क्षेत्र का काल्पनिक वर्णन करने लगता है।

स्पष्टतः उपर्युक्त दृष्टिकोणों में किसी एक को पूर्णतः सही मानना ठीक नहीं है, परन्तु सत्यता का अंश सभी में है, यानि लोक प्रशासन सरकार के तीनों अंगों से सम्बन्धित है, परन्तु कार्यपालिका से ज्यादा जुडा हुआ है। इसमें 'पोस्डकॉर्ब' की प्रक्रिया अपनायी जाती है और इसका भावी स्वरूप विस्तृत और व्यापक है।

इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि लोक प्रशासन में निम्नलिखित विषय क्षेत्रों का अध्ययन किया जाना चाहिए-

- सार्वजनिक कार्मिक प्रशासन का अध्ययन,
- सार्वजनिक वित्तीय प्रशासन का अध्ययन,
- प्रशासनिक अथवा संगठनात्मक सिद्धान्तों का अध्ययन,
- तुलनात्मक लोक प्रशासन का अध्ययन,

अभ्यास प्रश्न- 3

1. लोक प्रशासन के अध्ययन के चार विषय क्षेत्रों को निर्धारित कीजिए।

1.5 लोक प्रशासन का महत्व

किसी भी विषय के अध्ययनकर्ता सम्बन्धित विषय के अध्ययन में दिलचस्पी तभी लेते है जबकि वह विषय उन्हें महत्वपूर्ण एवं उपयोगी प्रतीत होता है। लोक प्रशासन के इस विषय का अध्ययन करते समय आप भी विषय के महत्व को जानने को इच्छुक होंगे।राजनीतिक व्यवस्था का स्वरूप किसी भी प्रकार का हो, लोक प्रशासन एक अनिवार्यता है। आधुनिक युग में इसका महत्व इतना अधिक बढ गया है कि यह प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से मानव जीवन के प्रत्येक क्षेत्र को प्रभावित करता है। यही कारण है कि सामाजिक विज्ञानों में लोक प्रशासन ने अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थिति प्राप्त कर ली है और प्रशासनिक व्यवस्था की आधारशिला के साथ-साथ सभ्यता की पहचान बन गया है। यह न कवेल एक सैद्धान्तिक विषय है बल्कि सभ्य समाजों में व्यक्ति तथा सरकार के बीच औपचारिक सम्बन्धों को स्पष्ट करने वाला आवश्यक ज्ञान है। इस सम्बन्ध में चार्ल्स बेयर्ड ने ठीक ही कहा है कि ''प्रशासन के विषय से अधिक महत्वपूर्ण अन्य कोई विषय नहीं हो सकता है। मेरे

विचार से शासन तथा हमारी सभ्यता का भविष्य इसी बात पर निर्भर करता है कि सभ्य समाज के कार्यों की पूर्ति के लिए प्रशासन का दार्शनिक, वैज्ञानिक तथा व्यावहारिक स्वरूप कितना विकसित होता है।''

लोक प्रशासन, प्रशासन का एक महत्वपूर्ण उपकरण है। देश में शांति एवं सुव्यवस्था स्थापित करना तथा नागरिकों को सुरक्षा प्रदान करना, पारंपरिक रूप से लोक प्रशासन के महत्वपूर्ण कार्य रहे है। आधुनिक काल में व्यक्ति की अपेक्षाओं, महत्वाकांक्षाओ तथा आवश्यकताओं में वृद्धि के साथ-साथ लोक प्रशासन का दायित्व भी बढ़ गया है। इसे कई अन्य चुनौतीपूर्ण कार्यों का सम्पादन करना पड़ता है। देश के विकास और प्रगति को आगे बढाने के लिए सुचारू रूप से संचालन के लिए तथा इनके मार्ग में आने वाली समस्याओं से जूझने के लिए लोक प्रशासन अत्यन्त आवश्यक है। यह विकास एवं परिवर्तन का भी एक प्रमुख उपकरण बन गया है।

1.5 लोक प्रशासन का महत्व

किसी भी विषय के अध्ययनकर्ता सम्बन्धित विषय के अध्ययन में दिलचस्पी तभी लेते है जबकि वह विषय उन्हें महत्वपूर्ण एवं उपयोगी प्रतीत होता है। लोक प्रशासन के इस विषय का अध्ययन करते समय आप भी विषय के महत्व को जानने को इच्छुक होंगे।राजनीतिक व्यवस्था का स्वरूप किसी भी प्रकार का हो, लोक प्रशासन एक अनिवार्यता है। आधुनिक युग में इसका महत्व इतना अधिक बढ गया है कि यह प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से मानव जीवन के प्रत्येक क्षेत्र को प्रभावित करता है। यही कारण है कि सामाजिक विज्ञानों में लोक प्रशासन ने अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थिति प्राप्त कर ली है और प्रशासनिक व्यवस्था की आधारशिला के साथ-साथ सभ्यता की पहचान बन गया है। यह न कवेल एक सैद्धान्तिक विषय है बल्कि सभ्य समाजों में व्यक्ति तथा सरकार के बीच औपचारिक सम्बन्धों को स्पष्ट करने वाला आवश्यक ज्ञान है। इस सम्बन्ध में चार्ल्स बेयर्ड ने ठीक ही कहा है कि ''प्रशासन के विषय से अधिक महत्वपूर्ण अन्य कोई विषय नहीं हो सकता है। मेंरे

विचार से शासन तथा हमारी सभ्यता का भविष्य इसी बात पर निर्भर करता है कि सभ्य समाज के कार्यों की पूर्ति के लिए प्रशासन का दार्शनिक, वैज्ञानिक तथा व्यावहारिक स्वरूप कितना विकसित होता है।''

लोक प्रशासन, प्रशासन का एक महत्वपूर्ण उपकरण है। देश में शांति एवं सुव्यवस्था स्थापित करना तथा नागरिकों को सुरक्षा प्रदान करना, पारंपरिक रूप से लोक प्रशासन के महत्वपूर्ण कार्य रहे है। आधुनिक काल में व्यक्ति की अपेक्षाओं, महत्वाकांक्षाओ तथा आवश्यकताओं में वृद्धि के साथ-साथ लोक प्रशासन का दायित्व भी बढ़ गया है। इसे कई अन्य चुनौतीपूर्ण कार्यों का सम्पादन करना पड़ता है। देश के विकास और प्रगति को आगे बढाने के लिए सुचारू रूप से संचालन के लिए तथा इनके मार्ग में आने वाली समस्याओं से जूझने के लिए लोक प्रशासन अत्यन्त आवश्यक है। यह विकास एवं परिवर्तन का भी एक प्रमुख उपकरण बन गया है।

आज राज्य का स्वरूप लोककल्याणकारी है तथा यह जनता के उत्थान के लिए बहुमुखी योजनायें चलाती है। इन योजनाओं की सफलता प्रशासन की कार्यकुशलता एवं निष्पक्षता पर निर्भर करती है। योजनाओं को लागू करने का कार्य लोक सेवको द्वारा सम्पन्न किया जाता है। ऐसी स्थिति में राज्य और लोक प्रशासन में अंतर नहीं रह गया है। डिमॉक के अनुसार ''लोक प्रशासन सभ्य समाज का आवश्यक अंग तथा आधुनिक जीवन का एक प्रमुख तत्व है और इसने राज्य के उस स्वरूप को जन्म दिया है जिसे 'प्रशासकीय राज्य' कहा जाता है। वस्तुतः लोक प्रशासन व्यक्ति के जन्म से लेकर मृत्यु तक सम्पादित होने वाले तमाम कार्यों में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।''

आज लोक प्रशासन सामाजिक परिवर्तन का भी एक प्रमुख साधन बन गया है। विकासशील देशों की परम्परागत जीवन शैली, अंधविश्वास रूढियों तथा कुरीतियों में परिवर्तन लाना एक सामाजिक आवश्यकता है। सुनियोजित सामाजिक परिवर्तन के लिए शिक्षा, राजनीतिक चेतना, आर्थिक विकास, कानून, दबाव समूह तथा स्वयंसेवी संगठनो सहित प्रशासन भी एक उपकरण माना जाता है। सामाजिक परिवर्तन का हथियार हो ने के साथ-साथ लोक प्रशासन सामाजिक नियन्त्रण का माध्यम भी है। सामाजिक नियन्त्रण का तात्पर्य उस ढंग से है जिसके द्वारा सम्पूर्ण सामाजिक व्यवस्था की एकता तथा स्थायित्व को बनाया रखा जा सके और जिसमें सामाजिक व्यवस्था परिवर्तनशील रहते हुए क्रियाशील रहे। हमारे देश में गरीबी, भूखमरी, बेरोजगारी, शोषण, महिला अत्याचार, बाल अपराध, दहेज, छुआछूत, आदि जैसी सामाजिक समस्यायें विधमान है। ऐसी जटिल एवं व्यापक सामाजिक समस्याओं एवं कुरीतियो का समाधान केवल सरकार द्वारा निर्मित सामाजिक नीतियो एवं सामाजिक कानूनों द्वारा ही संभव है और इन नीतियों एवं कानूनों को क्रियान्वित करने में लोक प्रशासन महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। लोक प्रशासन की भूमिका केवल नीतियों के क्रियान्वयन तक ही सीमित नहीं है, बल्कि उसके निर्धारण में भी यह महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। नीतियों के निर्माण की औपचारिक जिम्मेदारी भले ही राजनीतिज्ञों की हो, लेकिन अपने विशिष्ट ज्ञान प्रशिक्षण तथा अनुभव के कारण एक सलाहकार के रूप में लोक सेवक नीतियों के निर्माण में अहम भूमिका

निभाते है। वस्तुतः सरकार के कार्यों के सफल संचालन के लिए प्रशासनिक लोक सेवकों का सहयोग आवश्यक है। प्रशासन सरकार के हाथ-पैर हैं और सरकार की सफलता का महत्वपूर्ण माध्यम है।

लोक प्रशासन द्वारा प्रशासको के प्रशिक्षण जैस महत्वपूर्ण कार्यों का सम्पादन करने प्रशासनिक व्यवस्था की गतिशीलता व उपादेयता में महत्वपूर्ण भूमिका निभायी जाती है। प्रशिक्षण के द्वारा ही लोक प्रशासक यह सीख पाते हैं कि कानून व व्यवस्था बनाये रखा जाये, प्रशासनिक जीवन में समन्वय, संचार, सोपान, नियन्त्रण क्षेत्र इत्यादि की जानकारी भी प्रशासकों को लोक प्रशासन से ही सम्भव है। यही कारण है कि लोक सेवकों को लोक प्रशासन का सैद्धान्तिक एवं व्यावहारिक

विकास, कानून, दबाव समूह तथा स्वयंसेवी संगठनो सहित प्रशासन भी एक उपकरण माना जाता है। सामाजिक परिवर्तन का हथियार हो ने के साथ-साथ लोक प्रशासन सामाजिक नियन्त्रण का माध्यम भी है। सामाजिक नियन्त्रण का तात्पर्य उस ढंग से है जिसके द्वारा सम्पूर्ण सामाजिक व्यवस्था की एकता तथा स्थायित्व को बनाया रखा जा सके और जिसमें सामाजिक व्यवस्था परिवर्तनशील रहते हुए क्रियाशील रहे। हमारे देश में गरीबी, भूखमरी, बेरोजगारी, शोषण, महिला अत्याचार, बाल अपराध, दहेज, छुआछूत, आदि जैसी सामाजिक समस्यायें विधमान है। ऐसी जटिल एवं व्यापक सामाजिक समस्याओं एवं कुरीतियो का समाधान केवल सरकार द्वारा निर्मित सामाजिक नीतियो एवं सामाजिक कानूनों द्वारा ही संभव है और इन नीतियों एवं कानूनों को क्रियान्वित करने में लोक प्रशासन महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। लोक प्रशासन की भूमिका केवल नीतियों के क्रियान्वयन तक ही सीमित नहीं है, बल्कि उसके निर्धारण में भी यह महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। नीतियों के निर्माण की औपचारिक जिम्मेदारी भले ही राजनीतिज्ञों की हो, लेकिन अपने विशिष्ट ज्ञान प्रशिक्षण तथा अनुभव के कारण एक सलाहकार के रूप में लोक सेवक नीतियों के निर्माण में अहम भूमिका

निभाते है। वस्तुतः सरकार के कार्यों के सफल संचालन के लिए प्रशासनिक लोक सेवकों का सहयोग आवश्यक है। प्रशासन सरकार के हाथ-पैर हैं और सरकार की सफलता का महत्वपूर्ण माध्यम है।

लोक प्रशासन द्वारा प्रशासको के प्रशिक्षण जैस महत्वपूर्ण कार्यों का सम्पादन करने प्रशासनिक व्यवस्था की गतिशीलता व उपादेयता में महत्वपूर्ण भूमिका निभायी जाती है। प्रशिक्षण के द्वारा ही लोक प्रशासक यह सीख पाते हैं कि कानून व व्यवस्था बनाये रखा जाये, प्रशासनिक जीवन में समन्वय, संचार, सोपान, नियन्त्रण क्षेत्र इत्यादि की जानकारी भी प्रशासकों को लोक प्रशासन से ही सम्भव है। यही कारण है कि लोक सेवकों को लोक प्रशासन का सैद्धान्तिक एवं व्यावहारिक अध्ययन करना पड़ता है।

भूमंडलीकरण एवं आर्थिक उदारीकरण की प्रक्रिया प्रारम्भ होते समय कुछ विद्वानों को यह आशंका व्यक्त की थी कि लोकप्रशासन का महत्व कम हो जायेगा। लेकिन वास्तविकता यह है कि भूमंडलीकरण एवं उदारीकरण के युग में लोक प्रशासन की भूमिका और चरित्र में कुछ बदलाव आया है, लेकिन इसका महत्व कम नहीं हुआ है। अब लोक प्रशासन की एक नवीन भूमिका सुविधाकारक तथा उत्प्रेरक की है। यह और सक्रिय हो कर देखता है कि विस्तृत होता हुआ निजी क्षेत्र राष्ट्र के कानून तथा नियमनों की संरचना के अंतर्गत क्रियाशील है या नहीं। इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि सरकार का स्वरूप किसी भी प्रकार का हो लेकिन लोक प्रशासन का महत्व एवं इसकी भूमिका कम नहीं हो सकती। लोक तांत्रिक शासन प्रणाली ने तो इसके महत्व को और भी बढा दिया है। आज लोक प्रशासन सभ्य समाज की प्रथम आवश्यकता है। देश में शांति, व्यवस्था एवं स्थिरता बनाये रखने तथा विकास कार्य एवं सामाजिक परिवर्तन को गति प्रदान करने के लिए लोक प्रशासन अपरिहार्य है। फाइनर के शब्दों में "कुशल प्रशासन सरकार का एक मात्र अबलम्ब है जिसकी अनुपस्थिति में राज्य क्षत-विक्षत हो जायेगा।"

अभ्यास - 4

1. लोक प्रशासन की भूमिका केवल नीतियों के क्रियान्वयन तक सीमित है। सत्य/असत्य
2. लोक प्रशासन विकास एवं परिवर्तन का प्रमुख उपकरण है। सत्य/असत्य
3. भूमंडलीकरण के इया युग में लोक प्रशासन की भूमिका एक सुविधाकारक एवं उत्प्रेरक की है। सत्य/असत्य

1.6 सारांश

लोक प्रशासन प्रशासन का वह विशिष्ट भाग है, जिसमें उन सभी क्रियाकलापो का अध्ययन किया जाता है जो सार्वजनिक नीतियो को क्रियान्वित करने से सम्बन्धित है। यह एक गतिशील विषय है जिसके स्वरूप में निरंतर परिवर्तन होता रहा है। यह एक सामाजिक विज्ञान तथा व्यावहारिक कला का समन्वित रूप है। आधुनिक लोक कल्याणकारी राज्यों में इसकी भूमिका बहुत महत्वपूर्ण हो

गयी है। यह न केवल शांति एवं सुव्यवस्था स्थापित करने का बल्कि विकास एवं सामाजिक परिवर्तन का भी एक प्रमुख उपकरण बन गया है। भूमंडलीकरण एवं उदारीकरण के युग में लोक प्रशासन के लिए नयी भूमिका का सृजन हुआ है।

इस इकाई में हमने लोक प्रशासन की आधारभूत विशेषताओं तथा इसके महत्व पर प्रकाश डाला है। अगले अध्याय में हम इस विषय के अध्ययन के विभिन्न दृष्टिकोण पर प्रकाश डालेंगे।

1.7 शब्दावली

प्रशासनिक राज्य- ऐसा राज्य जिसमें कार्यपालिका शाखा का प्रभुत्व होता है, यद्यपि इसमें

इकाई- 2 लोक प्रशासन के अध्ययन के विभिन्न दृष्टिकोण

इकाई की संरचना

2.1 प्रस्तावना
2.2 उद्देश्य
2.3 परम्परागत दृष्टिकोण
    2.3.1 दार्शनिक उपागम
    2.3.2 वैधानिक उपागम
    2.3.3 ऐतिहासिक उपागम
    2.3.4 संस्थागत-संरचनात्मक उपागम
2.4 आधुनिक दृष्टिकोण
    2.4.1 वैज्ञानिक उपागम
    2.4.2 व्यवहारवादी उपागम
    2.4.3 पारिस्थितिकीय उपागम
    2.4.4 घटना या प्रकरण पद्धति
2.5 सारांश
2.6 शब्दावली
2.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
2.8 संदर्भ ग्रन्थ-सूची
2.9 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री
2.10 निबंधात्मक प्रश्न

2.1 प्रस्तावना

प्रथम इकाई के अध्ययन के पश्चात आप लोक प्रशासन विषय के अर्थ, प्रकृति, क्षेत्र तथा महत्व को समझ चुके होंगे। इस इकाई में हम आपको इस विषय के अध्ययन से सम्बन्धित विभिन्न दृष्टिकोणों या उपागमों से अवगत करायेंगे।

जिस प्रकार लोक प्रशासन की परिभाषा, प्रकृति तथा विषय क्षेत्र के सम्बन्ध में विद्वानों में मतभेद पाया जाता है, उसी प्रकार इस बात को लेकर भी मतभेद है कि इस विषय का अध्ययन किस दृष्टि से किया जाय अर्थात दार्शनिक, वैधानिक, संस्थागत, ऐतिहासिक, या फिर वैज्ञानिक व्यवहारवादी, पारिस्थितिकीय या प्रकरण प्रधान दृष्टि से। दूसरे शब्दों में लोक प्रशासन के अध्ययन के सम्बन्ध में विभिन्न दृष्टिकोण या उपागम प्रचलित हैं।

इस इकाई के अध्ययन के वाद आप लोक प्रशासन के परम्परागत एवं आधुनिक दृष्टिकोणों की समीक्षा कर सकेंगे।

2.2 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के उपरान्त आप-

- लोक प्रशासन के अध्ययन के विभिन्न दृष्टिकोणो या उपागमो से अवगत होंगे।

इस इकाई के अध्ययन के वाद आप लोक प्रशासन के परम्परागत एवं आधुनिक दृष्टिकोणों की समीक्षा कर सकेंगे।

2.2 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के उपरान्त आप-

- लोक प्रशासन के अध्ययन के विभिन्न दृष्टिकोणो या उपागमो से अवगत होंगे।
- इन उपागमों या दृष्टिकोणो में अंतर कर सकेंगे।
- इनके गुण-दोषों को जान सकेंगे।
- यह तय कर सकेंगे कि लोक प्रशासन के अध्ययन के लिए उपयुक्त दृष्टिकोण क्या होना चाहिए।

2.3 परम्परागत दृष्टिकोण

परम्परागत दृष्टिकोण के अंतर्गत लोक प्रशासन के अध्ययन में निम्नलिखित उपागमो को सम्मिलित किया जा सकता है-

2.3.1 दार्शनिक उपागम

यह उपागम लोक प्रशासन के अध्ययन का सबसे प्राचीन उपागम है। यह इस बात पर बल देता है कि लोक प्रशासन कैसा होना चाहिए। महाभारत का 'शांतिपर्व', प्लेटो रचित 'रिपब्लिक', हॉब्स की रचना, 'लेवियाथन', लॉक रचित 'ट्रीटाइज ऑफ सिविल गवर्मेन्ट' इत्यादि रचनाओं में इस दृष्टिकोण की झलक मिलती है।

आधुनिक काल में लोकप्रशासन को एक दर्शन के रूप में देखने की आवश्यकता पर अनेक विद्वानों ने बल दिया है, जिनमें मार्शल डिमॉक, क्रिस्टोफर हॉगकिन्सन, चेस्टर बनार्ड, साइमन, थाम्पसन इत्यादि के नाम प्रमुख हैं। इन विद्वानों की मान्यता है कि राज्य की नीतियो को सत्यनिष्ठा एवं कुशलतापूर्वक लागू किया जाना चाहिए। प्रशासन का दर्शन प्रशासन के विज्ञान की अपेक्षा अधिक व्यापक होना चाहिए तथा लोक प्रशासन को उन सभी तत्वों की ओर ध्यान देना चाहिए, जिनका समावेश प्रशासकीय क्रिया में होता है।

इस दृष्टिकोण के अनुसार प्रशासन का सम्बन्ध लक्ष्य तथा साधन दोनों से है। इन दोनों का कुशलतापूर्वक समन्वय ही प्रशासन के उत्कृष्टता की कसौटी है। दूसरे शब्दों में, लोक प्रशासन के दर्शन का प्रयोजन हमारे लक्ष्यों को पारिभाषित करना तथा उनकी प्राप्ति के लिए समुचित साधनों की खोज करना है। लोक प्रशासन का कार्य हमारे सामाजिक और भौतिक पर्यावरण के अविवेकपूर्ण तथ्यों पर मर्यादा लगाकर उन्हें नियंत्रित करना होता है। वर्तमान समय में लोक प्रशासन का मूल उद्देश्य समस्त समाज के लिए श्रेष्ठ जीवन की स्थितियों का निर्माण करना है।

चार्ल्स बेयर्ड के अनुसार, 'सभ्य शासन तथा स्वयं सभ्यता का भी भविष्य हमारी उस क्षमता पर निर्भर करता है कि हम प्रशासन को एक ऐसे विज्ञान, दर्शन और व्यवहार के रूप में विकसित कर पाते हैं या नहीं, जो सभ्य समाज के कार्यों को पूरा करने में समर्थ हो।'

4:19
47
16

इस प्रकार दार्शनिक उपागम का क्षेत्र अत्यन्त व्यापक है और यह अपनी परिधि में सभी प्रकार की प्रशासकीय क्रियाओ को समेट लेता है। इसका ध्येय इन क्रियाओ में अन्तर्निहित सिद्धान्तों और उद्देश्यों का पता लगाना होता है।

दार्शनिक उपागम की आलोचना इस आधार पर की जा सकती है कि इसमें केवल लोक प्रशासन के आदर्श स्वरूप का चित्रण किया गया है अर्थात प्रशासन कैसा हो ना चाहिए, लेकिन इससे हमें वास्तविक प्रशासकीय स्थिति का ज्ञान नहीं हो सकता। अतः यह दृष्टिकोण अपूर्ण है।

2.3.2 वैधानिक उपागम

दार्शनिक उपागम या दृष्टिकोण के पश्चात लोक प्रशासन का अध्ययन सामान्यतया वैधानिक दृष्टिकोण से करने की परम्परा रही है। यह एक व्यवस्थित उपागम है जिसका मूल यूरोप की परम्परा में व्याप्त है। यूरोप में लोक प्रशासन का विकास कानून के अंतर्गत हुआ तथा वहाँ वैधानिक दृष्टि से ही इस विषय के अध्ययन पर बल दिया जाता है। इस उपागम का विकास उस समय हुआ था जब राज्य के कार्य अत्यन्त सरल तथा क्षेत्र अत्यन्त सीमित थे।

इस उपागम में लोक प्रशासन के अध्ययन को संविधानों में प्रयुक्त भाषा, विधि संहिताओं, प्रकाशित अधिनियमों तथा न्यायिक निकायों के निर्णयों पर आधारित किया जाता है।

इस उपागम का अनुसरण सबसे अधिक जर्मनी, फ्रांस तथा बेल्जियम जैसे यूरोपियन देशों में हुआ है। इन देशों में लोक विधि को दो प्रमुख शाखाओं में विभाजित कर दिया गया है, यथा संवैधानिक विधि तथा प्रशासकीय विधि। इन देशों में राजनीति का अध्ययन प्रधानतः संवैधानिक विधि की दृष्टि से तथा प्रशासन का अध्ययन प्रशासकीय विधि की दृष्टि से किया जाता है। यहीं कारण है कि इन देशों में उच्च असैनिक अधिकारियों की भर्ती तथा प्रशिक्षण के समय वैधानिक अध्ययन के ऊपर ही अधिक बल दिया जाता है। इस उपागम को इंग्लैण्ड और अमेरिका में भी समर्थन प्राप्त हुआ है।

इसमें कोई दो राय नहीं कि लोक प्रशासन वैधानिक ढांचे के अंतर्गत कार्य करता है, अतः उस ढांचे पर प्रकाश डालने के लिए यह उपागम उपयोगी है। परन्तु इस उपागम की एक सीमा यह है कि यह प्रशासन की समाज शास्त्रीय पृष्ठभूमि की सर्वथा उपेक्षा करता है। परिणामस्वरूप प्रशासन का वैधानिक अध्ययन औपचारिक एवं रूढिवादी बन जाता है तथा उसमें प्रशासकीय कार्यकलाप तथा व्यवहार के लिए सजीव आधारों का कोई बोध ही नहीं रह पाता।

2.3.3 ऐतिहासिक उपागम

लोक प्रशासन के अध्ययन का ऐतिहासिक उपागम भी अति प्राचीन है। भूतकालीन लोक प्रशासन का अध्ययन इसके माध्यम से किया जाता है और सूचनाऐं काल क्रम की दृष्टि से संग्रहीत की जाती हैं, तथा उनकी व्याख्या की जाती है। गौरवशाली अतीत से युक्त समाज में यह पद्धति अत्यधिक लोक प्रिय और प्रशासकीय प्रणाली के अनोखेपन को निर्धारित करने में सहायक होती है।

यह दृष्टिकोण वर्तमानकालीन प्रशासकीय संस्थाओं एवं प्रणालियों को पिछले अनुभवों के आधार पर देखने की चेष्टा करता है। वास्तव में अनेक प्रशासकीय संस्थाओ को उनके अतीत के आधार पर

17

ही समझा जा सकता है, और यह ऐतिहासिक उपागम द्वारा ही संभव है। उदाहरण के लिए, भारत के वर्तमान प्रशासन को समझने के लिए यह आवश्यक है कि हम प्राचीन काल से लेकर अब तक देश में जिस प्रकार प्रशासकीय संस्थाओ का विकास हुआ है, उसके बारे में जानकारी प्राप्त करें। संयुक्त

Edit Annotate Fill & Sign Convert All

ही समझा जा सकता है, और यह ऐतिहासिक उपागम द्वारा ही संभव है। उदाहरण के लिए, भारत के वर्तमान प्रशासन को समझने के लिए यह आवश्यक है कि हम प्राचीन काल से लेकर अब तक देश में जिस प्रकार प्रशासकीय संस्थाओ का विकास हुआ है, उसके बारे में जानकारी प्राप्त करें। संयुक्त राज्य अमेरिका में भी इस उपागम के माध्यम से प्रशासन की समस्याओ को समझने का प्रयत्न किया गया है। इस सम्बन्ध में व्हाइट की दो पुस्तकें 'द फेडरलिस्ट' तथा 'जेफेरसोनियन' विशेष रूप से उल्लेखनीय है। पहली पुस्तक 1948 में प्रकाशित हुई थी और दूसरी 1951 में तथा इनमें अमेरिकी गणतंत्र के प्रथम चालीस वर्षों के संघ प्रशासन का अध्ययन प्रस्तुत किया गया हैं।

प्रशासन के ऐतिहासिक उपागम से मिलता जुलता संस्मरणात्मक उपागम है। इस उपागम का अर्थ है प्रसिद्ध तथा वरिष्ठ प्रशासकों के अनुभवों तथा उनके कार्यों के अभिलेख के अध्ययन की प्रणाली। ये संस्मरण चाहे स्वयं उन्होंने लिखे हों अथवा दूसरों ने हर स्थिति में इनसे प्रशासकीय समस्याओं तथा निर्णय की प्रक्रिया का वास्तविक और व्यावहारिक ज्ञान प्राप्त होता है। इसमें एक कठिनाई यह है कि सार्वजनिक कार्यकर्ताओ की जीवन गाथाओं में प्रशासकीय कार्यों की अपेक्षा राजनीतिक महत्व की बातों पर बल दिया जाता है। अतः इस उपागम को उपयोगी बनाने के लिए इस कमी को दूर करना अत्यन्त आवश्यक है।

ऐतिहासिक तथा संस्मरणात्मक दृष्टिकोण प्रशासन के अतीत के आधार पर उसके वर्तमान स्वरूप के कुछ पहलुओं पर भले ही प्रकाश डालता हो, लेकिन वर्तमान प्रशासन के समक्ष कई ऐसी चुनौतियाँ या समस्याएँ है, जिनका निराकरण केवल अतीत के अनुभव के आधार पर नहीं किया जा सकता। उदाहरणस्वरूप- कम्प्यूटर के इस युग में साईबर क्राइम की समस्या। अतः केवल ऐतिहासिक पद्धति के माध्यम से लोक प्रशासन के वर्तमान स्वरूप को समग्र रूप में नहीं समझा जा सकता।

2.3.4 संस्थागत-संरचनात्मक उपागम

यह उपागम लोकप्रशासन का अध्ययन औपचारिक दृष्टि से करता है। इस दृष्टिकोण के समर्थक सार्वजनिक संस्थाओं के औपचारिक ढांचे तथा उनके कार्यों पर ध्यान देते हैं। दूसरे शब्दों में, इस उपागम के अंतर्गत सरकार के अंगों तथा भागों का अध्ययन किया जाता है, जैसे-कार्यपालिका, व्यवस्थापिका, विभाग, सरकारी निगम, मण्डल और आयोग, बजट बनाने का रचना-तंत्र, केन्द्रीय कर्मचारी अभिकरण इत्यादि। जहाँ तक इस उपागम में इन संस्थाओं द्वारा कार्यान्वित कार्यों का उल्लेख होता है, यह यथार्थवादी है। परन्तु इस यथार्थवाद के साथ कभी-कभी संगठन एवं प्रक्रियाओं में सम्भावित सुधारों का भी सुझाव दिया जाता है।

इस दृष्टिकोण को यांत्रिक दृष्टिकोण भी कहा जाता है, क्योंकि यह प्रशासन को एक यन्त्रवत इकाई मानता है। यह संगठनों के व्यवस्थित विश्लेषण पर आधारित सबसे पुराने निरूपणो में से एक है, इसलिए इसे परम्परागत या शास्त्रीय दृष्टिकोण की भी संज्ञा दी जाती है। हेनरी फेयोल, लूथर गुलिक, एल.एफ.उर्विक, एम.पी.फॉलेट, ए.सी. रैले, जे.डी. मूने आदि विद्वान इस दृष्टिकोण के समर्थक हैं।

लोक प्रशासन के सिद्धांत BAPA101

इस दृष्टिकोण के अनुसार, प्रशासन, प्रशासन होता है, चाहे उसके द्वारा किसी प्रकार का कार्य किसी

इस दृष्टिकोण के अनुसार, प्रशासन, प्रशासन होता है, चाहे उसके द्वारा किसी प्रकार का कार्य किसी परिप्रेक्ष्य में क्यों न सम्पादित किया जाय। इसमें अतिरिक्त प्रशासकीय पद्धति के महत्वपूर्ण तत्वों तथा सभी प्रशासकीय संरचनाओं में सामान्य विशेषताओं या तत्वों को स्वीकार किया जाता है। इसका उद्देश्य प्रशासनिक संगठन के निश्चित सिद्धान्तों का विकास करना है।

हेनरी फेयोल ने अपनी पुस्तक 'जनरल एण्ड इण्डस्ट्रियल एडमिनिस्ट्रेशन' में प्रशासन के पाँच कार्यों- नियोजन, संगठन, आदेश, समन्वय एवं नियंत्रण का उल्लेख किया है। इस संदर्भ में व्यापक विश्लेषण लूथर गुलिक और एल0एफ0 उर्विक द्वारा 1937 में सम्पादित 'पेपर्स ऑन द साइन्स ऑफ एडमिनिस्ट्रेशन' में किया गया। गुलिक ने प्रशासन के कर्तव्यों को पोस्डकॉब शब्द में संग्रहीत किया है जिसका प्रत्येक अक्षर प्रशासन के विशेष कार्य का उल्लेख करता है-

1. Planning; नियोजन- संपन्न किये जाने वाले कार्यों का निर्धारण तथा उद्यम के निर्धारित उद्देश्य की प्राप्ति के लिए उन्हें संपन्न करने के तरीकों का निर्धारण।
2. Organization; संगठन बनाना- सत्ता के औपचारिक स्वरूप की स्थापना करना तथा उनके माध्यम से निश्चित लक्ष्य की प्राप्ति के लिए कार्य को विभिन्न भागों में व्यवस्थित, पारिभाषित एवं समन्वित करना।
3. Staffing; कर्मचारियों की नियुक्ति करना- कर्मचारियों की भर्ती और प्रशिक्षण की व्यवस्था तथा उनके कार्यों के अनुकूल परिस्थितियों का निर्माण करना।
4. Direction; निर्देशन करना- निर्णय लेना और उन्हे विशिष्ट और सामान्य आदेशों और निर्देशों का रूप प्रदान करना।
5. Coordination; समन्वय- कार्य के विभिन्न भागों में पारस्परिक सम्बन्ध स्थापित करने का सबसे महत्वपूर्ण कार्य।
6. Reporting; प्रतिवेदन- कार्य स्थिति के विषय में कार्यपालिका को सूचित करना जिसमें स्वयं को तथा अधीनस्थो को आलेखों, अनुसंधान तथा निरीक्षण के द्वारा सूचित करना।
7. Boudgeting; बजट बनाना- आर्थिक योजना, लेखांकन तथा नियंत्रण के रूप में बजट बनाने संबंधित सभी कार्य

अपने गुण व दोषों के साथ पोस्डकोर्ब दृष्टिकोण प्रशासनिक प्रक्रियाओं में एक प्रचलित दृष्टिकोण रहा है। संस्थात्मक-संरचनात्मक दृष्टिकोण की कई दृष्टियों से आलोचना की जाती है-

1. हरबर्ट साइमन के अनुसार इस दृष्टिकोण में यह स्पष्ट नहीं होता कि किस विशेष स्थिति में कौन सा सिद्धान्त महत्व देने योग्य है। उन्होंने प्रशासन के सिद्धान्तों को प्रशासन की कहावतें मात्र कहा है।
2. इस दृष्टिकोण से सम्बन्धित सभी विचारकों में प्रबन्ध की ओर झुकाव नजर आता है। वे केवल प्रबंध की समस्याओं से चिन्तित थे न कि प्रबंध तथा व्यक्तियों से संबंधित अन्य संगठनात्मक समस्याओं के विषय से।

3. यह एक संकुचित विचार है जो संगठन में उनके व्यक्तियों को उनके साथियों से अलग रखकर निरीक्षण करने पर बल देता है। यह कार्य करने वाले मनुष्यों की अपेक्षा कार्य के विषय में अधिक चिन्तित है।
4. इस दृष्टिकोण से लोक प्रशासन के अर्थ एवं क्षेत्र का पूरा बोध नहीं होता और न ही लोक प्रशासकों के मार्गदर्शन की दृष्टि से उनका महत्व है।
5. उपर्युक्त कमियों के वावजूद संस्थागत-संरचनात्मक दृष्टिकोण की पूर्णतः उपेक्षा नहीं की जा

मात्र कहा है।

2. इस दृष्टिकोण से सम्बन्धित सभी विचारकों में प्रबन्ध की ओर झुकाव नजर आता है। वे केवल प्रबंध की समस्याओं से चिन्तित थे न कि प्रबंध तथा व्यक्तियों से संबंधित अन्य संगठनात्मक समस्याओं के विषय से।

3. यह एक संकुचित विचार है जो संगठन में उनके व्यक्तियों को उनके साथियों से अलग रखकर निरीक्षण करने पर बल देता है। यह कार्य करने वाले मनुष्यों की अपेक्षा कार्य के विषय में अधिक चिन्तित है।
4. इस दृष्टिकोण से लोक प्रशासन के अर्थ एवं क्षेत्र का पूरा बोध नहीं होता और न ही लोक प्रशासकों के मार्गदर्शन की दृष्टि से उनका महत्व है।
5. उपर्युक्त कमियों के वावजूद संस्थागत-संरचनात्मक दृष्टिकोण की पूर्णतः उपेक्षा नहीं की जा सकती।
6. इस दृष्टिकोण ने ही सर्वप्रथम इस बात पर बल दिया कि प्रशासन को एक स्वतन्त्र क्रिया मानकर उसका बौद्धिक अन्वेषण किया जाना चाहिए।
7. सबसे पहले इस दृष्टिकोण ने ही प्रशासन के क्षेत्र में अवधारणाओं और शब्दावली पर बल दिया, जो इस क्षेत्र के परवर्ती शोध का आधार बनी।
8. इस दृष्टिकोण की कमियों ने संगठन तथा उसके व्यवहार के भावी शोध की प्रेरणा प्रदान की।

इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि संस्थागत संरचनात्मक दृष्टिकोण लोक प्रशासन का एक महत्वपूर्ण दृष्टिकोण है। किन्तु इस उपागम से किसी संगठन के व्यावहारिक रूप का सही ज्ञान नहीं होता।

अभ्यास प्रश्न- 1

1. लोक प्रशासन के अध्ययन के चार परम्परागत उपागमों के नाम लिखिए।
2. दार्शनिक उपागम इस बात पर बल देता है कि लोक प्रशासन कैसा होना चाहिए? सत्य/असत्य
3. संस्थागत उपागम लोक प्रशासन का अध्ययन अनौपचारिक दृष्टि से करता है। सत्य/असत्य
4. 'पोस्डकार्ब' शब्द का अर्थ बताइए।

2.4 आधुनिक दृष्टिकोण

लोक प्रशासन के अध्ययन के आधुनिक दृष्टिकोण के अंतर्गत निम्नलिखित उपागमों को सम्मिलित किया जा सकता है-

2.4.1. वैज्ञानिक अथवा तकनीकी उपागम

वीसवी सदी के आरंभ में संयुक्त राज्य अमेरिका के वैज्ञानिक प्रबन्ध आंदोलन ने लोक प्रशासन के अध्ययन के लिए वैज्ञानिक उपागम के प्रयोग को अनुप्रणित किया है। वैज्ञानिक प्रबन्ध वस्तुतः उस प्रयास का परिणाम था जिसके द्वारा सरकार के कार्यों के परिचालन में वैज्ञानिक चिन्तन को लागू किया गया। इस आंदोलन का सूत्रपात एफ0डब्ल्यू0 टेलर नामक एक इंजीनियर ने किया था। कालान्तर में अमेरिका में ऐसे लोगों की संख्या में पर्याप्त रूप से वृद्धि हो गयी जो यह मानते थे कि मनुष्यों के प्रबन्ध का कार्य यथार्थ में एक वैज्ञानिक कार्य है जिसके लिए ज्ञान का एक निकाय निर्मित किया जा सकता है। यह ज्ञान कम या अधिक मात्रा में पूर्ण हो सकता है और यह पर्यवेक्षण तथा

अनुभव के विश्लेषण पर आधारित होता है। इस ज्ञान के चार भाग हैं- पहला- उन कार्यों का विश्लेषण जिन्हें करने के लिए लोगो को कहा जाता है, दूसरा- व्यक्तियों का उन कार्यों के साथ समायोजन, तीसरा- मानवीय अनुभव से प्राप्त ज्ञान के आधार पर कार्यों को व्यवस्थित तथा सह वर्णित करना तथा चौथा- निर्धारित कार्यों का प्रत्येक समूह के साथ समायोजन। इसके अंतर्गत नेतृत्व, संचार, सहभाग तथा मनोबल को शामिल किया जा सकता है।

प्रबन्ध के अध्ययन का प्रारम्भ व्यापार के साथ हुआ था, परन्तु अब उसका प्रयोग बड़ी मात्रा में लोक कार्यों के प्रबन्ध के लिए भी किया जाने लगा है। उदाहरण के लिए, अब मुख्य कार्यपालिका के लिए जनरल मैनेजर तथा व्यवस्थापिका के लिए संचालक मण्डल शब्दावलियों को प्रयुक्त किया जाने लगा है। स्पष्टतः इन शब्दावलियों को लोक प्रशासन के अध्ययन में नूतन प्रवृतियों का परिचायक समझा जाना चाहिए।

इस दृष्टिकोण के समर्थक प्रशासन से सम्बद्ध समस्याओं के ऊपर वैज्ञानिक ढंग से विचार करते हैं तथा वे उन समस्याओं का समाधान उन यंत्रों के माध्यम से खोजने का प्रयत्न करते है जिनका प्रयोग वैज्ञानिकों द्वारा किया जाता है।

डेविड लिलियनथल के अनुसार आज जनता की यह मांग है कि उनके देश की सरकारें आधुनिक प्रबन्ध के मूल सिद्धान्तों को अमल में लायें। इस प्रकार आज के संदर्भ में महत्वपूर्ण बात केवल यह नहीं है कि कार्य का निष्पादन किस प्रकार से हो, परन्तु यह भी है कि कौन सा कार्य किया जाय। इस आंदोलन ने कुछ विशिष्ट प्रकार की पद्धितियों को विकसित करने में सहायता पहुँचायी है। जैसे- प्रकरण पद्धति तथा सांख्यिकीय परिमाप विधि। परन्तु इस पद्धति की अपनी सीमायें है।

यहाँ पर आपको यह ध्यान रखना होगा कि लोक प्रशासन के अध्ययन में हमें वैज्ञानिक उपागम या दृष्टिकोण के प्रयोग से उतने परिशुद्ध परिणामों की अपेक्षा नहीं करनी चाहिए, जो हमें प्राकृतिक विज्ञानों से प्राप्त होते हैं। यहाँ उल्लेखनीय बात यह है कि लोक प्रशासन के अध्ययन को राजनीति विज्ञान, अर्थशास्त्र, आचारशास्त्र तथा मनोविज्ञान से अलग नहीं किया जा सकता।

2.4.2 व्यवहारवादी उपागम

लोक प्रशासन के अध्ययन में व्यवहारवादी उपागम इस विषय के परम्परागत उपागम के प्रति असंतोष के फलस्वरूप विकसित हुआ। यद्यपि इस उपागम का आरम्भ मानव सम्बन्ध आंदोलन के साथ ही 1930 तथा 1940 वाले दशक में हुआ, लेकिन द्वितीय विश्व युद्ध के बाद इसकी महत्ता काफी बढ गयी और उसने लोक प्रशासन के मुख्य उपागम का दर्जा प्राप्त कर लिया।

लोक प्रशासन के क्षेत्र में व्यवहारवादी उपागम को विकसित करने का मुख्य श्रेय हर्बट साइमन को जाता है। इसके अतिरिक्त पीटर एम0 ब्लान, में ट्रन, वेडनर, रिग्स, एलम, रावर्ट ए0 डॉहल आदि का नाम भी इसके समर्थकों में लिया जा सकता है। इस विषय पर शुरू में लिखी गयी पुस्तकों में साइमन की पुस्तक 'एडमिनिस्ट्रेटिव विहेवियर' सर्वाधिक महत्वपूर्ण है। इसके अतिरिक्त 1950 में साइमन

की पुस्तक 'एडमिनिस्ट्रेटिव विहेवियर' सर्वाधिक महत्वपूर्ण है। इसके अतिरिक्त 1950 में साइमन

तथा उसके दो सहयोगियों द्वारा लिखी गयी पुस्तक 'पब्लिक एडमिनिस्ट्रेशन' प्रकाशित होने के बाद इस उपागम का प्रभाव और बढ गया।

लोक प्रशासन के व्यवहारवादी दृष्टिकोण की निम्नलिखित विशेषताएँ हैं-

1. व्यवहारवादी उपागम का यह आग्रह है कि लोक प्रशासन का सम्बन्ध प्रशासन में संलग्न मनुष्यों के व्यक्तित्व तथा सामूहिक व्यवहार से होना चाहिए। व्यक्तिगत तथा सामूहिक इच्छा, आकांक्षा एवं मूल्य प्रशासन में व्यक्ति के व्यवहार को प्रभावित करते है, इसलिए प्रशासन की समुचित जानकारी के लिए मानवीय तत्व को समझना एवं ध्यान में रखना आवश्यक है। हर्बर्ट साइमन के मत में वास्तविक एवं अर्थपूर्ण प्रशासनिक अध्ययन के लिए लोक प्रशासन के विद्वानो को लोकनीति पर कम ध्यान देकर उन लोगों के व्यवहार पर ध्यान देना चाहिए जो लोक नीति को पारिभाषित करते है और इस सम्बन्ध में निर्णय लेते हैं।
2. यह उपागम संगठन के औपचारिक रूप पर ध्यान न देकर इसके वास्तविक कार्यकरण पर ध्यान देता है। इसके समर्थकों का ऐसा विश्वास हैं कि संगठन के वास्तविक कार्यकरण पर ध्यान देकर इस सम्बन्ध में कुछ सामान्य निष्कर्ष निकाले जा सकते हैं।
3. इसके अंतर्गत संगठन के सदस्यों के बीच अनौपचारिक सम्बन्धों एवं अनौपचारिक संचार प्रतिमानों पर अधिक बल दिया जाता है। परम्परागत उपागमों के अंतर्गत श्रेष्ठ पदाधिकारियो द्वारा जारी किये गये औपचारिक आदेश एवं सर्कुलर तथा नीचे के पदाधिकारियों द्वारा श्रेष्ठ पदाधिकारियों को प्रस्तुत की गयी रिपोर्ट ही दोनों प्रकार के पदाधिकारियो के बीच सम्बन्ध एवं संचार साधन थे, परन्तु व्यवहारवादी उपागम के अंतर्गत श्रेष्ठ पदाधिकारियों एवं अधीनस्थ पदाधिकारियों के बीच सम्पर्क एवं संचार के अनौपचारिक साधन भी उतने ही महत्वपूर्ण माने जाने लगे हैं।
4. यह उपागम परिमाणामात्मक पद्धति के इस्तेमाल पर बल देता है। प्राकृतिक विज्ञान की भाँति प्रयोगशाला तथा अन्य सांख्यिकी तरीकों के इस्तेमाल के माध्यम से यह निश्चित निष्कर्ष पर पहुँचने का प्रयास करता है। इस प्रकार यह पद्धति प्रशासकीय समस्याओं के अध्ययन एवं उनके समाधान के लिए वैज्ञानिक पद्धति पर बल देती है। यह पर्यवेक्षण, साक्षात्कार, सर्वेक्षण, प्रकरण पद्धति इत्यादि विधियों के प्रयोग को आवश्यक मानता है।
5. यह अंतर-अनुशासनात्मक दृष्टिकोण में विश्वास करता है। व्यवहारवादियों का मत है कि लोक प्रशासन का अध्ययन अन्य सामाजिक शास्त्रों से बिल्कुल पृथक ढंग से नहीं किया जा सकता क्योंकि मानव क्रियाओं के मूल में ऐसे अभिप्रेरक पाये जाते हैं, जिन्हें समाजशास्त्रीय, आर्थिक, राजनीतिक, तथा मनोवैज्ञानिक वातावरण से प्रेरणा मिलती है। अतः इसका अध्ययन तभी संभव है जब समाजशास्त्र, अर्थशास्त्र, राजनीतिशास्त्र तथा मनोविज्ञान जैसे सामाजिक शास्त्रों की सहायता ली जाय।

किया जाय तथा किन विषयों को नहीं।

12. लोक प्रशासन में परिमाणनीकरण तथा पर्यवेक्षण उस हद तक सम्भव नहीं है जिस हद तक यह प्राकृतिक विज्ञानों में सम्भव है।

उपर्युक्त कमियों के बावजूद व्यवहारवादी उपागम लोक प्रशासन का एक लोकप्रिय उपागम बन चुका है। इस उपागम की लोकप्रियता ने कई नई अध्ययन प्रणालियों के विकसित हो ने में सहायता पहुँचाई है।

2.4.3 पारिस्थितिकीय उपागम

इस उपागम का उद्भव तृतीय विश्व की प्रशासनिक समस्याओं के अध्ययन के संदर्भ में हुआ। द्वितीय विश्वयुद्ध के पश्चात एशिया, अफ्रीका तथा लैटिन अमेरिका के अनेक देश औपनिवेशिक शासन से मुक्त हुए। उनके समक्ष जन आंकाक्षाओं की पूर्ति हेतु राष्ट्र निर्माण तथा सामाजिक आर्थिक परिवर्तन की बड़ी चुनौती थी। पश्चिमी विद्वानों ने जो इन देशों में बहुत से देशों के सलाहकार के रूप में कार्य कर रहे थे, अनुभव किया कि पश्चिमी संगठनात्मक प्रतिमान तृतीय विश्व के समाजों में वास्तविकता की व्याख्या करने में असफल थे। इसी संदर्भ में पारिस्थितकीय दृष्टिकोण का विकास हुआ।

यह दृष्टिकोण इस मान्यता पर आधारित है कि प्रशासन एक निश्चित परिवेश या वातावरण में रहकर कार्य करता है। प्रशासन उस परिवेश को प्रभावित करता है तथा स्वयं उससे प्रभावित भी होता है। अतः प्रशासन को समझने के लिए दोनों के बीच की पारस्परिक क्रिया को समझना आवश्यक है।

'पारिस्थितिकीय' शब्द जीव विज्ञान से लिया गया है जो जीवों तथा उनके परिवेश के अर्न्तसंबंधों की व्याख्या करता है। जिस प्रकार एक पौंधे के विकास के लिए एक विशेष प्रकार की जलवायु मिट्टी, नमी तथा तापमान आदि की आवश्यकता होती है, उसी प्रकार किसी समाज का विकास उसके अपने इतिहास, आर्थिक संरचना, मूल्यों, राजनतिक व्यवस्था आदि से जुड़ा होता है। अतः लोक प्रशासन की प्रकृति तथा समस्याओं को समझने के लिए उस सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक पृष्ठभूमि को समझना आवश्यक है जिसमें प्रशासन कार्य करता है।

जे0एम0गॉस, राबर्ट ए0 डाहल तथा राबर्ट ए0 मर्टन ने लोक प्रशासन के अध्ययन में इस दृष्टिकोण की शुरूआत की थी, लेकिन इस दिशा में सबसे महत्वपूर्ण योगदान एफ0डब्ल्यू0रिग्स का रहा है।

रिग्स के अनुसार प्रत्येक समाज की अपनी कुछ विलक्षण विशेषताएँ होती है जो उसकी उप-व्यवस्थाओं को प्रभावित करती है। चूंकि पश्चिमी देशों का समाजिक-आर्थिक परिवेश तृतीय विश्व के देशों से भिन्न रहा है, इसलिए विकसित देशों के लिए निर्मित सिद्धान्त या प्रतिमान तृतीय विश्व के देशों में लागू नहीं होते।इसलिए रिग्स ने तृतीय विश्व के देशों के संदर्भ में प्रशासनिक व्यवस्थाओं के विश्लेषणात्मक ढॉंचे को विस्तृत किया है।

रिग्स ने वृहद स्तर पर मुख्य व्यवस्थाओं को श्रेणीबद्ध किया तथा उन श्रेणियों को प्रशासन जैसी सूक्ष्म या छोटी उप-व्यवस्थाओं पर लागू करने का प्रयास किया। उन्होंने अपने श्रेणीकरण के लिए व्यापक व्यवस्थाओं को लिया तथा विकासशील समाजों में परिवर्तन की व्याख्या करने के लिए तीन आदर्श रूपों- बहुकार्यात्मक, समपार्श्वीय तथा अल्पकार्यात्मक को विकसित किया। उनके अनुसार, एक बहुकार्यात्मक समाज में एक अकेला संगठन या संरचना बहुत से कार्य करती है। इसके विरूद्ध एक अल्पकार्यात्मक समाज में निश्चित कार्य करने के लिए अलग-अलग संरचनाएँ बनाई जाती है। परन्तु इन दोनों के बीच में अनेक ऐसे समाज हैं, जिनमें बहुकार्यात्मक तथा अल्पकार्यात्मक समाज दोनों की विशेषताएँ लगभग समान पाई जाती है। ऐसे समाजों को समपार्श्वीय कहा जाता है।

रिग्स इस बात पर बल देता है कि कोई भी समाज पूर्ण रूप से बहुकार्यात्मक या अल्पकार्यात्मक नहीं कहा जा सकता। सामान्यतः सभी समाज प्रकृति में संक्रमणकालीन होते हैं। प्रत्येक समाज चाहे वह बहुकार्यात्मक है या अल्पकार्यात्मक, उसका चरित्र विभिन्न संरचनाओ एवं उसके द्वारा किए जाने वाले कार्यों की प्रकृति पर निर्भर करता है।

अपने विश्लेषण में रिग्स ने बहुकार्यात्मक तथा अल्पकार्यात्मक प्रारूपों का विकासशील देशों के समपार्श्वीय वस्तुस्थिति की व्याख्या करने के साधन के रूप में प्रयोग किया है।

रिग्स के परिस्थितिकीय दृष्टिकोण की कई आधारों पर आलोचनाएँ की जाती है-

1. यह प्रारूप एक संतुलन प्रारूप है जो व्यवस्था को सुरक्षित रखने में तो सहायता देंगे परन्तु व्यवस्था में कोई परिवर्तन करने में नहीं ।यह सामाजिक परिवर्तन तथा विकास की प्रक्रिया के विश्लेषण में सहायक नहीं है।
2. विशेष समाजों में रिग्स के प्रारूपो को क्रियान्वित करने में मूल्यांकन की समस्या उत्पन्न

रूपों- बहुकार्यात्मक, समपार्श्वीय तथा अल्पकार्यात्मक को विकसित किया। उनके अनुसार, एक बहुकार्यात्मक समाज में एक अकेला संगठन या संरचना बहुत से कार्य करती है। इसके विरूद्ध एक अल्पकार्यात्मक समाज में निश्चित कार्य करने के लिए अलग-अलग संरचनाएँ बनाई जाती है। परन्तु इन दोनों के बीच में अनेक ऐसे समाज हैं, जिनमें बहुकार्यात्मक तथा अल्पकार्यात्मक समाज दोनों की विशेषताएँ लगभग समान पाई जाती है। ऐसे समाजों को समपार्श्वीय कहा जाता है।

रिग्स इस बात पर बल देता है कि कोई भी समाज पूर्ण रूप से बहुकार्यात्मक या अल्पकार्यात्मक नहीं कहा जा सकता। सामान्यतः सभी समाज प्रकृति में संक्रमणकालीन होते हैं। प्रत्येक समाज चाहे वह बहुकार्यात्मक है या अल्पकार्यात्मक, उसका चरित्र विभिन्न संरचनाओ एवं उसके द्वारा किए जाने वाले कार्यों की प्रकृति पर निर्भर करता है।

अपने विश्लेषण में रिग्स ने बहुकार्यात्मक तथा अल्पकार्यात्मक प्रारूपों का विकासशील देशों के समपार्श्वीय वस्तुस्थिति की व्याख्या करने के साधन के रूप में प्रयोग किया है।

रिग्स के परिस्थितिकीय दृष्टिकोण की कई आधारों पर आलोचनाएँ की जाती है-

1. यह प्रारूप एक संतुलन प्रारूप है जो व्यवस्था को सुरक्षित रखने में तो सहायता देंगे परन्तु व्यवस्था में कोई परिवर्तन करने में नहीं ।यह सामाजिक परिवर्तन तथा विकास की प्रक्रिया के विश्लेषण में सहायक नहीं है।
2. विशेष समाजों में रिग्स के प्रारूपो को क्रियान्वित करने में मूल्यांकन की समस्या उत्पन्न होती है। मूल्यांकन के अभाव में समपार्श्वीय या अल्पकार्यात्मक समाजों की पहचान कठिन हो जाती है। सत्य तो यह है कि रिग्स के प्रारूप कुछ मान्यताओं पर आधारित है। परन्तु किसी अनुभव परस्त प्रमाण के अभाव में इस प्रकार की मान्यताओं को चुनौती दी जा सकती है।
3. रिग्स ने एक समपार्श्वीय समाज के सकारात्मक चरित्र को इतना महत्व नहीं दिया जितना इसके नकारात्मक चरित्र को।
4. इस उपागम में कई ऐसे नये शब्दों का प्रयोग किया जाता है जिनके सही अर्थ को समझना मुश्किल है।
5. समाजों का बहुकार्यात्मक, समपार्श्वीय या अल्पकार्यात्मक समाजों के रूप में वर्गीकरण पूँजीवादी व्यवस्था में अंतर्निहित मूल्यों पर आधारित है।

उपर्युक्त आलोचनाओं के बावजूद यह कहा जा सकता है कि पारिस्थितिकीय दृष्टिकोण विषय सामग्री तथा विश्लेषण दोनों दृष्टि से एक समन्वित दृष्टिकोण है। यह विकासशील देशों की प्रशासनिक प्रक्रिया के परीक्षण में हमारी मदद करता है।

2.4.4 घटना या प्रकरण पद्धति

लोक प्रशासन की अध्ययन पद्धतियों में घटना या प्रकरण पद्धति एक अमेरिकी देन है। घटना या प्रकरण का अर्थ है- प्रशासन की कोई भी विशिष्ट समस्या जो किसी प्रशासकीय अधिकारी को हल करनी पड़ी हो तथा वास्तव में हल कर ली गयी हो। इस प्रकार की समस्या का अध्ययन करने के लिए घटना की परिस्थितियों का अभिलेख तैयार कर लिया जाता है। साथ ही यह ब्यौरा संग्रह किया जाता है कि निर्णय करने के लिए किन प्रक्रियाओं का आश्रय लिया गया और क्या कदम उठाये गये, तथा जो भी निर्णय लिया गया, उसका तार्किक आधार क्या था? इसके उपरान्त परिणामों के आधार पर निर्णय का मूल्यांकन किया जाता है।

1940 में संयुक्त राज्य अमेरिका की सामाजिक अनुसंधान परिषद की लोक प्रशासन समिति ने घटना अध्ययन प्रकाशित करने का कार्य आरम्भ किया। अब तक नीति निर्माण, पुनर्संगठन तथा ऐसे ही अन्य अनके समस्याओं से सम्बद्ध कई घटनाओं की अध्ययन-मालायें प्रकाशित की जा चुकी है।

इस पद्धति के अनुगामियों के मन में यह आशा है कि लोक प्रशासन के विभिन्न क्षेत्रों में पर्याप्त मात्रा में घटना अध्ययन किये जाने के उपरान्त प्रशासन के विषय में अनुभवसिद्ध सिद्धान्तों का प्रतिपादन सम्भव हो जायेगा तथा शायद यह भी मुमकिन हो जायेगा कि ये घटना अध्ययन न्यायिक प्रथाओं और दृष्टान्तों की भांति सही समाधान खोजने के काम में प्रशासक के लिए सहायक सिद्ध हो सके।

लेकिन इस पद्धति की भी अपनी सीमायें हैं। किसी घटना या प्रकरण विशेष के अध्ययन के आधार पर ही किसी सर्वमान्य या सर्वकालिक सिद्धान्त का प्रतिपादन संभव नहीं है। यहीं कारण है कि यह उपागम अभी तक लोक प्रशासन के अध्ययन का प्रमुख उपागम नहीं हो सका है।

अभ्यास प्रश्न- 2

1. वैज्ञानिक उपागम के प्रमुख प्रणेता कौन है?
2. वैज्ञानिक प्रबन्ध पर्यवेक्षण एवं अनुभव के विश्लेषण पर आधारित है। सत्य/असत्य

पूँजीवादी व्यवस्था में अंतर्निहित मूल्यों पर आधारित है।

उपर्युक्त आलोचनाओं के बावजूद यह कहा जा सकता है कि पारिस्थितिकीय दृष्टिकोण विषय सामग्री तथा विश्लेषण दोनों दृष्टि से एक समन्वित दृष्टिकोण है। यह विकासशील देशों की प्रशासनिक प्रक्रिया के परीक्षण में हमारी मदद करता है।

2.4.4 घटना या प्रकरण पद्धति

लोक प्रशासन की अध्ययन पद्धतियों में घटना या प्रकरण पद्धति एक अमेरिकी देन है। घटना या प्रकरण का अर्थ है- प्रशासन की कोई भी विशिष्ट समस्या जो किसी प्रशासकीय अधिकारी को हल करनी पड़ी हो तथा वास्तव में हल कर ली गयी हो। इस प्रकार की समस्या का अध्ययन करने के लिए घटना की परिस्थितियों का अभिलेख तैयार कर लिया जाता है। साथ ही यह ब्यौरा संग्रह किया जाता है कि निर्णय करने के लिए किन प्रक्रियाओं का आश्रय लिया गया और क्या कदम उठाये गये, तथा जो भी निर्णय लिया गया, उसका तार्किक आधार क्या था? इसके उपरान्त परिणामों के आधार पर निर्णय का मूल्यांकन किया जाता है।

1940 में संयुक्त राज्य अमेरिका की सामाजिक अनुसंधान परिषद की लोक प्रशासन समिति ने घटना अध्ययन प्रकाशित करने का कार्य आरम्भ किया। अब तक नीति निर्माण, पुनर्संगठन तथा ऐसे ही अन्य अनके समस्याओं से सम्बद्ध कई घटनाओं की अध्ययन-मालायें प्रकाशित की जा चुकी है।

इस पद्धति के अनुगामियों के मन में यह आशा है कि लोक प्रशासन के विभिन्न क्षेत्रों में पर्याप्त मात्रा में घटना अध्ययन किये जाने के उपरान्त प्रशासन के विषय में अनुभवसिद्ध सिद्धान्तों का प्रतिपादन सम्भव हो जायेगा तथा शायद यह भी मुमकिन हो जायेगा कि ये घटना अध्ययन न्यायिक प्रथाओं और दृष्टान्तों की भांति सही समाधान खोजने के काम में प्रशासक के लिए सहायक सिद्ध हो सके।

लेकिन इस पद्धति की भी अपनी सीमायें हैं। किसी घटना या प्रकरण विशेष के अध्ययन के आधार पर ही किसी सर्वमान्य या सर्वकालिक सिद्धान्त का प्रतिपादन संभव नहीं है। यहीं कारण है कि यह उपागम अभी तक लोक प्रशासन के अध्ययन का प्रमुख उपागम नहीं हो सका है।

अभ्यास प्रश्न- 2

1. वैज्ञानिक उपागम के प्रमुख प्रणेता कौन है?
2. वैज्ञानिक प्रबन्ध पर्यवेक्षण एवं अनुभव के विश्लेषण पर आधारित है। सत्य/असत्य
3. व्यवहारवादी उपागम संगठन के औपचारिक रूप पर ध्यान देता है। सत्य/असत्य
4. 'एडमिनिस्ट्रेटीव विहेवियर' नामक पुस्तक के रचयिता कौन है?
5. पारिस्थितिकीय उपागम का विकास किन प्रशासनिक समस्याओं के अध्ययन के संदर्भ में हुआ?
6. रिग्स के अनुसार सामान्यतः सभी समाज प्रकृति में संक्रमणकालीन होते हैं। सत्य/असत्य
7. घटना या प्रकरण पद्धति के आधार पर किसी सर्वकालिक या सर्वमान्य सिद्धान्त का प्रतिपादन संभव है। सत्य/असत्य

2.5 सारांश

उपर्युक्त विवेचनाओं से स्पष्ट है कि जहाँ परम्परागत रूप में लोक प्रशासन का अध्ययन दार्शनिक, वैधानिक, संस्थागत तथा ऐतिहासिक दृष्टिकोण से किया जाता रहा है, वहीं आधुनिक काल में इस विषय को वैज्ञानिक, व्यवहारवादी, पारिस्थितिकीय तथा घटना अध्ययन पद्धतियों के माध्यम से समझने का प्रयत्न किया गया है। लेकिन कोई भी अध्ययन पद्धति अपने आप में पूर्ण नहीं है। अतः लोक प्रशासन का अध्ययन भली प्रकार विभिन्न उपागमों के समन्वय से ही सम्भव है। वास्तव में इन उपागमों की एक दूसरे से पृथकता और विरोध नहीं है, अपितु वे एक दूसरे के पूरक एवं सहायक हैं।

2.6 शब्दावली

उपागम- इसे अभिगम या दृष्टिकोण भी कहा जाता है।

संरचना- व्यवहार का वह स्वरूप जो किसी सामाजिक प्रणाली की मानक विशेषता बन गया हो।

औपचारिक संगठन- ऐसा संगठन जिसमें रचना या संरचना पर बल दिया जाता है।

परिमाणात्मक पद्धति- ऐसी पद्धति जिसमें गणित एवं साख्यिकी की विधियों के प्रयोग पर बल दिया जाता है।

अंतर-अनुशासनात्मक- जिसमें एक विषय का ज्ञान अन्य विषयों के ज्ञान से संबंधित होता है।

2.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

अभ्यास प्रश्न- 1 1. दार्शनिक, वैधानिक, ऐतिहासिक, संस्थागत-संरचनात्मक 2. सत्य, 3. असत्य, 4. उपभाग 2.3.4 देखिए

इकाई- 3 लोक प्रशासन तथा निजी प्रशासन

इकाई की संरचना

3.1 प्रस्तावना
3.2 उद्देश्य
3.3 लोक प्रशासन तथा निजी प्रशासन में समानताएँ
3.4 लोक प्रशासन तथा निजी प्रशासन में अंतर
3.5 उदारीकरण के अंतर्गत लोक प्रशासन तथा निजी प्रशासन
3.6 सारांश
3.7 शब्दावली
3.8 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
3.9 संदर्भ ग्रन्थ-सूची
3.10 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री
3.11 निबंधात्मक प्रश्न

3.1 प्रस्तावना

इकाई 2 में आपको लोक प्रशासन के अध्ययन के विभिन्न दृष्टिकोणों से अवगत कराया गया। इस इकाई में हम आपको लोक प्रशासन तथा निजी प्रशासन के बीच अंतर को स्पष्ट करेंगे।

सामान्यतया प्रशासन को 'लोक प्रशासन' एवं 'निजी प्रशासन' में वर्गीकृत किया जाता है तथा यह माना जाता है कि कुछ समानताओं के बावजूद दोनों प्रकार के प्रशासन में मौलिक अंतर है, परन्तु कुछ ऐसे भी विचारक हैं, जो यह मानते है कि सभी प्रकार के प्रशासन एक से होते हैं और सबकी आधारभूत विशेषताएँ एक सी होती है। दूसरे शब्दों, में लोक प्रशासन एवं निजी प्रशासन में कोई मौलिक अंतर नहीं है। ऐसी स्थिति में आपके मन में स्वाभाविक रूप से यह प्रश्न उठ रहा होगा कि वास्तव में लोक प्रशासन एवं निजी प्रशासन एक जैसे हैं या दोनों में कुछ आधारभूत अंतर है? कुछ विद्वानों का मानना है कि इन दोनों प्रकार के प्रशासन में जो अंतर भी था वह उदारीकरण के इस युग में मिट चुका है। ऐसी स्थिति में इस दोनों प्रकार के प्रशासन को एक ही दृष्टि से देखा जाना चाहिए। अब आप यह जानने को उत्सुक होंगे कि उदारीकरण का 'लोक प्रशासन' एवं निजी प्रशासन के संबंधों पर क्या प्रभाव पड़ा है?

3.2 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के बाद आप-

- लोक प्रशासन तथा निजी प्रशासन की समानताओं को समझ सकेंगे।
- इनके बीच अंतर कर सकेंगे।

- उदारीकरण के अंतर्गत लोक प्रशासन तथा निजी प्रशासन के स्वरूपों पर प्रकाश डाल सकेंगे।

3.3 लोक प्रशासन एवं निजी प्रशासन में समानताएँ

हेनरी फेयोल, एम0पी0 फॉलेट तथा एल0 उर्विक जैसे कुछ विचारक हैं जो यह मानते हैं कि सभी प्रकार के प्रशासन एक से होते है और सबकी आधारभूत विशेषताएँ एक समान होती है। वे लोक और निजी प्रशासन में कोई अंतर नहीं मानते हैं। हेनरी फेयोल के शब्दों में ''अब हमारे समक्ष कोई प्रशासनिक विज्ञान नहीं है बल्कि केवल एक है जिसे लोक तथा निजी दोनों ही प्रशासनों के लिए समान रूप से भलीभांति प्रयोग किया जा सकता है।''

फेयोल के विचार से सहमत होते हुए और उस विचार को और अधिक स्पष्ट करते हुए उर्विक ने लिखा है कि ''यह बात गम्भीरतापूर्वक सोचना कठिन है कि पिछे से काम करने व्यक्तियों का एक

युग में मिट चुका है। ऐसी स्थिति में इस दोनों प्रकार के प्रशासन को एक ही दृष्टि से देखा जाना चाहिए। अब आप यह जानने को उत्सुक होंगे कि उदारीकरण का 'लोक प्रशासन' एवं निजी प्रशासन के संबंधों पर क्या प्रभाव पड़ा है?

3.2 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के बाद आप-

- लोक प्रशासन तथा निजी प्रशासन की समानताओं को समझ सकेंगे।
- इनके बीच अंतर कर सकेंगे।

- उदारीकरण के अंतर्गत लोक प्रशासन तथा निजी प्रशासन के स्वरूपों पर प्रकाश डाल सकेंगे।

3.3 लोक प्रशासन एवं निजी प्रशासन में समानताएँ

हेनरी फेयोल, एम0पी0 फॉलेट तथा एल0 उर्विक जैसे कुछ विचारक हैं जो यह मानते हैं कि सभी प्रकार के प्रशासन एक से होते है और सबकी आधारभूत विशेषताएँ एक समान होती है। वे लोक और निजी प्रशासन में कोई अंतर नहीं मानते हैं। हेनरी फेयोल के शब्दों में ''अब हमारे समक्ष कोई प्रशासनिक विज्ञान नहीं है बल्कि केवल एक है जिसे लोक तथा निजी दोनों ही प्रशासनों के लिए समान रूप से भलीभांति प्रयोग किया जा सकता है।''

फेयोल के विचार से सहमत होते हुए और उस विचार को और अधिक स्पष्ट करते हुए उर्विक ने लिखा है कि ''यह बात गम्भीरतापूर्वक सोचना कठिन है कि पिछे से काम करने व्यक्तियों का एक अलग जीव रसायन विज्ञान होता है, प्राध्यापकों का एक पृथक शरीर क्रिया ज्ञान तथा राजनीतिज्ञों का एक अलग रोग मनोविज्ञान होता है। वस्तुतः ये सब व्यक्तियों के लिए समान रूप से एक जैसे ही होते हैं।'' इसी प्रकार उर्विक के अनुसार, किसी संगठन के विशेष स्वरूप के प्रयोजनों के आधार पर प्रबन्ध प्रशासन का उपविभाजन करना गलत है।

इसमें कोई दो राय नहीं कि सार्वजनिक तथा निजी दोनों ही प्रशासनों में बहुत सी बातें समान हैं। दोनों में अंतर मात्रा का है, प्रकार का नहीं।

लोक तथा निजी दोनों प्रशासनों की समानताओं को निम्नलिखित रूपों में देखा जा सकता है-

1. प्रशासन में चाहे वह व्यक्तिगत हो या सार्वजनिक, समान रूप से संगठन की आवश्यकता होती है। यह संगठन लगभग समान सिद्धान्तों तथा गुणों पर आधारित होता है और प्रशासन का शरीर है। यदि मानवीय एवं भौतिक साधनों का उचित संगठन न किया जाए तो प्रशासन के लक्ष्यों की प्राप्ति नहीं की जा सकती।
2. दोनों प्रकार के प्रशासन की कार्यप्रणाली लगभग समान होती है। बड़े पैमाने के एक व्यावसायिक उद्यम का प्रशासन तथा एक बड़ी सरकारी सेवा का प्रशासन न्यूनाधिक रूप से एक ही रीति से सम्पन्न किया जाता है। दोनों प्रकार के प्रशासन में नियोजन, संगठन, आदेश, समन्वय तथा नियंत्रण की आवश्यकता होती है।
3. प्रबंध एवं संगठन सम्बन्धी अनके तकनीकें दोनों ही प्रकार के प्रशासन में समान रूप से अपनायी जाती है। फाइलें रखना, रिपोर्ट तैयार करना, नोटिंग तथा ड्राफ्टिंग करना, आदेश देना, हिसाब-किताब रखना, आंकड़े उपलब्ध करना आदि की पद्धति सार्वजनिक तथा निजी दोनों प्रकार के प्रशासनों में समान रूप से देखने को मिलती है।
4. दोनों प्रकार के प्रशासन के उत्तरदायित्व समान होते हैं। इसका कारण यह है कि पदाधिकारियों के ध्येय एक जैसे रहते हैं- अपने नियत कार्य क्षेत्र में काम करते हुए उपलब्ध

मानवीय एवं भौतिक सामग्री को इस प्रकार प्रयुक्त करना ताकि यथासम्भव अच्छे परिणाम प्राप्त किये जा सकें।

5. दोनों ही प्रकार के प्रशासन की सफलता के लिए जनसंपर्क आवश्यक है। प्रजातंत्र में लोक प्रशासन जनता के प्रति उत्तरदायी होता है। निजी प्रशासन में भी प्रचार द्वारा जनता से निकट सम्पर्क स्थापित किया जाता है। यदि प्रबन्धकों से जनता का विश्वास उठ जाता है तो व्यापार को हानि उठानी पड़ती है।
6. दोनों ही प्रकार का प्रशासन कर्मचारियों की योग्यता और दक्षता पर निर्भर करता है। ईमानदारी, कर्तव्यनिष्ठा, परिश्रम, कुशलता, बौद्धिक स्तर, नेतृत्व आदि के गुण दो नों ही प्रशासनों के कर्मचारियों के लिए समान रूप से आवश्यक होते हैं। अच्छे कुशल सरकारी कर्मचारियों के कार्यमुक्त होने पर निजी उद्योग पुनः नियुक्ति देते हैं।
7. आधुनिक युग में निजी प्रशासन के क्षेत्र में कर्मचारियों की नियुक्ति, पदोन्नति, वेतनक्रम,

मानवीय एवं भौतिक सामग्री को इस प्रकार प्रयुक्त करना ताकि यथासम्भव अच्छे परिणाम प्राप्त किये जा सकें।

5. दोनों ही प्रकार के प्रशासन की सफलता के लिए जनसंपर्क आवश्यक है। प्रजातंत्र में लोक प्रशासन जनता के प्रति उत्तरदायी होता है। निजी प्रशासन में भी प्रचार द्वारा जनता से निकट सम्पर्क स्थापित किया जाता है। यदि प्रबन्धकों से जनता का विश्वास उठ जाता है तो व्यापार को हानि उठानी पड़ती है।
6. दोनों ही प्रकार का प्रशासन कर्मचारियों की योग्यता और दक्षता पर निर्भर करता है। ईमानदारी, कर्तव्यनिष्ठा, परिश्रम, कुशलता, बौद्धिक स्तर, नेतृत्व आदि के गुण दो नों ही प्रशासनों के कर्मचारियों के लिए समान रूप से आवश्यक होते हैं। अच्छे कुशल सरकारी कर्मचारियों के कार्यमुक्त होने पर निजी उद्योग पुनः नियुक्ति देते हैं।
7. आधुनिक युग में निजी प्रशासन के क्षेत्र में कर्मचारियों की नियुक्ति, पदोन्नति, वेतनक्रम, सेवानिवृत्ति, पदच्युत करने के नियम तथा पेंशन आदि की वहीं व्यवस्था अपनायी जाती है जो सार्वजनिक क्षेत्र में अपनायी जाती है। नौकरशाही ढॉचा, प्रशासनिक ज्ञान, नियुक्ति की परीक्षा पद्धति, शिकायतों का निपटारा तथा अनुशासन के नियम आदि ने व्यक्तिगत सेवाओं को सरकारी सेवाओं के समान बना दिया है।
8. दोनों ही प्रकार के प्रशासन समान रूप से विकास की ओर अग्रसर होते हैं। यह विकास आन्तरिक संगठन की दृढता और कुशलता पर निर्भर करता है। इसके लिए नए-नए सिद्धान्त, तकनीकें एवं उपकरण अपनाये जाते हैं तथा प्रशासन को आधुनिकतम बनाया जाता है। वस्तुतः दोनों प्रकार के प्रशासन को अधिक क्षमताशील तथा उन्नतिशील बनाने के लिए अन्वेषण की आवश्यकता होती है। नवीन अन्वेषणों द्वारा नवीन सिद्धान्त, विधाएँ तथा उपकरण आदि उपलब्ध कराये जाते हैं, जिनके परिणामस्वरूप कार्यक्षमता में वृद्धि होती है।

इस प्रकार लोक प्रशासन एवं निजी प्रशासन कई दृष्टियों से समान है।

3.4 लोक प्रशासन तथा निजी प्रशासन में अंतर

कुछ समानताओं के वावजूद लोक प्रशासन तथा निजी प्रशासन एक दूसरे से भिन्न है। लोक प्रशासन में ऐसे अनेक लक्षण हमें देखने को मिलते है जो निजी प्रशासन में देखने में नहीं आते। लोक तथा निजी प्रशासन के बीच असमानताओं के पक्ष में साइमन, एपलबी, सरजोसिया स्टाम्प आदि ने अपने विचार प्रकट किए हैं।

हर्बर्ट साइमन के अनुसार ''सामान्य व्यक्तियों की दृष्टि में सार्वजनिक प्रशासन राजनीति से परिपूर्ण नौकरशाही और लालफीताशाही वाला होता है, जबकि निजी प्रशासन राजनीति शून्य और चुस्ती से काम करने वाला होता है।''

इसी प्रकार पॉल एच.ए. पिलबी ने लोक प्रशासन की यह विशेषता बतायी है कि इसमें निजी प्रशासन की अपेक्षा सार्वजनिक आलोचना और जॉच की अधिक सम्भावना होती है।

निजी तथा लोक प्रशासन के अंतर को निम्नलिखित रूप में स्पष्ट किया जा सकता है-

1. लोक प्रशासन तथा निजी प्रशासन में उद्देश्यगत भिन्नता होती है। लोक प्रशासन का मुख्य उददेश्य जनता की सेवा करना होता है, जबकि निजी प्रशासन मुख्य रूप से लाभ की भावना से प्रेरित होता है। लोक प्रशासन का दायित्व न केवल जनता को सुरक्षा प्रदान करना बल्कि उनके बहुमुखी विकास की दशायें भी उपलब्ध कराना है, जबकि निजी प्रशासन ऐसे किसी दायित्व से बंधा हुआ नहीं होता और अपने हर कार्य को लाभ हानि की दृष्टि से देखता है।

निजी तथा लोक प्रशासन के अंतर को निम्नलिखित रूप में स्पष्ट किया जा सकता है-

1. लोक प्रशासन तथा निजी प्रशासन में उद्देश्यगत भिन्नता होती है। लोक प्रशासन का मुख्य उददेश्य जनता की सेवा करना होता है, जबकि निजी प्रशासन मुख्य रूप से लाभ की भावना से प्रेरित होता है। लोक प्रशासन का दायित्व न केवल जनता को सुरक्षा प्रदान करना बल्कि उनके बहुमुखी विकास की दशायें भी उपलब्ध कराना है, जबकि निजी प्रशासन ऐसे किसी दायित्व से बंधा हुआ नहीं होता और अपने हर कार्य को लाभ हानि की दृष्टि से देखता है।
2. लोक प्रशासन का क्षेत्र एवं प्रभाव निजी प्रशासन की तुलना में व्यापक होता है। पाल एच0एपलबी के अनुसार ''संगठित शासन समाज में विद्यमान या गतिशील प्रत्येक वस्तु को किसी भी रूप में अपने में समाविष्ट कर लेता है, उससे टकराता है और उसे प्रभावित करता है।'' वर्तमान समय में राज्य ने अपने परम्परागत दृष्टिकोण का परित्याग करके आर्थिक क्षेत्र में भी प्रवेश कर लिया है। वह रोजगार प्रदान करने, उद्योग चलाने तथा निर्माण कार्य करने से लेकर सामाजिक सुरक्षा तक के समस्त कार्यों को पूर्ण करता है। निजी प्रशासन का क्षेत्र एवं प्रभाव सीमित है क्योंकि व्यक्तिगत प्रशासन का सम्बन्ध निजी संस्थानों के कार्य क्षेत्रों तक ही सीमित रहता है।
3. निजी प्रशासन की जनता के प्रति जबावदेही उस रूप में नहीं होती जिस रूप में लोक प्रशासन की। लोक प्रशासन को समाचार पत्रों तथा राजनीतिक दलों की आलोचनाओं का सामना करना पड़ता है। कोई भी विशिष्ट कदम उठाने से पूर्व प्रशासको को इस बात पर सावधानी के साथ विचार करना पडता है कि उस पर जनता की सम्भावित प्रतिक्रिया क्या होगी, उस पर व्यवस्थापिका तथा कार्यपालिका का भी नियन्त्रण रहता है। इस तरह जनता के प्रति उत्तरदायित्व लोक प्रशासन का एक ऐसा लक्षण है जो निजी प्रशासन में नहीं पाया जाता।
4. लोक प्रशासन के अंतर्गत व्यवहार में कुछ एकरूपता अथवा समानता पायी जाती है। इस प्रशासन में प्रशासको द्वारा बिना किसी प्रकार का पक्षपातपूर्ण अथवा विशिष्ट व्यवहार किए समाज के सभी सदस्यों को वस्तुएँ तथा सेवाएँ प्रदान की जाती है। निजी प्रशासन में पक्षपातपूर्ण अथवा विशिष्ट व्यवहार किया जा सकता है। दुकानदार उस व्यक्ति को उधार देने में संकोच नहीं करता जो उससे रोज सामान खरीदता है लेकिन एक डाक क्लर्क रोजाना पोस्टकार्ड खरीदने वाले को उधार नहीं दे सकता। निजी प्रशासन में उन व्यक्तियों के प्रति अगाध रूचि प्रकट की जाती है जिनसे व्यवसाय को अधिक से अधिक लाभ हो सकता है।
5. लोक प्रशासन द्वारा समाज को प्रदान की जाने वाली अनेक सेवायें एकाधिकारी प्रवृत्ति की होती है। जैसे- सेना, रेल आदि के कार्य निजी स्तर पर नहीं किए जा सकते। इन विषयों पर सरकार का पूर्ण नियंत्रण होता है। निजी प्रशासन में इस प्रकार का एकाधिकार नहीं पाया जाता। एक ही क्षेत्र में अनेक उद्यम होते हैं तथा इनमें परस्पर प्रतिस्पर्द्धा रहती है।

6. लोक प्रशासन की अनेक कियाओं में एक प्रकार की अनिवार्यता होती है जिसका निजी

सरकार का पूर्ण नियंत्रण होता है। निजी प्रशासन में इस प्रकार का एकाधिकार नहीं पाया जाता। एक ही क्षेत्र में अनेक उद्यम होते हैं तथा इनमें परस्पर प्रतिस्पर्द्धा रहती है।

6. लोक प्रशासन की अनेक क्रियाओं में एक प्रकार की अनिवार्यता होती है, जिसका निजी प्रशासन के क्षेत्र में अभाव होता है। देश की सुरक्षा, शांति और सुव्यवस्था, आदि ऐसे कार्य है जिनकी एक भी दिन अवहेलना नहीं की जा सकती।
7. लोक प्रशासन अपेक्षाकृत कानूनों एवं नियमों से अधिक नियमित होता है, जितना निजी प्रशासन नहीं होता है। इसमें कार्य संचालन की पद्धति, क्रय विक्रय तथा टेण्डर आदि के निश्चित नियम होते हैं, जिसकी अवहेलना नहीं की जा सकती। जबकि निजी प्रशासन में सुविधानुसार कार्य किया जाता है तथा प्रक्रिया एवं नियमों पर अधिक ध्यान नहीं दिया जाता। इसमें पद्धति की जटिलता की अपेक्षा प्राप्त हो ने वाले परिणाम का ध्यान रखा जाता है।
8. लोक प्रशासन में प्रशासकीय कार्य की गति धीमी होती है तथा प्रक्रियात्मक कठोरता के परिणामस्वरूप लापरवाही, भ्रष्टाचार, अदक्षता जैसी प्रशासनिक बुराईयां उत्पन्न होती है। इस प्रशासन में प्रश्नों के उत्तर विलम्ब से दिए जाते है तथा प्रशासकीय तंत्र में शिथिलता आ जाती है। इसके प्रतिकूल निजी प्रशासन के क्षेत्र में प्रशासकीय कार्य तीव्र गति से सम्पन्न होते हैं और निर्णय लेने में बिलम्ब नहीं होता।
9. सेवा सुरक्षा की दृष्टि से भी लोक प्रशासन निजी प्रशासन से भिन्न होता है। सरकारी सेवाओ में कर्मचारियों को सुरक्षा का भरोसा होता है। निजी सेवाओं में मनोवैज्ञानिक रूप से कर्मचारी अपने को असुरक्षित समझते हैं। आर्थिक नुकसान की स्थिति में निजी उद्यम या तो पूरी तरह बंद कर दिए जाते है या बहुत से कर्मचारियों की छटनी कर दी जाती है। ऐसी स्थिति में निजी प्रशासन के क्षेत्र में कार्यरत कर्मचारियों को अपनी सेवा के स्थायित्व का कोई आश्वासन नहीं होता है। लोक सेवा में एक बार प्रवेश पा लेने पर आसानी से किसी कर्मचारी को नौकरी से निकाला नहीं जा सकता।
10. लोक प्रशासन शासन की इच्छा का प्रतिनिधित्व करता है। इसमें शासन की बाध्यकारी शक्ति होती है। निजी प्रशासन में यह गुण नहीं होता है। यह न तो जनता का प्रतिनिधित्व करता है और न ही बाध्यकारी शक्ति रखता है।
11. लोक प्रशासन का स्वरूप राजनीतिक होता है। एपलबी का विचार है कि प्रशासन राजनीति है क्योंकि इसका ध्येय लोक हित है। उन्हीं के शब्दों में ''इन तथ्यों पर बल देना आवश्यक है कि लोक प्रिय राजनीतिक प्रक्रियाएँ जो प्रजातन्त्र का स्तर है, केवल शासकीय संगठनों द्वारा ही कार्य करती है और सभी शासकीय संगठन केवल प्रशासकीय ही नहीं है, वरन राजनीतिक जीवाणु भी है और उन्हें ऐसा होना भी चाहिए।'' निजी प्रशासन का स्वरूप राजनीतिक नहीं होता है। इसीलिए इसका विस्तार सीमित होता है तथा यह व्यक्तिगत हित का ध्यान रखता है।
12. लोक प्रशासन के विभिन्न विभागों में पारस्परिक सहयोग, सामंजस्य तथा समन्वय पाया जाता है। इसलिए वे एक दूसरे के साथ सहयोग की भावना से कार्य करते हैं। इसके विपरीत

4:20

47

12. लोक प्रशासन के विभिन्न विभागों में पारस्परिक सहयोग, सामंजस्य तथा समन्वय पाया जाता है। इसलिए वे एक दूसरे के साथ सहयोग की भावना से कार्य करते हैं। इसके विपरीत

निजी प्रशासन में प्रतिस्पर्द्धा, ईर्ष्या, द्वेष और प्रतियोगिता की भावना होती है। यहाँ विभिन्न प्रतिष्ठान एक दूसरे को पीछे छोड़ने तथा एक-दूसरे से आगे निकलने में लगे रहते हैं।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि लोक प्रशासन और निजी प्रशासन कई दृष्टियों से एक दूसरे से भिन्न है। लोक प्रशासन में जो लोक हित की भावना, जबावदेहिता, व्यवहार की एकरूपता, कानून और नियमों का अनुपालन, वित्त पर बाह्य नियन्त्रण इत्यादि विशेषताएँ पायी जाती है, वे निजी प्रशासन में नहीं पायी जाती है। परन्तु फिर भी लोक प्रशासन और निजी प्रशासन दो भिन्न विधाएँ नहीं हैं, वरन एक ही प्रशासन के दो भाग हैं। इनके बीच का अंतर मात्रात्मक है, गुणात्मक नहीं।

अभ्यास प्रश्न- 1

1. लोक प्रशासन तथा निजी प्रशासन दोनों में नियोजन एवं संगठन की आवश्यकता होती है। सत्य/असत्य
2. लोक प्रशासन तथा निजी प्रशासन में उद्देश्यगत भिन्नता होती है। सत्य/असत्य
3. लोक प्रशासन का क्षेत्र निजी प्रशासन की तुलना में संकुचित होता है। सत्य/असत्य
4. निजी प्रशासन की जनता के प्रति जबावदेहिता उस रूप में नहीं होती, जिस रूप में लोक प्रशासन की। सत्य/असत्य

3.5 उदारीकरण के अंतर्गत लोक प्रशासन एवं निजी प्रशासन

कतिपय विद्वानों का यह मानना है कि उदारीकरण एवं वैश्वीकरण के इस युग में लोक प्रशासन एवं निजी प्रशासन के मध्य संस्थागत विशिष्टतायें लगातार धुंधली पड़ती जा रही है। इनके मध्य सीमा रेखा अस्पष्ट तथा अवास्तविक है और अब तो बिल्कुल समाप्ति की ओर है। लेकिन दूसरी ओर अधिकांश विद्वानों का मानना है कि उदारीकरण एवं वैश्वीकरण के कारण लोक प्रशासन की भूमिका में थोडा परिवर्तन अवश्य हुआ है, लेकिन यह अब भी आधारभूत रूप से निजी प्रशासन से भिन्न है। लोक प्रशासन के क्षेत्र में राज्य बनाम बाजार चर्चा का एक प्रमुख विषय बन गया है। इसका प्रमुख कारण लगभग दो दशक पूर्व साम्यवादी देश सोवियत संघ का विघटन तथा उदारवाद को विश्वव्यापी स्वरूप धारण करना है। ऐसा माना जा रहा है कि विकासशील देशों के आर्थिक, राजनीतिक एवं प्रशासनिक विकास की बागडोर राज्य के हाथों से छूटती जा रही है। राज्य विकासशील देशों के नियोजनात्मक विकास के कार्यों में अपनी भूमिका सीमित करके नियामकीय कार्यों को बेहतर बनाने में लग गया है ताकि बाजार व्यवस्था बेहतर बनाई जा सके। राज्य को निजी उद्यमों की भांति बाजार प्रणाली में कूदना पड़ रहा है। परिणामस्वरूप विकासशील देशों में राज्य और बाजार में अंतर का प्रतिशत सिमटता जा रहा है। इस आधार पर कुछ लोगों का यह मानना है कि आने वाले समय में लोक प्रशासन की वे सभी विशिष्टतायें जो इसे निजी प्रशासन से अलग करती है बिल्कुल समाप्त हो जायेंगी।

इनमें कोई दो राय नहीं कि उदारीकरण एवं वैश्वीकरण के इस दौर में राज्य का सिकुड़न हो रहा है, और निजी क्षेत्र का विस्तार हो रहा है। सार्वजनिक क्षेत्र में घाटे में चल रहे उद्योगों का विनिवेशीकरण किया जा रहा है और निजी उद्यमियों को अधिक से अधिक पूँजी निवेश के लिए प्रोत्साहित किया

Edit Annotate Fill & Sign Convert All

4:20
47
Edit Annotate Fill & Sign Convert All

जा रहा है। शिक्षा एवं स्वास्थ्य जैसी आधारभूत सुविधायें प्रदान करना पहले राज्य का मुख्य दायित्व समझा जाता था, लेकिन अब इन क्षेत्रों में भी निजी पूँजी निवेश को बढावा दिया जा रहा है। अब लोक प्रशासन में भी निजी प्रशासन की तरह 'मितव्ययिता' तथा दक्षता को अपनाने तथा आधुनिक वैज्ञानिक प्रबन्धन तकनीक के अधिक से अधिक प्रयोग करने पर बल दिया जा रहा है। निजी प्रशासन की तरह लोक प्रशासन में भी कार्य सम्पादन की गुणवत्ता को बढाना एक प्रमुख उद्देश्य बन गया है। आज लोक प्रशासन प्रमुख नियोक्ता नहीं रह गया है और बड़े पैमाने पर निजी प्रशासन में रोजगार के अवसर सृजित हो रहे है। सार्वजनिक सुविधाएँ तथा सामाजिक सुरक्षा प्रदान करने के क्षेत्र में भी लोक प्रशासन की भूमिका सीमित हो गयी है। ऐसी स्थिति में यह प्रश्न उठना स्वाभाविक है कि क्या लोक प्रशासन एवं निजी प्रशासन के बीच के अंतर को समाप्त मान लेना चाहिए?

सच तो यह है कि उदारीकरण एवं वैश्वीकरण के इस दौर में लोक प्रशासन की भूमिका एवं इसके स्वरूप में कुछ परिवर्तन अवश्य हुआ है। लोक प्रशासन में धीरे-धीरे नियंत्रणों, नियमनों, लाइसेंस परमिट आदि को कम करने के प्रयास किये गये हैं तथा इसकी भूमिका एक 'नियामक' एवं 'सुविधाकारक' के रूप में महत्वपूर्ण बन गयी है।

लेकिन उदारीकरण एवं वैश्वीकरण के इस युग में भी लोक प्रशासन की कुछ ऐसी विशिष्टताएँ हैं, जो उसे निजी प्रशासन से अलग करती है-

1. 'जनहित संरक्षण' एवं 'लोक हित संरक्षण' आज भी लोक प्रशासन का मुख्य उद्देश्य है, जबकि निजी प्रशासन का मुख्य उददेश्य लाभ कमाना है। इसमें कोई दो राय नहीं कि शिक्षा, स्वास्थ्य, जीवन सुरक्षा बीमा इत्यादि कई ऐसी सेवायें हैं जो पहले लोक प्रशासन के कार्यक्षेत्र में ही आती थी, लेकिन आज निजी क्षेत्र बड़े पैमाने पर इन सेवाओं को प्रदान कर रहा है। लेकिन यहाँ भी इसका उददेश्य लाभ कमाना ही होता है या कम से कम किसी प्रकार का नुकसान उठाना नहीं होता है। परिणामस्वरूप निजी क्षेत्र में प्रदान की गयी शिक्षा या स्वास्थ्य सम्बन्धी सुविधाएँ सरकारी क्षेत्र की तुलना में काफी महंगी होती है जिसे समाज का निर्धन-वर्ग बहन नहीं कर सकता। ऐसी स्थिति में समाज के कमजोर वर्गों के हितों की रक्षा लोक प्रशासन के माध्यम से ही की जाती है। इस प्रकार लोक प्रशासन एवं निजी प्रशासन में उद्देश्य गत भिन्नता उदारीकरण के इस युग में भी बनी हुई है।
2. प्रभाव की दृष्टि से भी लोक प्रशासन एवं निजी प्रशासन के बीच का अंतर बना हुआ है। यद्यपि उदारीकरण में सरकार की भूमिका पहले से थोडी कम अवश्य हुई है, लेकिन एक 'नियामक' एवं 'नियंत्रक' के रूप में इसकी विशिष्टता अब भी बनी हुई है। जैसे-प्रदूषण फैलाने वाले उद्यमों पर रोक लगाना या निर्धारित मानदंडों का उल्लंघन करने वाले उद्यमों को दंडित करना इत्यादि लोक प्रशासन का ही दायित्व है। इसके अतिरिक्त आर्थिक उथल पुथल या मंदी के दौर में देश को संकट से उबारना या मंहगाई को नियंत्रित करना भी लोक प्रशासन का ही दायित्व माना जाता है। देश में शांति और सुव्यवस्था स्थापित करना या कमजोर वर्गों के हितों की सुरक्षा करना तो परंपरागत रूप लोक प्रशासन की विशिष्टता रही

है जो आज भी बनी हुई है।अतः उदारीकरण के इस युग में भी लोक प्रशासन का प्रभाव क्षेत्र निजी प्रशासन की तुलना में व्यापक है।

3. जबाबदेहिता की दृष्टि से भी लोक प्रशासन एवं निजी प्रशासन के बीच का अंतर बना हुआ

है जो आज भी बनी हुई है।अतः उदारीकरण के इस युग में भी लोक प्रशासन का प्रभाव क्षेत्र निजी प्रशासन की तुलना में व्यापक है।

3. जबाबदेहिता की दृष्टि से भी लोक प्रशासन एवं निजी प्रशासन के बीच का अंतर बना हुआ है। सार्वजनिक हो ने के कारण लोक प्रशासन जन जॉच के लिए खुला होता है, सरकारी अधिकारियों द्वारा की गयी एक छोटी सी गलती भी समाचार-पत्रों की सुर्खियों में प्रकाशित होती है। संसद एवं विधान सभाओ में हंगामा खडा हो जाता है। पुलिस जैसे संगठनों को भी अपने कार्यों का स्पष्टीकरण देना होता है और यह सिद्ध करना होता है कि उनके किसी भी कार्य से जनता में रोष नहीं फैला।इस प्रकार का व्यापक प्रचार निजी प्रशासन में नहीं होता और न उस पर जनता तथा समाचार पत्रों की निगाह ही रहती है।
4. उदारीकरण के इस युग में भी लोक प्रशासन के कार्यों में लचीलापन देखने को नहीं मिलता। कानूनों, नियमों एवं विनियमों से बंधे होने के कारण सरकारी कर्मचारियों द्वारा कई बार आवश्यक कार्यों के सम्पादन में भी अनावश्यक विलंब होता है। इसके विपरीत निजी प्रशासन इस तरह के कानूनी बंधनों से मुक्त रहते हैं। हर प्रकार के व्यवसाय के नियंत्रण के लिए सामान्य कानून जरूर होते है, किन्तु निजी फर्में बदलती हुई परिस्थितियों को देखते हुए अपने कार्यों में काफी लचीलापन अपनाती है। ऐसा करना केवल उन्हीं के लिए संभव है, क्योंकि उन पर लोक प्रशासन की तरह के कानूनी बंधन नहीं होते।
5. लोक प्रशासन में किसी भी प्रकार के पक्षपात अथवा भेदभावपूर्ण व्यवहार की अपेक्षा नहीं की जाती। अगर ऐसा होता है तो यह संसद विधानसभाओं या जनसंचार के माध्यमों में तीव्र आलोचना का विषय बन जाता है तथा संबंधिक प्रशासनिक अधिकारियों के विरूद्ध सख्त कार्रवाई की मांग की जाती है। लेकिन निजी प्रशासन में प्रतियोगी मांगों के कारण खुलकर भेदभाव होता है। उत्पादनों के चयन तथा कीमतें निश्चित करने में व्यापारिक प्रतिष्ठान भेदभाव और पक्षपात करते हैं, जो व्यापारिक संस्कृति का एक अंग बन गया है।
6. लोक प्रशासन का संगठन एक व्यापारिक अथवा निजी संगठन से बहुत अधिक जटिल होता है। प्रकाशन की प्रत्येक इकाई संबंधित लोक संगठनों के साथ जुड़ी होती है और उस इकाई को संबंधित इकाईयों के साथ कार्य करना होता है। इसके विपरीत निजी प्रशासन अधिक संक्षेपता, पृथकता और स्वायत्ता के साथ कार्य करता है।
7. उदारीकरण की प्रक्रिया ने निजी क्षेत्र में बड़े पैमाने पर रोजगार के अवसर सृजित किये हैं तथा उच्च तकनीकी अथवा व्यावसायिक शिक्षा प्राप्त युवकों को लोक प्रशासन की तुलना में अधिक आकर्षक वेतनमान एवं सुविधाएँ भी दी जा रही है, लेकिन फिर भी इनमें असुरक्षा का भाव बना रहता है, क्योंकि बाजार पर आधारित व्यापार अनिश्चितताओं से भरा होता है। इसके विपरीत लोक प्रशासन में कार्यरत कर्मचारियों में सुरक्षा का भाव होता है। अभी हाल ही में विश्वव्यापी आर्थिक मंदी के दौरान जिस प्रकार निजी क्षेत्र में बड़े पैमाने पर कर्मचारियों की छंटनी की गयी, इससे हमारे युवकों में लोक प्रशासन के अंतर्गत

कार्य करने का रूझान एक बार फिर से बढ गया है। अतः सेवा सुरक्षा की दृष्टि से भी उदारीकरण के इस युग में लोक प्रशासन की विशिष्टता बनी हुई है।

8. लोक प्रशासन राजनीतिक प्रभाव और दबाव से प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित होता है, जबकि निजी प्रशासन इससे मुक्त होता है।

कार्य करने का रूझान एक बार फिर से बढ गया है। अतः सेवा सुरक्षा की दृष्टि से भी उदारीकरण के इस युग में लोक प्रशासन की विशिष्टता बनी हुई है।

8. लोक प्रशासन राजनीतिक प्रभाव और दबाव से प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित होता है, जबकि निजी प्रशासन इससे मुक्त होता है।
9. लोक प्रशासन अत्यधिक जटिल सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक पर्यावरण में क्रियाशील होता है जिसके परिणामस्वरूप कार्यक्रम प्रभाव एवं संगठनात्मक कार्यशीलता का मापन कठिन हो जाता है। निजी प्रशासन में संगठनात्मक कार्यशीलता का मापन अपेक्षाकृत सरल होता है।
10. लोक प्रशासन के ऊपर राष्ट्र निर्माण और भावी समाज को दिशा देने जैसी जिम्मेदारियाँ होती हैं। इसलिए यह सामाजिक मूल्यों की स्थापना करने की ओर झुका होता है। निजी प्रशासन को सरकार द्वारा निर्धारित मार्गदर्शन का पालन करना होता है।

इस प्रकार उदारीकरण के युग में भी लोक प्रशासन एंव निजी प्रशासन के बीच अंतर बना हुआ है, यद्यपि यह अंतर पहले की अपेक्षा कम हुआ है।

अभ्यास प्रश्न-2

1. उदारीकरण के अंतर्गत प्रशासन में नियंत्रणों, नियमनों, लाइसेंस, परमिट आदि को कम करने के प्रयास किये गए हैं। सत्य/असत्य
2. उदारीकरण के युग में लोक प्रशासन की भूमिका एक सुविधाकारक की बन गई है। सत्य/असत्य
3. उदारीकरण के युग में लोक प्रशासन एवं निजी प्रशासन में कोई अंतर नहीं है। सत्य/असत्य
4. जनहित संरक्षण आज भी लोक प्रशासन का मुख्य उद्देश्य है। सत्य/असत्य

3.6 सारांश

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि लोक प्रशासन एवं निजी प्रशासन में कुछ समानतायें पायी जाती है, लेकिन फिर भी आधारभूत रूप से ये दोनों एक दूसरे से भिन्न है। दोनों ही प्रशासन में नियोजन, संगठन, आदेश, समन्वय तथा नियंत्रण की आवश्यकता होती है। प्रबन्ध की अनेक तकनीकें तथा कार्यप्रणाली भी समान होती है। लेकिन लोक प्रशासन का मुख्य उद्देश्य जनता की सेवा करना होता है, जबकि निजी प्रशासन लाभ की भावना से प्रेरित होता है। निजी प्रशासन की तुलना में लोक प्रशासन का क्षेत्र एवं प्रभाव व्यापक होता है। निजी प्रशासन की जबावदेहिता जनता के प्रति उस रूप में नहीं होती जिस रूप में लोक प्रशासन की होती है। लोक प्रशासन के कार्यों में प्रक्रियात्मक कठोरता पाई जाती है, लेकिन निजी प्रशासन के कार्यों में लचीलापन। प्रशासकीय कार्यों की गति लोक प्रशासन में निजी प्रशासन की तुलना में धीमी होती है। लोक प्रशासन में कार्यरत कर्मचारियों में सुरक्षा का भाव होता है, जबकि निजी प्रशासन में कार्यरत कर्मचारियों में असुरक्षा का। लोक प्रशासन राजनीतिक प्रभाव और दबाव से प्रभावित होता है, जबकि निजी प्रशासन इन प्रभावों से

मुक्त होता है। लोक प्रशासन में नैतिक एवं सामाजिक मूल्यों की प्रधानता निजी प्रशासन की तुलना में अधिक होती है।

उदारीकरण एवं वैश्वीकरण के परिणामस्वरूप लोक प्रशासन एवं निजी प्रशासन के बीच अंतर कुछ कम अवश्य हुआ है. लेकिन इनके मध्य की सीमा रेखा अब भी बनी हुई है। उदारीकरण के युग में भी

मुक्त होता है। लोक प्रशासन में नैतिक एवं सामाजिक मूल्यों की प्रधानता निजी प्रशासन की तुलना में अधिक होती है।

उदारीकरण एवं वैश्वीकरण के परिणामस्वरूप लोक प्रशासन एवं निजी प्रशासन के बीच अंतर कुछ कम अवश्य हुआ है, लेकिन इनके मध्य की सीमा रेखा अब भी बनी हुई है। उदारीकरण के युग में भी लोक प्रशासन जनहित से प्रेरित होता है, नाकि व्यापारिक दृष्टिकोण से। सार्वजनिकता की विशेषता इस प्रशासन को विशिष्टता की स्थिति प्रदान करती है और निजी प्रशासन से अलग करती है। उदारीकरण के अंतर्गत जहाँ कुछ क्षेत्रों में लोक प्रशासन की भूमिका में कटौती हुई है, वही दूसरी तरफ एक नियामक एवं सुविधाकारक के रूप में इसके लिए नई भूमिका का सृजन हुआ है।

3.7 शब्दावली

व्यावसायिक उद्यम- ऐसे उद्यम जिनका उददेश्य लाभ कमाना होता है।

नियामक- दूसरो के कार्यों पर निगरानी तथा नियंत्रण रखने वाला।

सुविधाकारक- प्रक्रियात्मक कठिनाईयो को दूर कर किसी कार्य को सरल या सुविधाजनक बनाने वाला।

उदारीकरण- उस प्रक्रिया को कहते हैं जिसमें आयात निर्यात तथा पूँजी निवेश को बढावा देने के लिए आर्थिक नियमों को लचीला बनाया जाता है।

वैश्वीकरण- आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक एवं तकनीकी रूप से विश्व के विभिन्न देशों में एकीकरण की प्रवृत्ति जिसमें विभिन्न देशों में व्यक्ति, वस्तु या मुद्रा के आवागमन पर लगी रोक कम कर दी जाती है या हटा ली जाती है।

3.8 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

अभ्यास प्रश्न- 1- 1. सत्य 2. सत्य 3. असत्य 4. सत्य

अभ्यास प्रश्न- 2- 1. सत्य 2. सत्य 3. असत्य4. सत्य

3.9. संदर्भ ग्रन्थ-सूची

1. अवस्थी एवं माहेश्वरी, (2008), लोक प्रशासन, लक्ष्मी नरायण अग्रवाल, आगरा।
2. निग्रो, फलिक्स ए एवं निग्रो लॉयड जी, (1980), मॉडर्न पब्लिक एडमिनिस्ट्रेशन, हार्पर और रो, न्यूयार्क।
3. व्हाइट, एल.डी.,(1968), इंट्रोडक्शन टू दी स्टडी ऑफ पब्लिक एडमिनिस्ट्रेशन, यूरेशिया पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली।
4. भट्टाचार्य, मोहित, (1998), न्यू हॉरिजन्स ऑफ पब्लिक एडमिनिस्टेशन, जवाहर पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स, नई दिल्ली।
5. अरौड़ा, रमेश के (संपादित) (1979), पर्सपेक्टिव इन एडमिनिस्ट्रेटिव थ्योरी, एसोसियेटेड पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली।

3.10 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री

1. बार्कर, आर.जे.एस.,1972, एडमिनिस्टे"टिव थ्योरी एण्ड पब्लिक एडमिनिस्ट्रेशन।
2. गॉर्टनर, हैरोल्ड एफ., (1977) एडमिनिस्ट्रेशन इन द पब्लिक सेक्टर।

3.11 निबंधात्मक प्रश्न

1. कुछ समानताओं के वावजूद लोक प्रशासन एवं निजी प्रशासन एक दूसरे से मौलिक रूप से

4:21

47

इकाई- 4 लोक प्रशासन का विकास, नवीन लोक प्रशासन

इकाई की संरचना

4.1 प्रस्तावना

4.2 उद्देश्य

4.3 लोक प्रशासन का विकास: प्राचीन काल

4.4 लोक प्रशासन का विकासः आधुनिक काल

- 4.4.1 प्रथम चरण (1887-1926)
- 4.4.2 द्वितीय चरण (1927-1937)
- 4.34.3 तृतीय चरण (1938-1947)
- 4.4.4 चतुर्थ चरण (1948-1970)
- 4.4.5. पंचम चरण (1971-1990)
- 4.4.6. षष्टम चरण (1991- अबतक)

4.5 नवीन लोक प्रशासन: पृष्ठभूमि

- 4.5.1 नवीन लोक प्रशासन की विशेषताएँ
- 4.5.2 नवीन लोक प्रशासन के लक्ष्य
  - 4.5.2.1 प्रासंगिकता
  - 4.5.2.2 मूल्य
  - 4.5.2.3 सामाजिक समता
  - 4.5.2.4 परिवर्तन

4.6 सारांश

4.7 शब्दावली

4.8 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

4.9 संदर्भ ग्रन्थ-सूची

4.10 सहायक/ उपयोगी पाठ्य सामग्री

4.11 निबंधात्मक प्रश्न

4.1 प्रस्तावना

लोक प्रशासन के अध्ययन से संबधित यह चौथी इकाई है। इससे पहले की इकाईयों के अध्ययन के बाद आप बता सकते हैं कि लोक प्रशासन क्या है, इसके अन्तर्गत किन विषयों का अध्ययन किया जाता है, इसके अध्ययन के परम्परागत एवं आधुनिक दृष्टिकोणों में क्या अन्तर है तथा यह किस प्रकार निजी प्रशासन के भिन्न है।

किसी भी विषय के वर्तमान स्वरूप को समझने के लिए उसके अतीत को समझना आवश्यक होता है। सैद्धान्तिक दृष्टि से यह अध्ययन के विषय को व्यापक संदर्भ में स्थापित करने में सहायक होता

है तथा व्यावहारिक दृष्टि से भूतकाल के ज्ञान का उपयोग वर्तमान में विषय के विकास की प्रक्रिया

Edit Annotate Fill & Sign Convert All

4:21
47

है तथा व्यावहारिक दृष्टि से भूतकाल के ज्ञान का उपयोग वर्तमान में विषय के विकास की प्रक्रिया को आगे बढने में सहायक होता है। प्रबन्ध की क्रिया के रूप में लोक प्रशासन उतना ही प्राचीन है जितना कि मनुष्य का सामाजिक जीवन, परन्तु अध्ययन की एक शाखा या विधा के रूप में इसका विधिवत विकास आधुनिक काल में ही संभव हो सका है। इस इकाई में लोक प्रशासन विषय के विकास के विभिन्न चरणों पर प्रकाश डाला गया है।

इस इकाई के अध्ययन के वाद आप यह स्पष्ट कर सकेंगे कि नवीन लोक प्रशासन किस प्रकार परम्परागत लोक प्रशासन से भिन्न है तथा इसकी क्या विशिष्टताएँ है।

4.2 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के उपरान्त आप-

- लोक प्रशासन के अध्ययन के विकास की विभिन्न अवस्थाओं को जान सकेंगे
- विभिन्न चरणों में विषय की प्रकृति में अंतर कर सकेंगे।
- नवीन लोक प्रशासन की विशेषताएँ एवं इसके महत्व के बारे सकेंगे।
- विकासशील समाजों के लिए नवीन लोक प्रशासन की प्रासंगिकता को स्पष्ट कर सकेंगे।

4.3 लोक प्रशासन का विकास: प्राचीन काल

एक क्रियाकलाप के रूप में लोक प्रशासन प्राचीन काल से ही अस्तित्व में रहा है। इसके विभिन्न सिद्धान्त हमें प्राचीन भारत के ग्रन्थ- रामायण, महाभारत तथा विभिन्न स्मृतियों के साथ-साथ मुख्यतः कौटिल्य के अर्थशास्त्र में मिलते हैं। अर्थशास्त्र राज्य के उद्देश्यों तथा उन उद्देश्यों की प्राप्ति के व्यावहारिक साधनों पर एक विशिष्ट तथा कुशल शोध प्रबन्ध माना जाता है। प्राचीन भारत में लोक प्रशासन पर यह सर्वाधिक महत्वपूर्ण ग्रन्थ है।

कौटिल्य ने प्रशासन की समस्याओं को समझने के लिए 'राजनैतिक अर्थनीति' का मार्ग अपनाया है। प्रशासन के सिद्धान्त मुख्यतः राजा, मंत्रियों आदि के कार्यों द्वारा इंगित किये गये हैं। अधिकार आज्ञापालन तथा अनुशासन के सिद्धान्तों को राज्य के प्रशासन का केन्द्र माना गया है। इस बात पर बल दिया गया है कि कार्य विभाजन, श्रेणीबद्ध पदानुक्रम तथा समन्वय जैसे सिद्धान्तों को आंतरिक संगठन की कार्यविधि में अपनाया जाना चाहिए। इसके अतिरिक्त संभवतः कौटिल्य ही ऐसे जाने माने विचारक थे जिन्होने प्रशासन में सांख्यिकी के महत्व को मान्यता दी। उनके चिंतन में जिस प्रकार राज्य के व्यापक दायित्वो- जैसे- अनाथ बच्चों, महिलाओं, वृद्धों कमजोर वर्गों इत्यादि का भरण पोषण करना तथा जनसामान्य के हितो के लिए कल्याणकारी योजनाये चलाना इत्यादि पर बल दिया गया है, इससे एक कल्याणकारी राज्य की झलक मिलती है जो बहुत कुछ आधुनिक लोक कल्याणकारी राज्य की तरह ही है।

यद्यपि कौटिल्य द्वारा वर्णित प्रशासकीय व्यवस्था राजतंत्रीय शासन के संदर्भ में थी जोकि आधुनिक लोकतांत्रिक समाजों की प्रशासनिक व्यवस्था से भिन्न है, फिर भी उसके द्वारा स्थापित लोक

प्रशासन ही परम्पराएँ महत्वपूर्ण है, क्योंकि ये लोक प्रशासन विज्ञान तथा शासन कला के व्यवस्थित

Edit Annotate Fill & Sign Convert All

प्रशासन ही परम्पराएँ महत्वपूर्ण है, क्योंकि ये लोक प्रशासन विज्ञान तथा शासन कला के व्यवस्थित विश्लेषण पर जोर देते हैं।

इसी प्रकार के विवेचन चीन में कन्फ्यूसियस द्वारा दिये गये उपदेशों, अरस्तू की महान रचना 'पॉलिटिक्स' हॉब्स की रचना लेवियाथन और मैकियावेली की रचना 'द प्रिन्स' में देखने को मिलते हैं।

4.4 लोक प्रशासन का विकास: आधुनिक काल

18वीं सदी में जर्मनी और आस्ट्रिया में कैमरलवाद का अभ्युदय हुआ जो सरकारी मामलों के व्यवस्थित प्रबन्धन से जुडा हुआ था। कैमरलवादियों ने लोक प्रशासन की संरचनाओं सिद्धान्तों और प्रक्रियाओं के विवरणात्मक अध्ययनों पर और लोक अधिकारियो के पेशेवर प्रशिक्षण पर बल दिया।

18वी सदी के अंतिम वर्षों में संभवतः अमेरिका में पहली बार लोक प्रशासन के अर्थ और उद्देश्य को हैमिल्टन की पुस्तक फेडरलिस्ट में पारिभाषित किया गया। चार्ल्स ज्यां बूनिन पहले व्यक्ति थे जिन्होंने अलग से लोक प्रशासन पर फ्रेन्च भाषा में पुस्तक की रचना की। परन्तु परम्परागत रूप से शोध के अलग क्षेत्र के रूप में लोक प्रशासन का विकास उन्नीसवीं सदी के अंतिम दशक में संयुक्त राज्य अमेरिका में हुआ।

आधुनिक काल में अध्ययन के एक विषय के रूप में लोक प्रशासन के विकास का इतिहास उतार-चढाव से भरा हुआ है जिसे निम्नलिखित चरणों में समझा जा सकता है-

4.4.1 प्रथम चरण (1887-1926)

विकास के प्रथम चरण में लोक प्रशासन एवं राजनीति के द्विभाजन पर बल दिया गया। वुडरो विल्सन, जिन्हें लोक प्रशासन का जनक माना जाता है, ने 1887 में एक निबन्ध प्रकाशित किया जिसका शीर्षक था 'दी स्टडी ऑफ एडमिनिस्ट्रेशन'। इस निबन्ध में उन्होंने राजनीति और प्रशासन को अलग-अलग बताया तथा यह भी कहा कि ''एक संविधान की रचना सरल है पर इसको चलाना बडा कठिन है।'' उन्होंने इस चलाने के क्षेत्र अर्थात लोक प्रशासन को एक स्वायत्त विषय बनाने पर बल दिया।

विल्सन के पश्चात फ्रैंक गुडनाउ ने 1900 में अपनी पुस्तक 'पॉलिटिक्स एण्ड एडमिनिस्ट्रेशन' में यह तर्क दिया कि राजनीति राज्य-इच्छा को प्रतिपादित करती है, जबकि प्रशासन इस इच्छा या नीतियो के क्रियान्वयन से सम्बन्धित है।इसलिए नीति निर्माण का कार्य नीति-क्रियान्वयन के कार्य से अलग है। नीति निर्माण का कार्य जनता द्वारा निर्वाचित व्यवस्थापिकाओं द्वारा सम्पादित किया जाना चाहिए तथा उसके क्रियान्वयन का कार्य राजनीतिक रूप से तटस्थ, योग्य एवं तकनीकी दक्षता से युक्त प्रशासनिक अधिकारियो द्वारा सम्पन्न किया जाना चाहिए।

1926 में एल0डी0 व्हाइट द्वारा 'इंट्रोडक्शन टू द स्टडी ऑफ पब्लिक एडमिनिस्ट्रेशन' नामक पुस्तक प्रकाशित की गयी जिसे लोक प्रशासन की प्रथम पाठय पुस्तक होने की मान्यता प्राप्त है। इस पुस्तक में व्हाइट ने राजनीति एवं प्रशासन के मध्य अंतर को स्वीकार करते हुए इस बात पर बल

दिया कि लोक प्रशासन का मुख्य लक्ष्य दक्षता एवं मितव्ययिता हैं। उनके अनुसार प्रशासन किसी विशिष्ट उद्देश्य की प्राप्ति के लिए बहुत से व्यक्तियों का निर्देशन, समन्वयीकरण तथा नियन्त्रण की कला है।

दिया कि लोक प्रशासन का मुख्य लक्ष्य दक्षता एवं मितव्ययिता हैं। उनके अनुसार प्रशासन किसी विशिष्ट उद्देश्य की प्राप्ति के लिए बहुत से व्यक्तियों का निर्देशन, समन्वयीकरण तथा नियन्त्रण की कला है।

4.4.2 द्वितीय चरण (1927-1937)

इस चरण में लोक प्रशासन के सैद्धान्तिक पहलू पर बल दिया गया। ऐसी आस्था व्यक्त की गयी कि प्रशासन के कुछ निश्चित सिद्धान्त हैं जिनका पता लगाकर इनके क्रियान्वयन को प्रोत्साहित किया जाना चाहिए। इस संदर्भ में 1927 में डब्लयू.एफ. विलोबी द्वारा लिखित पुस्तक 'प्रिसिंपल्स ऑफ पब्लिक एडमिनिस्ट्रेशन' अत्यन्त महत्वपूर्ण है। विलोवी इस बात में पूर्ण विश्वास रखते थे कि प्रशासन के अनेक सिद्धान्त हैं, जिन्हें कार्यान्वित करने से लोक प्रशासन में सुधार हो सकता है।

विलोबी के बाद अनेक विद्वानों ने उक्त संदर्भ में पुस्तकें लिखी जिनमें मेरी पार्कर फॉलेट, हेनरी फेयोल, मूने तथा रैले इत्यादि के नाम प्रमुख हैं।

1937 में लूथर गुलिक तथा उर्विक द्वारा लिखित ग्रन्थ 'पेपर्स ऑन दी साइंस ऑफ एडमिनिस्ट्रेशन' में इस बात पर बल दिया गया कि प्रशासन में सिद्धान्त होने के कारण यह एक विज्ञान है। गुलिक तथा उर्विक ने प्रशासन के सिद्धान्तों को 'पोस्डकॉर्ब' के रूप में व्यक्त किया।

इस चरण को लोक प्रशासन के विकास में स्वर्णिम युग माना जाता है।

4.4.3 तृतीय चरण (1938-1947)

यह चरण लोक प्रशासन के अध्ययन के विकास में विध्वंसकारी चरण माना जाता है, जिसमें प्रशासनिक सिद्धांतों को चुनौती दी गयी।

चेस्टर बनार्ड ने 1938 में अपनी पुस्तक 'दी फक्सन्स ऑफ एक्सक्यूटिव' में प्रशासन को एक सहकारी सामाजिक क्रिया बताते हुए इस बात पर बल दिया कि व्यक्तियों के आचारण प्रशासकीय कार्यों को विशेष रूप से प्रभावित करते हैं। बनार्ड के विचारों के फलस्वरूप लोक प्रशासन के सिद्धांतवादी दृष्टिकोण पर प्रहार शुरू हुआ।

1946 में हरबर्ट साइमन ने अपना एक लेख प्रकाशित किया जिसमें उन्होंने तथाकथित सिद्धान्तों का उपहास करते हुए उन्हे मुहावरे की संज्ञा दी। एक वर्ष बाद ही उन्होंने अपनी पुस्तक 'एडमिनिस्ट्रेटिव विहेवियर' में यह भलीभांति सिद्ध कर दिया कि प्रशासन में सिद्धान्त नाम की कोई चीज नहीं है।

1947 में रॉबर्ट ए0 डॉहल ने अपने एक लेख में सिद्धान्तवादियों की इस मान्यता का जोरदार खण्डन किया कि लोक प्रशासन एक विज्ञान है। उन्होंने लोक प्रशासन के सिद्धान्त की खोज में तीन बाधाओं का जिक्र किया, यथा- मूल्य सापेक्षता, मानव व्यवहार की विविधता, एवं सामाजिक ढॉचा।

इस प्रकार लोक प्रशासन का तीसरा चरण चुनौतियों एवं आलोचनाओं से परिपूर्ण रहा।

4.4.4 चतुर्थ चरण (1948-1970)

4.4.4 चतुर्थ चरण (1948-1970)

इस चरण में लोक प्रशासन अपनी 'पहचान के संकट' से जूझता रहा। विषय की सिद्धान्तवादी विचारधारा अविश्वसनीय प्रतीत हो ने लगी तथा इसका वैज्ञानिक स्वरूप भी वाद विवाद का विषय बन गया।

विषय को इस पहचान के संकट से उबारने के लिए मोटे तौर पर दो रास्ते अपनाये गये। कुछ विद्वान राजनीति शास्त्र की ओर मुखातिव हुए परन्तु राजनीतिशास्त्र में इस समय कुछ परिवर्तन आ रहे थे। लोक प्रशासन का राजनीति शास्त्र में जितना महत्व पहले था उसमें गिरावट आ गयी। ऐसी अवस्था में यह विषय सौतेलापन व अकेलापन अनुभव करने लगा।

दूसरे प्रयास में कुछ विद्वानों ने लोक प्रशासन को निजी प्रबन्धो के साथ जोड़कर प्रशासनिक विज्ञान बनाने का प्रयास किया। इन विद्वानों की यह मान्यता थी कि प्रशासन चाहे दफ्तरों में हो या कारखानों में, दोनों ही क्षेत्रों में यह प्रशासन है। इसी प्रयास के अंतर्गत 1956 में 'एडमिनिस्ट्रेटिव साइंस क्वार्टरली' नामक पत्रिका का प्रकाशन शुरू किया गया। इस प्रयास में भी लोक प्रशासन को अपना निजी स्वरूप गंवाना पडा तथा इसे प्रबन्ध विज्ञान की ओर मुखातिव रहना पड़ा।

इस तरह दोनों ही प्रयासों के वावजूद लोक प्रशासन के 'पहचान का संकट' बरकरार रहा।

4.4.5 पंचम चरण (1971-1990)

इस चरण में विषय के अंतर्विषयक दृष्टिकोण का विकास हुआ। चतुर्थ चरण के संकट ने लोक प्रशासन के विषय के विकास में अनेक चुनौतियॉ प्रस्तुत की थी, जो इसके लिए वरदान सिद्ध हुआ। अनेक शाखाओं के विज्ञान के समावेश से इसके विकास में सर्वांगीण उन्नति हुईराजनीतिशास्त्र के विद्यार्थी तो सदैव ही लोक प्रशासन में रूचि लेते रहे हैं, इसके साथ-साथ अर्थशास्त्र, मनोविज्ञान, समाजशास्त्र, मानवशास्त्र, आदि शास्त्रों के विद्वान भी इस विषय में रूचि लेने लगे। इन सबके फलस्वरूप लोक प्रशासन अंतर्विषयी बन गया। आज समाजशास्त्रों में यदि कोई सबसे अधिक अन्तर्विषयी है तो वह लोक प्रशासन ही है। 'तुलनात्मक लोक प्रशासन' तथा 'विकास प्रशासन' का प्रादुर्भाव भी विषय की नूतन प्रवृत्तियों को दर्शाता है। तुलनात्मक लोक प्रशासन विभिन्न संस्कृतियो में कार्यरत विभिन्न देशों की सार्वजनिक प्रशासनिक संस्थाओं के तुलनात्मक अध्ययन से सम्बन्धित है। विकास प्रशासन विकासशील देशों की सरकार के प्रशासन से सम्बन्धित है।

4.4.6 षष्टम चरण (1991- अब तक)

इस चरण में उदारीकरण एवं वैश्वीकरण के संदर्भ में लोक प्रशासन के अंतर्गत नवीन लोक प्रबन्धन की अवधारणा का विकास हुआ है। ऐसा माना जा रहा है कि लोक प्रशासन को लोक प्रबन्धन में बदला जाना चाहिए ताकि लोक निर्णय शीघ्रता एवं मितव्ययिता के साथ की जा सके। नवीन लोक प्रबन्धन लोक प्रशासन में कार्य सम्पादन को अधिक महत्व देता है। लोक प्रशासन में धीरे-धीरे नियन्त्रणें, नियमनों, लाइसेन्स परमिट आदि को कम करने के प्रयास किये गये है तथा प्रशासन को एक सुविधाकारक तंत्र के रूप में विकसित करने का प्रयत्न किया गया है। दूसरे शब्दों में पारंपरिक लोक प्रशासन को बाजारोन्मुख लोक प्रशासन में परिवर्तित करने पर बल दिया जा रहा है।

लोक प्रशासन को बाजारोन्मुख लोक प्रशासन में परिवर्तित करने पर बल दिया जा रहा है।

नवीन लोक प्रबन्धन का प्रयोग सर्वप्रथम 1991 में क्रिस्टोफर हुड के द्वारा किया गया। इसके उपरान्त इस दृष्टिकोण के विकास में गेराल्ड केइन, पी. हैगेट, सी. पौलिट, आर. रोड्स तथा एल. टेरी ने महत्वपूर्ण योगदान दिया है।

इस प्रकार, अध्ययन के एक विषय के रूप में लोक प्रशासन का स्वरूप बदलते हुए राजनीतिक, आर्थिक एवं सामाजिक परिवेश एवं विचारधाराओं के अनुरूप परिवर्तित, संशोधित एवं सवंर्द्धित होता रहा है।

वर्तमान समय में लोक प्रशासन के अध्ययन में राजनैतिक एंव नीति निर्धारण प्रक्रियाओं तथा लोक कार्यक्रमों के अध्ययन पर विशेष बल दिया जाने लगा है। 1971ई0 के पश्चात से नवीन लोक प्रशासन के विकास ने लोक प्रशासन के अध्ययन को समृद्ध किया है।

अभ्यास प्रश्न-1

1. एक क्रियाकलाप के रूप में लोक प्रशासन प्राचीन काल से ही अस्तित्व में रहा है। सत्य/असत्य
2. कौटिल्य ने प्रशासन की समस्याओं को समझने के लिए .... मार्ग अपनाया।
3. लोक प्रशासन का जनक किसे माना जाता है?
4. द्वितीय चरण (1927-1937) में लोक प्रशासन के .... पहलू पर बल दिया गया।

4.5 नवीन लोक प्रशासन: पृष्टभूमि

प्रायः देखा गया है कि उथल-पुथल, अस्थिरता एवं अव्यवस्था के कालों में नवीन विचारों का अभ्युदय होता है और वे परम्परागत शास्त्रों के विषयों को नवीन दिशा प्रदान करते है। यह बात लोक प्रशासन के सम्बन्ध में सत्य प्रतीत होती है। सातवें दशक में लोक प्रशासन की क्रिया प्रणाली के उद्देश्य के रूप में मितव्ययिता तथा कार्यकुशलता को अपर्याप्त एवं अपूर्ण पाया गया। इस दशक के अंतिम वर्षों में कुछ विद्वानों, विशेषकर युवा वर्ग, ने लोक प्रशासन में मूल्यों एवं नैतिकता पर विशेष बल देना प्रारम्भ कर दिया। यह कहा जाने लगा कि कार्यकुशलता ही समस्त लोक प्रशासन का लक्ष्य नहीं है, उसे मूल्योन्मुखी होना चाहिए। इस नवीन प्रवृत्ति को नवीन लोक प्रशासन की संज्ञा दी गयी।

वास्तव में लोक कल्याणकारी राज्य की अवधारणा को मूर्त रूप देने के प्रयत्नों ने लोक प्रशासन में अनेक नवीन प्रवृत्तियों को जन्म दिया है, जिन्हें नवीन लोक प्रशासन के नाम से जाना जाता है। इसके अंतर्गत नैतिकता एवं सामाजिक उपयोगिता पर बल दिया जाता है तथा इसका मुख्य उद्देश्य मानव कल्याण है।

नवीन लोक प्रशासन का आरम्भ 1967 के हनी प्रतिवेदन से समझा जा सकता है। प्रो0 जॉन सी. हनी का प्रतिवेदन अमेरिका में लोक प्रशासन का स्वतंत्र विषय के रूप में 'अध्ययन की सम्भावनाएँ' पर आधारित था। इस प्रतिवेदन में लोक प्रशासन को विस्तृत एवं व्यापक बनाने पर

जोर दिया गया। इस प्रतिवेदन का जहाँ एक तरफ स्वागत हुआ वही दूसरी तरफ इसको लेकर तीव्र विवाद भी उत्पन्न हुआ। प्रतिवेदन में जो मुद्दे उठाये गये थे, वे महत्वपूर्ण थे। परन्तु जो मुद्दे नहीं उठाये गये थे, वे उनसे भी अधिक महत्वपूर्ण थे। तत्कालीन सामाजिक समस्याओं के साथ सीधा सम्बन्ध स्थापित करने के लिए इस प्रतिवेदन में कोई ठोस सुझाव नहीं दिया गया था। फिर भी इस प्रतिवेदन ने अनेक विद्वानों को समाज में लोक प्रशासन की भूमिका पर गम्भीरता पूर्वक विचार करने के लिए प्रेरित किया।

हनी प्रतिवेदन के पश्चात 1967 में अमेरिका के फिलाडेल्फिया शहर में इसी विषय पर सम्मेलन आयोजित हुआ। सम्मेलन में जहाँ कुछ चिन्तकों ने लोक प्रशासन को महज बौद्धिक चिन्तन का केन्द्र माना तो दूसरों ने उसे मात्र प्रक्रिया माना। कुछ चिन्तकों ने इसे प्रशासन का तो कुछ ने समाज का अंग माना। वस्तुस्थिति यह रही कि इस सम्मेलन में भी लोक प्रशासन का नवीन स्वरूप निर्धारित नहीं किया जा सका।

1968 में आयोजित मिन्नोब्रुक सम्मेलन ने लोक प्रशासन की प्रकृति में क्रांतिकारी परिवर्तन ला दिया तथा यह नवीन लोक प्रशासन को स्थापित करने में मील का पत्थर सिद्ध हुआ। इस सम्मेलन में युवा विचारकों का प्रतिनिधित्व रहा तथा वे समस्त बिन्दुवाद विवाद की परिधि में आये जो बीते दो सम्मेलनों में शामिल नहीं किये गये थे। इस सम्मेलन में परम्परागत लोक प्रशासन के स्थान पर नवीन लोक प्रशासन नाम प्रकाश में आया।

1971 में फ्रेंक मेरीनी कृत 'टूवार्डस ए न्यू पब्लिक एडमिनिस्टेशन-मिन्नोब्रुक पर्सपेक्टिव' के प्रकाशन के साथ ही नवीन लोक प्रशासन को मान्यता प्राप्त हुई। इसी समय ड्वाइट वाल्डो की कृति ने नवीन लोक प्रशासन को और सशक्त बना दिया। उक्त दोनों पुस्तकों में नवीन लोक प्रशासन को सामाजिक समस्याओं के प्रति संवेदनशील माना गया है।

1980 व 1990 के दौरान विकसित राष्ट्रों को सार्वजनिक क्षेत्र प्रबन्धन में दृढता तथा अधिकारी प्रवृत्ति से नमनीयता की ओर मुड़ते देखा गया। इसके अतिरिक्त विभिन्न राष्ट्रों में आर्थिक, सामाजिक एवं राजनीतिक विकेन्द्रीकरण की चाह में लोक प्रशासन को सरकार व जनता के मध्य नवीन सम्बन्ध स्थापित करने पर बल दिया गया। इन तथ्यों का उल्लेख 1980 में प्रकाशित एच. जार्ज फ्रेडरिक्सन की पुस्तक 'पब्लिक एडमिनिस्ट्रेशन डेवलपमें न्ट एज ए डिसिप्लिन' में देखा जा सकता है।

1990 के दशक में भी नवीन लोक प्रशासन में नये प्रतिमान विकसित किये गये हैं, जिसे नवीन लोक प्रबन्धन बाजार आधारित लोक प्रशासन, उद्यमकर्ता शासन आदि का नाम दिया जा सकता है। इसके अंतर्गत दक्षता, मितव्ययिता तथा प्रभावदायकता पर बल दिया गया है।

इस प्रकार विगत चार दशकों में लोक प्रशासन अपने नवीन रूप में लोक प्रिय हो चला हैं।

4.5.1 नवीन लोक प्रशासन की विशेषताएँ

नवीन लोक प्रशासन की विचारधारा समयानुकुल तथा परम्परागत लोक प्रशासन में परिवर्तन की विचारधारा है। परम्परागत लोक प्रशासन में मूल्य निरपेक्षता, दक्षता, निष्पक्षता, कार्यकुशलता इत्यादि पर बल दिया गया था, जबकि नवीन लोक प्रशासन नैतिकता, उत्तरदायित्व, सामाजिक

सापेक्षता, नमनीय तटस्थता एवं प्रतिबद्ध प्रशासनिक प्रणाली पर बल देता है। यह माना जाता है कि

4:21
47

लोक प्रबन्धन बाजार आधारित लोक प्रशासन, उद्यमकता शासन आदि का नाम दिया जा सकता है।
इसके अंतर्गत दक्षता, मितव्ययिता तथा प्रभावदायकता पर बल दिया गया है।
इस प्रकार विगत चार दशकों में लोक प्रशासन अपने नवीन रूप में लोक प्रिय हो चला हैं।

4.5.1 नवीन लोक प्रशासन की विशेषताएँ

नवीन लोक प्रशासन की विचारधारा समयानुकुल तथा परम्परागत लोक प्रशासन में परिवर्तन की विचारधारा है। परम्परागत लोक प्रशासन में मूल्य निरपेक्षता, दक्षता, निष्पक्षता, कार्यकुशलता इत्यादि पर बल दिया गया था, जबकि नवीन लोक प्रशासन नैतिकता, उत्तरदायित्व, सामाजिक

सापेक्षता, नमनीय तटस्थता एवं प्रतिबद्ध प्रशासनिक प्रणाली पर बल देता है। यह माना जाता है कि नवीन लोक प्रशासन सामाजिक परिवर्तन का सर्वश्रेष्ठ संवाहक है तथा यह लक्ष्य अभिमुखी है।
नवीन लोक प्रशासन की प्रमुख विशेषताओं को निम्नलिखित रूपों में व्यक्त किया जा सकता है-

1. नवीन लोक प्रशासन परम्परागत लोक प्रशासन की 'यान्त्रिकता' एवं आर्थिक मानव की अवधारणा को स्वीकार नहीं करता है। यह मानवीय व्यवहार दृष्टिकोण एवं मानवीय सम्बन्धो का समर्थन करता है। दूसरे शब्दों में नवीन लोक प्रशासन मानवोन्मुख है।
2. यह राजनीति और प्रशासन के द्विभाजन तथा निजी एवं लोक प्रशासन के बीच के अंतर को अस्वीकार करता है। इस तरह का विभाजन अव्यहारिक, अप्रासंगिक तथा अवास्तविक माना जाता है।
3. यह सम्बन्धात्मक है और ग्राहक केन्द्रित दृष्टिकोण पर बल देता है। यह इस बात पर बल देता है कि नागरिक को यह बताने का अधिकार हो ना चाहिए कि उनको क्या, किस प्रकार और कब चाहिए। संक्षेप में लोक प्रशासन को नागरिकों की रूचि एवं आवश्यकतानुसार सेवा करनी चाहिए।
4. यह परिवर्तन तथा नवीनता का समर्थक है। परम्परागत दृष्टिकोणों को त्यागता हुआ और व्यवहारवादी दृष्टिकोण की दीवार को लांघता हुआ नवीन लोक प्रशासन उत्तर व्यवहारवादी दृष्टिकोण के निकट पहुँच चुका है। साथ ही इसमें पारिस्थिकी एवं पर्यावरण के अध्ययन पर अधिक बल दिया जाता है।
5. कल्याणकारी योजनाओं को शीघ्र एवं प्रभावी ढंग से लागू करने के लिए नवीन लोक प्रशासन परिवर्तनशील प्रशासनिक तंत्र, विकेन्द्रीकरण तथा प्रत्यायोजन का समर्थन करता है।
6. यह मूल्यों से परिपूर्ण प्रशासन, जनसहभागिता, उत्तरदायित्व तथा सामाजिक रूप से हितप्रद कार्यों पर बल देता है।

इस प्रकार नवीन लोक प्रशासन परम्परागत लोक प्रशासन से कई दृष्टियों में भिन्न है। कुछ विचारक इसे एक मौलिक विषय के रूप में प्रस्तुत करते है तो कुछ अन्य विचारक इसे परम्परागत प्रशासन का ही एक संशोधित रूप मानते हैं। कैम्पबेल के अनुसार नवीन लोक प्रशासन का विषय मौलिक अध्ययन की अपेक्षा पुनर्व्याख्या पर अधिक बल देता है। इसी प्रकार एक अन्य विचारक राबर्ट टी० गोलमब्यूस्की का कहना है कि नवीन लोक प्रशासन शब्दों में क्रांतिवाद का उद्-घोष करता है, किन्तु वास्तव में यह पुरातन सिद्धान्तों व तकनीकों की स्थिति है।
यथार्थ में अगर देखा जाये तो कैम्पबेल एवं गोलमब्यूस्की जैसे विचारक पूर्वाग्रह से ग्रसित प्रतीत होते हैं। इस संदर्भ में निग्रो एंव निग्रो के इस मत से सहमति व्यक्त की जा सकती है कि नवीन लोक प्रशासन के समर्थकों ने रचनात्मक वाद विवाद को प्रेरित किया है। उन्ही के शब्दों में ''जबसे नवीन लोक प्रशासन का उदय हुआ है मूल्यों और नैतिकता के प्रश्न लोक प्रशासन के मुख्य मुद्दे रहे हैं। नवीन लोक प्रशासन को जो लोग नयी बोतल में पुरानी शराब मानते है, वे लोक प्रशासन के

Edit Annotate Fill & Sign Convert All

4:21
47

होते हैं। इस संदर्भ में निग्रो एवं निग्रो के इस मत से सहमति व्यक्त की जा सकती है कि नवीन लोक प्रशासन के समर्थकों ने रचनात्मक वाद विवाद को प्रेरित किया है। उन्ही के शब्दों में "जबसे नवीन लोक प्रशासन का उदय हुआ है मूल्यों और नैतिकता के प्रश्न लोक प्रशासन के मुख्य मुद्दे रहे हैं। नवीन लोक प्रशासन को जो लोग नयी बोतल में पुरानी शराब मानते है, वे लोक प्रशासन के

विकास और परिवर्तन के पक्षधर नहीं माने जा सकते है, क्योंकि लोक प्रशासन के विचारों, व्यवहारों, कार्यशैली और तकनीकों में जो अर्वाचीन प्रवृत्तियॉ आयी हैं, उसे समय के बहाव के साथ स्वीकार करना होगा और इसके सकारात्मक उद्देश्यो को समर्थन देना होगा।"

4. 4.2 नवीन लोक प्रशासन के लक्ष्य

नवीन लोक प्रशासन के चार प्रमुख लक्ष्य है- प्रासंगिकता, मूल्य, सामाजिक समता तथा परिवर्तन। इनकी व्याख्या निम्नवत की जा सकती है-

4.5.2.1 प्रासंगिकता

नवीन लोक प्रशासन तथ्यों की प्रांसगिकता पर अत्यधिक बल देता है। यह परम्परागत लोक प्रशासन के लक्ष्यों- कार्यकुशलता एवं मितव्ययिता को समकालीन समाज की समस्याओं के समाधान हेतु अपर्याप्त मानता है और इस बात पर बल देता है कि लोक प्रशासन का ज्ञान एवं शोध समाज की आवश्यकता के संदर्भ में प्रासंगिक तथा संगतिपूर्ण होना चाहिए।

मिन्नोब्रुक सम्मेलन में प्रतिनिधियों ने नीति उन्मुख लोक प्रशासन की आवश्यकता पर अपना ध्यान केन्द्रित किया और इस बात पर प्रकाश डाला कि लोक प्रशासन को सभी प्रशासनिक कार्यों के राजनीतिक एवं आदर्श निहित अर्थों एवं तात्पर्यों पर स्पष्ट रूप से विचार करना चाहिए।

4.5.2.2 मूल्य

नवीन लोक प्रशासन आदर्शपरक है और मूल्यों पर आधारित अध्ययन को महत्व प्रदान करता है। यह परम्परागत लोक प्रशासन के मूल्यों को छिपाने की प्रवृत्ति तथा प्रक्रियात्मक तटस्थता को अस्वीकार करते हुए ऐसे शोध प्रयासों को अपनाने पर बल देता है, जो सामाजिक न्याय के अनुरूप हो। इसके अनुसार लोक प्रशासन को खुले रूप में उन्ही मूल्यों को अपनाना होगा जो समाज में उत्पन्न समस्याओं का समाधान कर सके तथा समाज के दुर्बल वर्गों के लिए सक्रिय कदम उठाये।

4.5.2.3 सामाजिक समता

नवीन लोक प्रशासन समाज की विषमता को दूर करके सामाजिक समानता एवं सामाजिक न्याय के सिद्धान्तों को अपनाने पर बल देता है, यह इस बात पर बल देता है कि लोक प्रशासन समाज के कमजोर एवं पिछडे वर्गों की आर्थिक, सामाजिक एवं मनोवैज्ञानिक पीडा को समझे और इस दिशा में समुचित कदम उठाये। फैडरिक्सन के शब्दों में "वह लोक प्रशासन जो परिवर्तन लाने में असफल है, जो अल्प संख्यको के अभावो को दूर करने का निरर्थक प्रयास करता है, संभवतः उसका प्रयोग अंततः उन्ही अल्प संख्यकों को कुचलने के लिए किया जायेगा।"

इस प्रकार नवीन लोक प्रशासन में जन कल्याण पर विशेष बल दिया गया है।

4.5.2.4 परिवर्तन

नवीन लोक प्रशासन यथास्थिति बनाये रखने का विरोधी है और सामाजिक परिवर्तन में विश्वास करता है। इसमें इस बात पर बल दिया जाता है कि परिवर्तनों के समर्थक लोक प्रशासन को केवल शक्तिशाली हित समूहों या दबाव समूहों के अधीन कार्य नहीं करना चाहिए, बल्कि इसे तो सम्पूर्ण सामाजिक आर्थिक तंत्र में परिवर्तन का अगुवा बनना चाहिए। इस प्रकार सामाजिक आर्थिक

Edit Annotate Fill & Sign Convert All

परिवर्तन के लिए एक सशक्त अभिमुखता ही नवीन लोक प्रशासन की अनिवार्य विषय वस्तु है। शीघ्र परिवर्तित वातावरण के अनुरूप संगठन के नवीन रूपों का विकास किया जाना चाहिए।

इस प्रकार कहा जा सकता है कि परम्परागत लोक प्रशासन की अपेक्षा नवीन लोक प्रशासन जातिगत कम और सार्वजनिक अधिक, वर्णनात्मक कम और आदेशात्मक अधिक, संस्था उन्मुख कम और जन प्रभाव उन्मुख अधिक तथा तटस्थ कम और आदर्शात्मक अधिक है। साथ ही इसमें वैज्ञानिक दृष्टिकोण अपनाने पर भी बल दिया गया है।

अभ्यास प्रश्न- 2

1. नवीन लोक प्रशासन का आरम्भ 1667 के हनी प्रतिवेदन से समझा जाता है। सत्य/असत्य
2. नवीन लोक प्रशासन राजनीति एवं प्रशासन के द्विभाजन को स्वीकार करता है। सत्य/असत्य
3. नवीन लोक प्रशासन के चार लक्ष्य लिखिए।

4.6 सारांश

शासन की एक क्रिया के रूप में लोक प्रशासन का अस्तित्व प्राचीन काल से ही देखने को मिलता है, लेकिन एक व्यवस्थित एवं स्वातत्व विषय के रूप में इसका अध्ययन उन्नीसवी सदी के अंतिम दशक में संयुक्त राज्य अमेरिका में प्रारम्भ हुआ। आधुनिक काल में विषय का विकास अनेक उतार चढाव से भरा हुआ हैं। प्रथम चरण(1887-1926) में लोक प्रशासन एवं राजनीति के पृथक्करण पर बल दिया गया। द्वितीय चरण(1927-1937) में प्रशासन के सैद्धान्तिक पहलू पर बल दिया गया। गुलिक व उर्विक ने प्रशासन के सिद्धान्तों को 'पोस्डकार्ब' के रूप में व्यक्त किया। तृतीय चरण(1938-1947) में प्रशासनिक सिद्धान्तों को चुनौती दी गयी। चतुर्थ चरण(1948-1970) में यह विषय पहचान के संकट से जूझता रहा। पंचम चरण(1971-1990) में इस विषय में अन्तःअनुशासनात्मक दृष्टिकोण का विकास हुआ तथा तुलनात्मक लोक प्रशासन एवं विकास प्रशासन की नूतन प्रवृत्तियों का प्रादुर्भाव हुआ। 1991 के बाद से उदारीकरण एवं वैश्वीकरण की प्रक्रिया के अंतर्गत लोक प्रशासन में 'नवीन लोक प्रबन्धन' की अवधारणा का विकास हुआ है। नवीन लोक प्रशासन की अवधारणा का अभ्युदय सत्तर के दशक के अंतिम वर्षों में लोक कल्याणकारी राज्य की अवधारणा को मूर्त रूप देने के प्रयत्नों में हुआ। यह परम्परागत लोक प्रशासन में परिवर्तन की विचारधारा हैं। मितव्ययिता एवं कार्यकुशलता के लक्ष्य को अपर्याप्त मानते हुए नवीन लोक प्रशासन नैतिकता एवं सामाजिक उपयोगिता पर बल देता है। यह मान्वोन्मुख एवं सम्बन्धात्मक हैं तथा मूल्यों से परिपूर्ण परिवर्तनशील प्रशासनिकतंत्र, विकेन्द्रीकरण, प्रत्यायोजन, जनसहभागिता, उत्तरदायित्व तथा सार्वजनिक रूप से हितकर कार्यों पर बल देता हैं।

4.7 शब्दावली

राजतंत्रीय शासन- शासन की वह प्रणाली जिसमें समस्त शक्तियाँ एक व्यक्ति के (राजा या रानी) हाथ में केन्द्रित होती हैं और सामान्यतया उसका पद वंशानुगत आधार पर निर्धारित होता है।

द्विभाजन- दो भागों में।

मूल्य सापेक्षता- मूल्यों अथवा आदर्शों के प्रति झुकाव अथवा उसमें आस्था व्यक्त करना।

इकाई- 5 लोक प्रशासन का अन्य सामाजिक विज्ञानों से संबंध

इकाई की संरचना

5.1 प्रस्तावना
5.2 उद्देश्य
5.3 लोक प्रशासन एवं राजनीति विज्ञान
5.4 लोक प्रशासन एवं समाजशास्त्र
5.5 लोक प्रशासन एवं अर्थशास्त्र
5.6 लोक प्रशासन एवं विधिशास्त्र
5.7 लोक प्रशासन एवं इतिहास
5.8 लोक प्रशासन एवं मनोविज्ञान
5.9 लोक प्रशासन एवं नीति शास्त्र
5.10 सारांश
5.11 शब्दावली
5.12 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
5.13 संदर्भ ग्रन्थ-सूची
5.14 सहायक/ उपयोगी सहायक पाठ्य सामग्री
5.15 निबंधात्मक प्रश्न

5.1 प्रस्तावना

गत इकाई में आपको अध्ययन के एक विषय के रूप में लोक प्रशासन के विकास से अवगत कराया गया इस इकाई में हम आपको लोक प्रशासन का अन्य सामाजिक विज्ञानों से संबंध पर प्रकाश डालेंगे।

व्यापक अर्थ में ज्ञान का स्वरूप एकीकृत होता है। यदि उसे विभिन्न शाखाओं में विभाजित किया जाता है तो ऐसा इसलिए कि उससे अध्ययन की सुगमता प्राप्त हो जाती है। कोई भी प्रशासनिक व्यवस्था एक विशेष राजनीतिक, सामाजिक एवं आर्थिक परिवेश में कार्य करती है। अतः प्रशासनिक व्यवस्था की संरचना एवं उसकी भूमिका को सही रूप में समझने के लिए उस राजनीतिक, सामाजिक एवं आर्थिक परिवेश को समझना आवश्यक है जिसमें वह कार्य करती है। इस हेतु संबंधित विषयों का ज्ञान आवश्यक है। दूसरे शब्दों में किसी सामाजिक व्यवस्था में लोक प्रशासन की भूमिका को समझने के लिए यह जानना आवश्यक है कि लोक प्रशासन का अन्य सामाजिक विज्ञानों से क्या सम्बन्ध है।

प्रस्तुत इकाई में दी गयी पाठ्य सामग्री को पढकर आप भलीभांति यह स्पष्ट कर सकेंगे कि लोक प्रशासन का विषय अन्य सामाजिक विज्ञानों से किस प्रकार सम्बन्धित है।

5.2 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के उपरान्त आप-

4:22
47

5.2 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के उपरान्त आप-

- यह समझ सकेंगे कि लोक प्रशासन किस प्रकार अन्य सामाजिक विज्ञानों से संबंधित है।
- यह स्पष्ट कर सकेंगे कि लोक प्रशासन किस प्रकार अपने राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक, कानूनी, ऐतिहासिक, मनोवैज्ञानिक एवं नैतिक परिवेशों से प्रभावित होता है और उन्हें भी प्रभावित करता है।
- ज्ञान के एकीकृत स्वरूप पर प्रकाश डाल सकेंगे।

5.3 लोक प्रशासन एवं राजनीति विज्ञान

लोक प्रशासन शायद ही किसी अन्य सामाजिक विज्ञान से इतना घनिष्ठ सम्बन्ध रखता है, जितना कि राजनीति विज्ञान से। राजनीति विज्ञान राज्य, सरकार तथा उन समस्त संस्थाओं का अध्ययन करता है, जिसके माध्यम से समाज के सदस्य अपने अधिकारों का प्रयोग करते हैं। यह व्यक्ति एवं राज्य के सम्बन्धों पर प्रकाश डालता है। प्राचीन काल से लेकर उन्नीसवीं सदी के लगभग आठवें दशक तक लोक प्रशासन, राजनीति विज्ञान का ही एक भाग माना जाता था। 1887 से संयुक्त राज्य अमेरिका में वुडरो विल्सन ने इसे राजनीति विज्ञान से पृथक करने का आह्वान किया। अपने लेख 'द स्टडी ऑफ एडमिनिस्ट्रेशन' में विल्सन ने लिखा कि 'प्रशासन राजनीति के विषय क्षेत्र के बाहर है। प्रशासकीय समस्यायें राजनीतिक समस्यायें नहीं होती। यद्यपि राजनीति प्रशासन के कार्यों का स्वरूप निर्धारित करती है, तथापि उसको यह अधिकार नहीं दिया जाना चाहिए कि वह प्रशासकीय पक्षों के बारे में हेर-फेर कर सके।' एक अन्य लेखक फ्रेंक गुडनाउ ने राजनीति विज्ञान एवं लोक प्रशासन के पृथक्करण का समर्थन करते हुए तर्क दिया कि 'राजनति राज्य-इच्छा को प्रतिपादित करती है, जबकि प्रशासन इस इच्छा या नीतियों के क्रियान्वयन से सम्बन्धित है।' उपर्युक्त मत संयुक्त राज्य अमेरिका की तत्कालीन प्रशासनिक व्यवस्था में सुधारों से प्रेरित थे, जो भ्रष्टाचार एवं अक्षमता से ग्रसित था। इसका उददेश्य उस 'इनामी पद्धति' की बुराइयों को दूर करना था, जिसके अनुसार सत्ता में आने वाला राजनैतिक दल प्रशासन चलाने के लिए अपने पूर्ववर्ती द्वारा नियुक्त अधिकारियों के स्थान पर अपने चुने अधिकारियों को नियुक्त करता था। लेकिन कालान्तर में यह महसूस किया जाने लगा कि लोक प्रशासन की राजनीति विज्ञान से पृथकता इस विषय के विकास को अवरूद्ध कर रही है। परिणामस्वरूप, समकालीन विद्वान लोक प्रशासन एवं राजनीति विज्ञान के एकीकरण का पुनः समर्थन करने लगे है।

यह एक सर्वविदित तथ्य है कि किसी भी देश की राजनीतिक व्यवस्था उसकी प्रशासकीय व्यवस्था से जुड़ी होती है। वास्तव में प्रशासकीय व्यवस्था का सृजन ही राजनीतिक व्यवस्था के माध्यम से होता है। ये दोनों एक-दूसरे को इस सीमा तक प्रभावित करते हैं कि कभी-कभी इनकी पृथक भूमिका निर्धारित करना कठिन होता है। डिमॉक ने सही कहा है कि 'लोक प्रशासन तथा राजनीति एक दूसरे से इतने घनिष्ठ हैं कि इन दोनों के मध्य कोई विभाजन रेखा नहीं खीची जा सकती। राजनीतिज्ञ जब

51

एक विभाग की अध्यक्षता करता है तो वह एक प्रशासक के रूप में कार्य करता है और जब वह सरकार में अपने दल की तस्वीस को सुधारने की कोशिश करता है, तो वह एक कुशल राजनीतिज्ञ के रूप में अपनी भूमिका का निर्वाह करता है।'

सैद्धान्तिक दृष्टि से यह कहा जा सकता है कि प्रशासन का कार्य वहाँ आरम्भ होता है, जहाँ राजनीतिज्ञ का कार्य समाप्त होता है। अर्थात राजनीतिज्ञ पहले नीतियों का निर्धारण करता है तथा

Edit Annotate Fill & Sign Convert All

एक विभाग की अध्यक्षता करता है तो वह एक प्रशासक के रूप में कार्य करता है और जब वह सरकार में अपने दल की तस्वीस को सुधारने की कोशिश करता है, तो वह एक कुशल राजनीतिज्ञ के रूप में अपनी भूमिका का निर्वाह करता है।'

सैद्धान्तिक दृष्टि से यह कहा जा सकता है कि प्रशासन का कार्य वहाँ आरम्भ होता है, जहाँ राजनीतिज्ञ का कार्य समाप्त होता है। अर्थात राजनीतिज्ञ पहले नीतियों का निर्धारण करता है तथा उसके बाद उन नीतियों को क्रियान्वित करने का दायित्व प्रशासक का होता है। लेकिन व्यावहारिक स्थिति तो यह है कि नीतियों के निर्धारण में भी प्रशासक वर्ग महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। मंत्री जन प्रतिनिधि होते हैं,अपने विभाग के विशेषज्ञ नहीं। वे आते-जाते रहते हैं, स्थायी रूप से नहीं रहते। ऐसी स्थिति में उन्हें विशेषज्ञ प्रशासकों के सलाह पर निर्भर रहना पड़ता है। वरिष्ठ प्रशासक मंत्रियों को आवश्यक ऑकड़े, जानकारी तथा सलाह देकर नीति-निर्माण की प्रक्रिया में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

वास्तव में अगर देखा जाय तो राजनीति की सफलता प्रशासकीय कार्यकुशलता पर और प्रशासकीय सफलता स्थायी राजनीति तथा स्वरूप पथ-प्रदर्शन पर आधारित है। दूसरे शब्दों में, राजनीति के बिना प्रशासन तथा प्रशासन के बिना राजनीति अपूर्ण है। विभिन्न देशों की राजनीतिक व्यवस्थायें भिन्न-भिन्न प्रकार की होती है जो उनके प्रशासन की प्रकृति और स्वरूप को प्रभावित करती है। ऐसी स्थिति में राजनीतिक व्यवस्था को समझे बिना प्रशासनिक व्यवस्था को समझना मुश्किल है। उदाहरणस्वरूप, एक लोकतांत्रिक शासन-व्यवस्था में प्रशासनिक कर्मचारियों से यह अपेक्षा की जाती है कि वे अपने राजनीतिक स्वामी के आदेशों का पालन करें। ऐसी स्थिति में मैक्स वेबर द्वारा प्रतिपादित 'नौकरशाही की तटस्थता' की अवधारणा सही नहीं रहती है। इसी प्रकार साम्यवादी देशों या विकासशील देशों में लोक प्रशासन एक विशेष प्रकार की भूमिका निभाता है। अतः संबंधित देशों में लोक प्रशासन की भूमिका को समझने के लिए उन देशों की राजनीतिक व्यवस्था को समझना होगा।

राजनीति विज्ञान तथा लोक प्रशासन दोनों में अध्ययन के कुछ सामान्य क्षेत्र पाये जाते हैं, जैसे- तुलनात्मक संविधान, स्थानीय शासन, लोक नीति इत्यादि। इसके अतिरिक्त दोनों विषयों के शोधकर्ताओं की पद्धतियों एवं तकनीकों में भी बहुत कुछ समानता देखने को मिलती है।

इस प्रकार, यह कहा जा सकता है कि लोक प्रशासन का राजनीति विज्ञान से निकट संबंध है। सैद्धान्तिक रूप से राजनीति एवं प्रशासन में भले ही भिन्नता हो, लेकिन व्यावहारिक दृष्टि से इन्हें पृथक करना मुश्किल है। लेसली लिपसन ने ठीक ही कहा है कि "सरकार के कार्यों के मध्य पूर्ण विभाजन की कोई रेखा खींचना असम्भव है। सरकार निरन्तर गति से चलने वाली एक प्रक्रिया है। व्यवस्थापन उसकी एक मंजिल है, और प्रशासन दूसरी। दोनों एक दूसरे से मिली हुई है और कुछ बिन्दुओं पर उनमें अंतर कर पाना मुश्किल है।" वास्तव में राजनीति एवं प्रशासन एक-दूसरे के पूरक हैं और उन्हें एक ही सिक्के का दो पहलू माना जा सकता है।

अभ्यास प्रश्न-1

1. प्राचीन काल से लेकर उन्नीसवीं सदी के लगभग आठवें दशक तक लोक प्रशासन

4:22

अभ्यास प्रश्न-1

1. प्राचीन काल से लेकर उन्नीसवीं सदी के लगभग आठवें दशक तक लोक प्रशासन राजनीति विज्ञान का ही एक भाग माना जाता था। सत्य / असत्य
2. .... ने लोक प्रशासन को राजनीति विज्ञान से पृथक करने का आह्वान किया।

5.4 लोक प्रशासन एवं समाजशास्त्र

समाजशास्त्र सामाजिक संरचनाओं, प्रक्रियाओं, रीति-रिवाजों, परम्पराओं इत्यादि का क्रमबद्ध अध्ययन करता है। एक सामाजिक प्राणी के रूप में यह व्यक्ति के समस्त क्रियाओं से सम्बन्धित है। लोक प्रशासन भी समाज की एक प्रक्रिया है। जहाँ एक तरफ सामाजिक परिवेश लोक प्रशासन की संरचना एवं भूमिका को प्रभावित करता है, वहीं दूसरी तरफ लोक प्रशासन भी कई बार सामाजिक परिवेश को प्रभावित करता है। विशेषकर उन परम्परागत समाजों में जो वर्गीय, जातिगत एवं धार्मिक प्रतिबद्धताओं से ग्रसित है और जहाँ पर्याप्त सामाजिक आर्थिक विषमताएँ विद्यमान हैं, लोक प्रशासन का अध्ययन बिना सामाजिक परिवेश को दृष्टिगत किए किया जाना सम्भव नहीं है। रिग्स एवं प्रेस्थस जैसे विद्वानों ने इसी उददेश्य से लोक प्रशासन के अध्ययन में 'पारिस्थिकीय दृष्टिकोण' विकसित किया है।

प्रत्येक समाज कुछ विशेष लक्ष्यों, मूल्यों एवं विश्वासों से सम्बन्धित होता है। समाज का एक अंग होने के नाते लोक प्रशासन भी उन्हीं लक्ष्यों, मूल्यों एवं विश्वासों से सम्बन्धित होता है। इस प्रकार इनमें पारस्परिक सम्बद्धता होती है। समाजशास्त्र का सम्बन्ध विभिन्न प्रकार के समूहों के व्यवहारों एवं उन तरीकों के अध्ययन से है जिनसे कि समूह मनुष्य के कार्यों एवं मूल्य प्रवृत्तियों को प्रभावित करते हैं। प्रशासन एक सहकारी प्रयास है जिसमें बहुत सारे लोग किन्हीं लक्ष्यों की प्राप्ति में संलग्न होते हैं। प्रशासक वर्ग स्वयं अपने आप में एक समूह है जिसे ''नौकरशाही'' कहा जाता है और जिसकी एक विशिष्ट पहचान होती है। यह समूह अपने सामाजिक वातावरण को प्रभावित करता है और स्वयं इससे प्रभावित भी होता है। ऐसी स्थिति में प्रशासक वर्ग के लिए विभिन्न सामाजिक समूहों, उनके व्यवहारों एवं सामाजिक जीवन को प्रभावित करने वाले विभिन्न कारकों की जानकारी आवश्यक है जोकि उन्हें समाजशास्त्र ही उपलब्ध कराता है।

प्रशासन की समस्याओं को समझने के लिए केवल व्यक्ति को समझना ही पर्याप्त नहीं है, अपितु उस वातावरण को भी समझना आवश्यक है, जिसके अंतर्गत वह निवास करता है। उदाहरणस्वरूप- अपराधों को रोकना एक प्रमुख प्रशासनिक समस्या है, लेकिन ऐसी समस्या का जड़ से उन्मूलन तब तक संभव नहीं है, जब तक कि उन सामाजिक आर्थिक कारणों का पता नहीं लगा लिया जाता, जिसके कारण बड़े पैमाने पर समाज में अपराध की प्रवृत्तियाँ उत्पन्न होती है। यहाँ पर समाजशास्त्र लोक प्रशासन की मदद करता है। बहुत से व्यक्ति मजबूरीवश अपराध करते हैं और उनमें सुधरने की प्रवृत्ति होती है। अतः ऐसे व्यक्तियों के प्रति एक मानवीय दृष्टिकोण अपनाये जाने की जरूरत होती है। समाजशास्त्र प्रशासकों में इस तरह के मानवीय दृष्टिकोण विकसित करने में सहायता प्रदान करता

Edit Annotate Fill & Sign Convert All

वातावरण को भी समझना आवश्यक है, जिसके अंतर्गत वह निवास करता है। उदाहरणस्वरूप- अपराधों को रोकना एक प्रमुख प्रशासनिक समस्या है, लेकिन ऐसी समस्या का जड़ से उन्मूलन तब तक संभव नहीं है, जब तक कि उन सामाजिक आर्थिक कारणों का पता नहीं लगा लिया जाता, जिसके कारण बड़े पैमाने पर समाज में अपराध की प्रवृत्तियॉं उत्पन्न होती है। यहॉं पर समाजशास्त्र लोक प्रशासन की मदद करता है। बहुत से व्यक्ति मजबूरीवश अपराध करते हैं और उनमें सुधरने की प्रवृत्ति होती है। अतः ऐसे व्यक्तियों के प्रति एक मानवीय दृष्टिकोण अपनाये जाने की जरूरत होती है। समाजशास्त्र प्रशासकों में इस तरह के मानवीय दृष्टिकोण विकसित करने में सहायता प्रदान करता

है। इसी से प्रेरित होकर जेल व्यवस्था में कई प्रकार के सुधार किए गए हैं और अपराधियों को समाजोपयोगी बनाने हेतु अनेक प्रकार की योजनायें चलाई जाती है।

आधुनिक लोक कल्याणकारी राज्यों के अंतर्गत लोक प्रशासन का कार्य केवल कानून एवं व्यवस्था को बनाए रखने या कर वसूलने तक ही सीमित नहीं है, बल्कि व्यापक सामाजिक हित में विभिन्न प्रकार की कल्याणकारी योजनाओं को लागू करने से भी सम्बन्धित है। किसी योजना का सफल कार्यान्वयन इस बात पर निर्भर करता है कि प्रशासक उस योजना के निहितार्थ सामाजिक मूल्यों एवं उददेश्यों के प्रति कितनी आस्था या प्रतिबद्धता रखते हैं। लोक प्रशासन में 'प्रतिबद्ध नौकरशाही' की अवधारणा का विकास इसी संदर्भ में हुआ है। यहॉं समाजशास्त्र किसी नीतिगत फैसले के सामाजिक निहितार्थ को समझने में लोक प्रशासन की मदद करता है।

लोक प्रशासन की परंपरागत अवधारणा में मानव व्यवहार को स्थिर मानकर प्रशासन की संरचनाओं को अधिक महत्व दिया गया था। लेकिन समकालीन सिद्धांतवादी मानव व्यवहार को गतिशील मानते हुए यह जानने में उत्सुकता रखते हैं कि किसी विशेष परिस्थिति में प्रशासक द्वारा कोई विशेष निर्णय क्यों लिया गया। इस तरह के शोध हेतु प्रशासको की सामाजिक पृष्ठभूमि का ज्ञान आवश्यक होता है जिसे प्राप्त करने के लिए समाजशास्त्र द्वारा विकसित साधनों का प्रयोग किया जा सकता है। विशेषकर आधुनिक काल में लोक प्रशासन में ऐसे शोध की प्रवृत्ति बढी है जिसमें बड़े पैमाने पर समाजशास्त्र द्वारा विकसित प्रतिमानों का प्रयोग किया जा रहा है।

मैक्स बेवर जैसे समाजशास्त्री द्वारा प्रस्तुत 'नौकरशाही का सिद्धान्त' लोक प्रशासन का एक चर्चित सिद्धान्त है जिसने कई विद्वानों को प्रभावित किया है। इसके अतिरिक्त पदस्थिति, वर्ग, सत्ता इत्यादि पर किए गए समाजशास्त्र के कुछ हाल के शोधकार्यों ने लोक प्रशासन के अध्ययन को समृद्ध करने में सहायता दी है।

इस प्रकार, लोक प्रशासन एवं समाजशास्त्र एक दूसरे से घनिष्ठ रूप से संबंधित है।

अभ्यास प्रश्न- 2

1. सामाजिक परिवेश लोक प्रशासन की संरचना को प्रभावित नहीं करता है। सत्य/ असत्य
2. प्रशासक वर्ग अपने आप में एक समूह है जिसे .... कहा जाता है।

5.5 लोक प्रशासन एवं अर्थशास्त्र

लोक प्रशासन एवं अर्थशास्त्र की निकटता प्राचीनकाल से ही देखने को मिलती है। कौटिल्य का ग्रन्थ 'अर्थशास्त्र' न केवल प्रशासन की कला पर एक महत्वपूर्ण ग्रन्थ है बल्कि अर्थशास्त्र का भी संदर्भ ग्रन्थ है। कई मामलों में यह ग्रन्थ लोक प्रशासन एवं अर्थशास्त्र के निकट संबंधों को दर्शाता है।

लोक-कल्याणकारी राज्य की अवधारणा ने लोक प्रशासन एवं अर्थशास्त्र की घनिष्ठता को और भी बढा दिया है। आज के संदर्भ में प्रशासक के लिए यह अत्यन्त आवश्यक है कि उसे आर्थिक समस्याओं के बारे में पर्याप्त समझदारी है। वस्तुतः प्रत्येक प्रशासकीय नीति का मूल्यांकन उसके आर्थिक परिणामों के आधार पर ही किया जाता है। यही कारण है कि विभिन्न दबाव समूह अपने अपने आर्थिक हितों के संरक्षणों के लिए प्रशासन को प्रभावित करने का प्रयत्न करते हैं। स्पष्टतः

अपने आर्थिक हितों के संरक्षणों के लिए प्रशासन को प्रभावित करने का प्रयत्न करते हैं। स्पष्टतः

आर्थिक समस्याओं से अवगत न होने की स्थिति में प्रशासक अपने उत्तरदायित्वों का सही तरीके से निर्वाह नहीं कर सकते।

नवीन आर्थिक विचार प्रशासन के संगठन और उसकी रीतियों को महत्वपूर्ण ढंग से प्रभावित करते रहे हैं। व्यावसायिक क्षेत्र में राज्य के प्रवेश के फलस्वरूप नये प्रकार के प्रशासकीय संगठन- सार्वजनिक निगम का उदय हुआ है। आज प्रशासकों के नियंत्रण में बीमा कम्पनियों के प्रबन्ध बैकिंग, कृषि से सम्बन्धित समस्याओं का निपटारा आदि है। इस प्रकार आर्थिक मामलों में सरकारी क्षेत्र की भूमिका निरन्तर बढती रही है जिसने लोक प्रशासन में अर्थशास्त्र के ज्ञान की महत्ता को बढा दिया है। यहीं कारण है कि हमारे देश में 'भारतीय आर्थिक सेवा' का अलग से गठन किया गया है। इस प्रकार अर्थशास्त्र तथा लोक प्रशासन में घनिष्ठ सम्बन्ध है। यदि लोक प्रशासन अर्थशास्त्र को संगठन प्रदान करता है तो अर्थशास्त्र, प्रशासन को संगठन के लिए धन के स्रोत प्रदान करता है। इन दो नों की घनिष्ठता निम्नलिखित रूप से स्पष्ट की जा सकती है-

1. एक आर्थिक प्रश्न भी है और यह लोक प्रशासन का विषय भी है।
2. बजट का सम्बन्ध लोक प्रशासन तथा अर्थशास्त्र दोनों से ही है।
3. उद्योगों का राष्टीयकरण केवल एक आर्थिक प्रश्न ही नहीं है, यह लोक प्रशासन का गम्भीर विषय भी है।
4. उत्पादन के साधनों में परिवर्तन के साथ समाज में परिवर्तन होता है और जिसके फलस्वरूप हमारी प्रशासकीय व्यवस्था भी बदल जाती है।
5. राष्ट्र की आर्थिक व्यवस्था प्रशासन की कार्यकुशलता पर अबलम्बित है।
6. नियोजन अर्थशास्त्र तथा लोक प्रशासन दोनों से सम्बन्धित है।
7. अर्थशास्त्र का 'सांख्यिकी विभाग' लोक प्रशासन के संगठन का महत्वपूर्ण विभाग है।
8. सामान्य नीतियों के निर्धारण पर आर्थिक परिस्थितियों का प्रभाव पडता हैं
9. सरकारी तथा सार्वजनिक निगम, उद्योग-धन्धों की व्यवस्था, श्रमिक समस्या, मुद्रा, अधिकोषण आदि का सम्बन्ध लोक प्रशासन तथा अर्थशास्त्र दोनों से है।

इस प्रकार स्पष्ट है कि लोक प्रशासन का अर्थशास्त्र के साथ निकट सम्बन्ध है।

5.6 लोक प्रशासन एवं विधि शास्त्र

विधि या कानून सत्ता द्वारा आरोपित आचार विचार के वे नियम है जिसका पालन करना अनिवार्य होता है और जिसका उल्लंघन करने पर व्यक्ति दंड का भागी होता है। नियमों को लागू करने का कार्य प्रशासन का होता है। अतः लोक प्रशासन एंव विधिशास्त्र एक दूसरे से सम्बन्धित है।

लोक प्रशासन का संचालन देश की विधियों द्वारा निर्धारित सीमाओं के अंतर्गत होता है। प्रशासक कोई ऐसा कार्य नहीं कर सकता जो विधि के प्रतिकूल हो, भले ही अन्य आधारों पर वह विवेकपूर्ण क्यों न प्रतीत होता हो। यथार्थ में लोक प्रशासन को विधि के दाहिनी ओर रहना होता है। दूसरे शब्दों में इसका अर्थ है कि वह न केवल ऐसे कार्य करे जिनसे विधियों का उल्लंघन न हो, अपितु ऐसे कार्य करे जिनके लिए कानून अनुमति प्रदान करता हो। लोक प्रशासन एंव निजी प्रशासन में इसी आधार

लोक प्रशासन का संचालन देश की विधियों द्वारा निर्धारित सीमाओं के अंतर्गत होता है। प्रशासक कोई ऐसा कार्य नहीं कर सकता जो विधि के प्रतिकूल हो, भले ही अन्य आधारों पर वह विवेकपूर्ण क्यों न प्रतीत होता हो। यथार्थ में लोक प्रशासन को विधि के दाहिनी ओर रहना होता है। दूसरे शब्दों में इसका अर्थ है कि वह न केवल ऐसे कार्य करे जिनसे विधियों का उल्लंघन न हो, अपितु ऐसे कार्य करे जिनके लिए कानून अनुमति प्रदान करता हो। लोक प्रशासन एंव निजी प्रशासन में इसी आधार

पर अंतर किया जाता है कि निजी प्रशासन वैधानिक सत्ता की मर्यादा को उस रूप में स्वीकार नहीं करता है जिस रूप में लोक प्रशासन करता है। यद्यपि कानून प्रशासन को पर्याप्त' स्वविवेकपूर्ण शक्तियॉं' भी प्रदान करता है, परन्तु स्वविवेक का प्रयोग भी स्वेच्छाचारी तरीके से नहीं किया जा सकता।

अधिकांश विधियों में सार्वजनिक नीतियों की अभिव्यक्ति होती है, जिसे क्रियान्वित करना प्रशासन का मुख्य दायित्व है। विल्सन के शब्दों में "लोक प्रशासन सार्वजनिक विधि के व्यवस्थित तथा विस्तृत कार्यान्वयन के अतिरिक्त और कुछ नहीं है।" इस निकट सम्बन्ध के कारण ही कई देशों में लोक प्रशासन को मुख्यतः सार्वजनिक विधि की एक शाखा के रूप में ही मान्यता प्राप्त है। यहां उल्लेखनीय बात यह है कि प्रशासन की भूमिका केवल विधियों के क्रियान्वयन तक ही सीमित नहीं है, बल्कि विधियों के निर्माण से भी इसका घनिष्ठ सम्बन्ध है। अधिकांश विधेयकों की उत्पत्ति प्रशासकीय विभागों में ही होती है।

प्रशासन के उत्तरदायित्व को वहन करने के क्षेत्र में विधि एक बहुत बड़ा साधन है। प्रशासन के अनाधिकृत कार्यों तथा वैधानिक सत्ता के उल्लंघन को न्यायालय विधियों के अनुसार ठीक कर लेते है। इसके अतिरिक्त विधि के आधार पर प्रशासकों को नागरिकों के अधिकारों का अतिक्रमण करने से रोका जा सकता है। एक बड़ी सीमा तक विधि की मौलिक धारणाओं की रचना को प्रभावित करती है। वस्तुतः इसी आधार पर हम उन विधियों के औचित्य की व्याख्या कर सकते हैं, जिनके द्वारा समाज के कमजोर वर्गों के लोंगो को शासन द्वारा संरक्षण प्रदान किया जाता है।

प्रशासन के विरूद्ध जॉंच करने वाले अधिकारी 'ओमबुड्समैन' (भारतीय रूप लोकपाल एवं लोकायुक्त) का अध्ययन लोक प्रशासन के अंतर्गत जन शिकायतों को दूर करने वाली संस्था के रूप में किया जाता है। इस प्रकार की संस्थाओं का अध्ययन विधिशास्त्र तथा लोक प्रशासन के बीच बढते हुए सम्बन्धों को प्रदर्शित करता है। इसके अतिरिक्त, प्रत्यायोजित विधायन, प्रशासनिक न्यायाधिकरण का गठन, कार्य निष्पादन जैसे कुछ विषयों का अध्ययन लोक प्रशासन तथा विधिशास्त्र दोनों विषयों में किया जाता है। निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि लोक प्रशासन का विधिशास्त्र से भी घनिष्ठ सम्बन्ध है।

5.7 लोक प्रशासन एवं इतिहास

इतिहास सामाजिक विज्ञान की वह शाखा है जो हमें भूतकाल की जानकारी उपलब्ध कराता है। लोक प्रशासन के अध्ययन हेतु अपेक्षित सामग्री हमें इतिहास से प्रचूर मात्रा में उपलब्ध होता है। वास्तव में ऐतिहासिक संदर्भ की अनुपस्थिति में किसी भी देश की प्रशासकीय प्रणाली का अध्ययन समुचित रूप से नहीं किया जा सकता। सच तो यह है कि विभिन्न प्रशासकीय संस्थाओं की व्युत्पत्ति और विकास को केवल इतिहास की सहायता से ही समझा जा सकता है।

इतिहास मानव अनुभवों की विशाल खान है। हमारी प्राचीन प्रशासनिक समस्याऐं क्या थीं और विशेष परिस्थितियों में उनका समाधान किस प्रकार हुआ, यह सब इतिहास से हमें ज्ञात हो सकता है। इतिहास में हम लोक प्रशासन के लिए उदाहरण एवं चेतावनी दोनों ही प्राप्त करते हैं। प्रशासन की

और विकास को केवल इतिहास की सहायता से ही समझा जा सकता है।
इतिहास मानव अनुभवों की विशाल खान है। हमारी प्राचीन प्रशासनिक समस्याऐं क्या थीं और विशेष परिस्थितियों में उनका समाधान किस प्रकार हुआ, यह सब इतिहास से हमें ज्ञात हो सकता है। इतिहास में हम लोक प्रशासन के लिए उदाहरण एवं चेतावनी दोनों ही प्राप्त करते हैं। प्रशासन की

भावी रूपरेखा तैयार करने में इतिहास हमारी बहुत बड़ी सहायता करता है। लोक प्रशासन अन्य प्राकृतिक विज्ञानों की भांति प्रयोगात्मक नहीं है। इतिहास में प्रशासन सम्बन्धी जो अनुभव है वे ही हमारे लिए प्रयोग की सामग्री है। लोक प्रशासन के सम्बन्ध में कौन-कौन से विचार कब और कैसी परिस्थितियों में उत्पन्न होते रहे हैं, किस प्रकार उसका खण्डन अथवा समर्थन होता रहा है, यह सब हमें इतिहास से मिल सकता है।
लोक प्रशासन के अध्ययन की परम्परागत पद्धतियों में ऐतिहासिक पद्धति काफी लोकप्रिय रही है। इस सम्बन्ध में एल0डी0व्हाईट की दो पुस्तकें 'द फेडरलिस्ट्स' तथा 'जेफ्फरसोनियन्स' काफी चर्चित रही हैं। इन पुस्तकों में अमेरिकी गणतन्त्र के प्रथम चालीस वर्षों के संघ प्रशासन का अध्ययन प्रस्तुत किया गया है। ये पुस्तकें उस समय की प्रशासकीय व्यवस्था को समझने के लिए महत्वपूर्ण विषय सामग्री प्रदान करती है। इसके अतिरिक्त, एस0बी0क्राइन्स की 'एन इंटोडक्शन टू द एडमिनिस्ट्रेटिव हिस्ट्री ऑफ में डिवल इंगलैण्ड' मुखर्जी की 'लोकल गवर्नमेंण्ट इन एन्सियेंट इण्डिया' जदुनाथ सरकार द्वारा रचित 'मुगल एडमिनिस्टेशन' बी0जी0 सप्रे की 'ग्रोथ ऑफ इन्डियन एडमिनिस्ट्रेशन' इत्यादि के नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है।
इस प्रकार का प्रशासनिक इतिहास का अध्ययन समकालीन लोक प्रशासन की पृष्टभूमि को समझने में हमारी मदद करता है। आधुनिक इतिहासकारों द्वारा प्रचलित प्रशासकीय व्यवस्थाओं पर विशेष ध्यान देने की प्रवृत्ति लोक प्रशासन के विषय के लिए एक शुभ संकेत हैं, क्योंकि इससे अत्यन्त मूल्यवान सामग्री प्राप्त होगी। अतः यह कहा जा सकता है कि लोक प्रशासन इतिहास से भी घनिष्ठ रूप से सम्बन्धित हैं।

5.8 लोक प्रशासन एवं मनोविज्ञान

मनोविज्ञान समाज में मानवीय आचरण का अध्ययन है और लोक प्रशासन मानवीय प्रक्रियाओं का अब से पहले प्रशासन में मनोविज्ञान के महत्व को स्वीकार नहीं किया जाता था, परन्तु अर्थशास्त्र की भांति आज मनुष्य की प्रत्येक क्रिया में मनोवैज्ञानिक तत्व को खोजने की चेष्टा की जाती है। लोक प्रशासन में मनोविज्ञान का महत्व दिन प्रतिदिन बढ रहा है। विशेषकर सामाजिक एवं ओद्यौगिक मनोविज्ञान का महत्व आज सभी लोग स्वीकार करते हैं। सभी लोक कर्मचारियों से यह अपेक्षा की जाती है कि वे अपने राजनीतिक स्वामी, जनता के साथ अच्छे सम्बन्ध बनाये रखेंगे और अच्छे सम्बन्धों को विकसित करने के लिए मनोविज्ञान की जानकारी आवश्यक है। मानव की प्रकृति परिवर्तनशील है। कई बार परिस्थितिवश अथवा किसी भावावेश में आकर व्यक्ति अपने व्यवहार को बदल देता है। ऐसी स्थिति में एक कुशल प्रशासक के लिए यह आवश्यक है कि वह जन-मनोविज्ञान से परिचित हो। जनमत को समझने में मनोविज्ञान से काफी सहायता मिलती है। बहुत से अपराधों का विश्लेषण इसी आधार पर किया जाता है। इसके अतिरिक्त लोक सेवाओं में भर्ती के समय मनोवैज्ञानिकों द्वारा विकसित बुद्धि परिक्षणों का अधिकाधिक मात्रा में प्रयोग होने लगा है। लोक सेवाओं के क्षेत्र में उत्प्रेणाओं तथा मनोबल की समस्याएँ यथार्थ में मनोवैज्ञानिक समस्याएँ हैं, जिन्हें मनोविज्ञान की मदद से ही समझा जा सकता है तथा उनका निराकरण किया जा सकता है।

अभ्यास प्रश्न- 3

1. आज के प्रशासक के लिए आर्थिक समस्याओं की पर्याप्त जानकारी आवश्यक है। सत्य/असत्य
2. "लोक प्रशासन सार्वजनिक विधि के व्यवस्थित तथा विस्तृत कार्यान्वय के अतिरिक्त और कुछ नहीं है" यह किसका कथन है?
3. लोक प्रशासन इतिहास से सम्बन्धित नहीं है। सत्य/ असत्य
4. लोक सेवा के क्षेत्र में उत्प्रेरणाओं तथा मनोवल की समस्याएं यथार्थ में .... समस्यायें हैं।
5. परम्परागत रूप से मितव्ययिता एवं .... को प्रशासन का मुख्य लक्ष्य माना जाता रहा है।

5.10 साराश

विभिन्न सामाजिक घटनाएँ एक-दूसरे से सम्बद्ध होती हैं। अतः किसी भी सामाजिक घटना का विश्लेषण उसके विभिन्न आयामों को समझे बिना नहीं किया जा सकता। ज्ञान एक समन्वित इकाई है, लेकिन इसके विभिन्न पहलुओं के विस्तृत अध्ययन की आवश्यकता ने विशिष्टीकरण को प्रेरित किया। यद्यपि विशिष्टीकरण की वृद्धि से शोध को बढावा मिला, लेकिन इससे सामाजिक यथार्थ के प्रति एकीकृत दृष्टिकोण की आवश्यकता की पूर्ति नहीं हो पाई है। अतः विभिन्न विषयों के अध्ययन में 'अन्तः अनुशासनात्मक दृष्टिकोण' अपनाना आवश्यक हो गया है।

लोक प्रशासन का अन्य सामाजिक विज्ञानों- राजनीति विज्ञान, समाजशास्त्र, अर्थशास्त्र, विधिशास्त्र, इतिहास, मनोविज्ञान तथा नीतिशास्त्र से घनिष्ठ सम्बन्ध है। इसका अभ्युदय राजनीति विज्ञान से हुआ है। कुछ दशाब्दियों पूर्व इसे राजनीति विज्ञान से अलग किया गया, लेकिन एक स्वतंत्र विषय के रूप में बनाए रखने में कठिनाई हो रही है। यह महसूस किया जा रहा है कि राजनीति विज्ञान से ली गयी संकल्पनाओं से लोक प्रशासन को सुदृढ किया जाना चाहिए। सैद्धान्तिक दृष्टि से राजनीति एवं प्रशासन भले ही अलग अलग हों, लेकिन व्यावहारिक दृष्टि से इनमें भिन्नता करना मुश्किल है। इसी प्रकार समाजशास्त्र से भी इसका घनिष्ठ सम्बन्ध है, क्योंकि बिना सामाजिक परिवेश को समझे प्रशासन की प्रकृति एवं भूमिका को समझना मुश्किल है। मैक्स बेवर जैसे समाजशास्त्री के कार्यों ने लोक प्रशासन के सिद्धान्तों और व्यवहारों को प्रभावित किया है। आधुनिक काल में प्रशासन को सामाजिक परिवर्तन का एक प्रमुख संवाहक माना जाता है।

इसी प्रकार नियोजित आर्थिक विकास की आवश्यकताओं ने अर्थशास्त्र के साथ भी लोक प्रशासन के सम्बन्धों को मजबूत बनाया है। नीतियों को प्रभावी रूप से क्रियान्वित करने के लिए आधुनिक प्रशासकों को उसके आर्थिक पहलुओं की जानकारी आवश्यक है।

अर्द्ध विकसित एवं विकासशील देशों में प्रशासन का केन्द्र बिन्दु निर्धनता का उन्मूलन करना है। संसाधनों को संघटित करने सम्बन्धी सभी मामलों (कराधान, निर्यात, आयात आदि) का प्रशासन पर व्यापक प्रभाव पडता है।

प्रशासनिक संस्थाओं के वर्तमान स्वरूप को सही रूप में समझने के लिए उसके अतीत को जानना

इकाई- 10 संगठन

इकाई संरचना

10.1 प्रस्तावना
10.2 उद्देश्य
10.3 संगठन का अर्थ एवं अवधारणा
10.4 संगठन के सिद्धान्त
10.5 संगठन का महत्व
10.6 औपचारिक संगठन
10.7 अनौपचारिक संगठन
10.8 सारांश
10.9 शब्दावली
10.10 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
10.11 सन्दर्भ ग्रन्थ-सूची
10.12 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री
10.13 निबंधात्मक प्रश्न

10.1 प्रस्तावना

लोक प्रशासन विषय के अन्तर्गत संगठन को सर्वाधिक महत्वपूर्ण व गम्भीर अवधारणा के रूप मान्यता दी में पहचाना जाती है, क्योंकि संगठन की अवधारणा को स्पष्ट रूप से विश्लेषित करने के पश्चात् ही लोक प्रशासन के अन्य सिद्धान्तों था अवधारणाओं को आत्मसात किया जा सकता है। वर्तमान प्रशासनिक पर्यावरण में किसी भी प्रकार के प्रशासन का आधार एक सुव्यवस्थित संगठन होता है। एक मानव परिवार रूपी संगठन में जन्म लेता है और परिवार रूपी संगठन में ही अपना अस्तित्व समाप्त कर देता है। इसके आभाव में मानव समाज की कल्पना भी नहीं की जा सकती। वास्तव में संगठन सहकारी प्रक्रियाओं के लिये एक आधारभूत अवधारणा है।
प्रस्तुत इकाई संगठन के अर्थ को स्पष्ट करने के लियें विभिन्न विद्वानों की परिभाषाओं, तत्वों, सिद्धान्तों और उद्देश्यों पर प्रकाश डालेगी। संगठन के दो प्रमुख स्वरूप औपचारिक तथा अनौपचारिक को भी स्पष्ट करने का प्रयास करेगी तथा संगठन क्यों महत्वपूर्ण है? इस प्रश्न का उत्तर भी विवेचनोपरान्त आप समझ पायेंगे।

10.2 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के उपरान्त आप-

- संगठन की अवधारणा एवं अर्थ से परिचित हो सकेंगे।
- संगठन के महत्व को रेखांकित कर सकेंगे।

4:23
47
114

- औपचारिक संगठन को विश्लेषित कर सकेंगे।
- अनौपचारिक संगठन की अवधारणा को आत्मसात कर सकेंगे।

10.3 संगठन का अर्थ एवं अवधारणा

इतिहास इस तथ्य का साक्षी है कि आदिकाल का मानव भी अपनी आवश्यकताओं की संन्तुष्टि के लिए कुछ न कुछ कार्य अवश्य करता था। संगठन की उत्पत्ति के विषय में यह कहा जा सकता है कि इसकी आवश्यकता उस समय हुई होगी। जब मनुष्यों ने साथ मिलकर कार्य करना शुरू किया होगा कालान्तर में ज्ञान एवं विज्ञान की प्रगति के साथ साथ मनुष्य की आवश्यकताये भी बढ़ी है। इन बढ़ती हुई आवश्यकताओं ने उत्पादन में वृद्धि तथा विशिष्टीकरण को जन्म दिया है।

अंग्रेजी भाषा के 'ऑर्गेनिज्म' शब्द से निकले 'ऑर्गेनाइजेशन' यानि संगठन का अर्थ, अंगों के ऐसे सम्बन्ध से है, जिसमें सब साथ मिलकर एक इकाई के रूप में कार्यों का सम्पादन करते हैं, जिसे संगठित प्रयोग अर्थात संगठन की संज्ञा दी जाती है। यह अपेक्षित उद्देश्यों को प्राप्ति के लिये विभिन्न व्यक्तियों की क्रियाओं को समन्वित करने की प्रक्रिया है। प्रशासन के विभिन्न कारकों, यथा- श्रम, आवश्यकताएँ, प्रबन्ध के मध्य प्रभावपूर्ण सहकारिता स्थापित करने की कला को ही संगठन कहते है। अत: प्रशासन के विभिन्न प्रमुख कारकों का वैज्ञानिक सामंजस्य ही ''संगठन'' के रूप में जाना जाता है।

आधुनिक युग में संगठन प्रशासन का एक आवश्यक कार्य बन गया हैं, क्योंकि इसके बिना निर्धारित लक्ष्यों को पाना असम्भव है। प्रशासन की सफलता इस बात पर निर्भर करती है कि संगठन में काम करने वाले व्यक्ति मिल-जुलकर उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए कार्य करें।

संगठन के अन्तर्गत हम प्रशासन के सम्पूर्ण साधनों का सुव्यवस्थीकरण करते हैं। प्रत्येक प्रशासन का मुख्य दृष्टिकोण यह होता है कि वह अपने प्रशासन को इस प्रकार नियोजित करे कि उससे कार्यक्षमता, प्रभाविता और निष्पादन में अधिक से अधिक वृद्धि हो। दूसरे शब्दों में, किसी कार्य को योजनाबद्ध रूप से सम्पदित करना ही संगठन है।

ऑक्सफोर्ड शब्दाकोष के अनुसार ''संगठन शब्द का तात्पर्य किसी वस्तु की व्यवस्थित संरचना बनाना है या किसी वस्तु के आकार को सुनिश्चित करके उसे कार्य करने की स्थिति में लाना है। इससे स्पष्ट होता है कि संगठन में तीन तत्व मिले हुए है-प्रथम, यह कार्य किसी निश्चित उद्देश्य की पूर्ति के लिए किया जाता है। द्वितीय, इसमें सहयोग की भावना होती है। तृतीय, इसमें सहयोग व्यक्तियों द्वारा कार्य किया जाता है इस प्रकार कार्यालय संगठन की परिभाषा उस प्रक्रिया के रूप में दी जा सकती है जिसके द्वारा कार्यालयों में विभिन्न पदों का संरचनात्मक ढाचा इस प्रकार का बनाया जाता है कि वांछित लक्ष्यों को प्राप्त किया जा सके।

इसी क्रम में प्रशासकीय दृष्टि से संगठन शब्द का प्रयोग दो रूपों में होता है, पहले रूप में संगठन का तात्पर्य संगठन की संरचना से है जिसके द्वारा संगठन मूल रूप से ऐसे व्यक्तियों का समूह है, जो औपचारिक सम्बन्धों द्वारा संस्था के उद्देश्यों की प्रप्ति के लिए साथ मिलकर कोशिश करते हैं तथा

115

दूसरे रूप में संगठन का तात्पर्य किसी योजना के विभिन्न कार्यों को परिभाषित करने तथा उन्हें एक साथ विकसित करने के साथ-साथ उनके मध्य सम्बन्ध स्थापित करने वाली ऐसी प्रक्रिया से है, जिसके द्वारा यह निर्धारत किया जाता है कि लक्ष्य को पाने के लिए कौन-कौन से कार्य किए जाएँगे तथा इन कार्यों में लगे अधिकारियों एवं कर्मचारियों को कार्यों के सम्पादन के लिए जरूरी अधिकार

Edit Annotate Fill & Sign Convert All

दूसरे रूप में संगठन का तात्पर्य किसी योजना के विभिन्न कार्यों को परिभाषित करने तथा उन्हें एक साथ विकसित करने के साथ-साथ उनके मध्य सम्बन्ध स्थापित करने वाली ऐसी प्रक्रिया से है, जिसके द्वारा यह निर्धारित किया जाता है कि लक्ष्य को पाने के लिए कौन-कौन से कार्य किए जाएँगे तथा इन कार्यों में लगे अधिकारियों एवं कर्मचारियों को कार्यों के सम्पादन के लिए जरूरी अधिकार और उत्तरदायित्व निर्धारित किये जाते हैं।

वस्तुतः संगठन एक ऐसी प्रक्रिया है, जो उत्पादन सम्बन्धी विभिन्न कड़ियों को एक सूत्र में पिरोने का कार्य करती है। संगठन के द्वारा ही न्यूनतम साधनों से अधिकतम कार्य निष्पादन प्राप्त किया जा सकता है। उपरोक्त विवेचन के आधार पर हम संगठन विकास के इतिहास को निम्न अवस्थाओं में विभाजित कर सकते हैं -

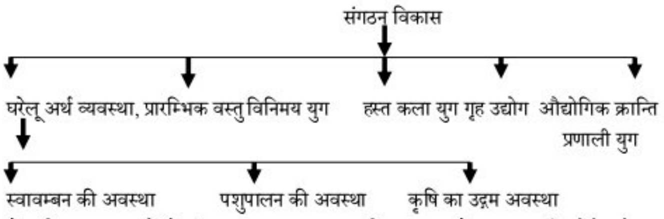

जैसा कि हम जान चुके हैं, संगठन शब्द एक अत्यन्त विस्तृत शब्द है, अतः इसकी कोई सर्वमान्य परिभाषा देना कठिन है। विभिन्न विद्वानों ने संगठन शब्द की विभिन्न परिभाषाएं दी हैं। इन्हें अध्ययन में सुविधा हेतु विभिन्न अवधारणाओं के अन्तर्गत वर्गीकृत किया गया है। आइये इन्हें विवेचित करने का प्रयास करें-

(क) समूह अवधारणा- इस अवधारणा के अनुसार संगठन मूल रूप से व्यक्तियों का समूह है, जो निश्चित उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए मिलजुल कर कार्य करते हैं। अतः कोई भी संगठन उस समय अस्तित्व में आ जाता है, जब कुछ लोग एक साथ कार्य करने के लिए सहमत होते हैं। इस अवधारणा से जुड़े विद्वान-

1. इटजियोनि के अनुसार संगठन विशिष्ट उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए स्वेच्छा से निर्मित मानवीय समूह हैं।
2. मूने व रैले के अनुसार संगठन सामान्य हितों की पूर्ति के लिए बनाया गया मनुष्यों का एक समुदाय है। जो पूर्व निर्धारित उद्देश्यों के लिये कार्य करता है।

(ख) कार्यात्मक अवधारणा- कार्यात्मक अवधारणा के अनुसार संगठन प्रबन्ध का प्राथमिक कार्य है,जो उत्पादन के विभिन्न साधनों को निर्धारित लक्ष्यों सम्बन्धों की सरंचना है, जिसमें कर्मचारी कर्तव्यों और दायित्वों का निष्पादन करते है, संगठन सम्बन्धों की सरंचना करके क्रियाओं के क्षेत्र की रचना करता है। इस अवधारणा से जुड़े विद्वान-

4:23

47

116

1. ओलिवर शेल्डन के अनुसार ''संगठन वह कार्यविधि है, जिसके द्वारा आवश्यक विभागों में व्यक्तियों या समूहों द्वारा किए जाने वाले कार्य को इस प्रकार संयोजित किया जाता है कि उसके द्वारा उपलब्ध प्रयत्नों को श्रृंखलाबद्ध करके कुशल, व्यवस्थित एवं समान्वित बनाया जा सके। इस प्रकार संगठन प्रबन्ध का वह यन्त्र है जो प्रशासन द्वारा नियत लक्ष्यों की पूर्ति में सहायक होता है।
2. प्रो0 हैने के अनुसार किसी विशेष उद्देश्यों की पूर्ति के लिए किसी वस्तु के भाग अथवा कार्य के विभिन्न साधनों को एकताबद्ध करके उनमें सहकारिता पैदा करना ही संगठन कहलाता है।

(ग) उद्देश्य अवधारणा- इस अवधारणा के अनुसार प्रत्येक संस्था में संगठन की स्थापना निर्धारित उद्देश्यों और लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए की जाती है। संगठन सदैव उद्देश्यों से सम्बन्धित होता है। इस अवधारणा से जुड़े विद्वान-

1. जी0ई0 मिलबर्ड के अनुसार कर्मचारियों और उनके कार्यों में एकीकरण व सामंजस्य स्थापित करने की क्रिया को संगठन कहते हैं।
2. विलियम आर0 स्प्रीगल के अनुसार संगठन वास्तव में विभिन्न क्रियाओं तथा कारकों के बीच का सम्बन्ध हैं।

(घ) प्रक्रिया अवधारणा- प्रक्रिया अवधारणा के अनुसार, संगठन किसी उपक्रम के सदस्यों के बीच सम्बन्धों को स्थापित करने की प्रक्रिया है। सम्बन्धों की स्थापना सत्ता तथा दायित्व के रूप में स्थापित की जाती है। इस अवधारणा से जुड़े विद्वान-

1. कूण्ट्ज एवं 'ओ' डोनैल के अनुसार संगठन एक विधिसंगत एवं सम्भावित भूमिकाओं एवं अवस्थितियों की सरंचना है।
2. निओल तथा ब्राण्टन के अनुसार संगठन अंशतः सरंचनात्मक सम्बन्धों का प्रश्न है तथा अंशतः मानवीय सम्बन्धों से सम्बन्धित है।

उपर्यक्त परिभाषाओं के विश्लेषणात्मक अध्ययन के उपरान्त यह कहा जा सकता है कि संगठन एक ऐसी क्रिया है, जिसके द्वारा व्यवसाय से सम्बन्धित समस्त क्रियाओं में समन्वय स्थापित करने का प्रयास किया जाता है। प्रशासनिक संगठन के सामान्यतः निम्नलिखित उद्देश्य होते हैं। आइये इन्हें क्रमबद्ध कर समझनें का प्रयास करें-

- संगठन प्रशासन का एक महत्वपूर्ण कार्य है, जिसका उद्देश्य संस्था के लक्ष्यों की प्राप्ति में सहयोग करना हैं, इसीलिए यह कहा भी जाता है कि संगठन प्रशासन के उद्देश्यों एवं लक्ष्यों को प्राप्त करने का एक उपकरण है।
- संगठन का प्रमुख उद्देश्य कर्मचारी एवं प्रशासन के मध्य मधुर सम्बन्ध स्थापित करना है। एक अच्छे संगठन में सदैव यह प्रयास किया जाता है कि कर्मचारियों की समस्याओं का

117

समाधान शीघ्रातिशीघ्र किया जाये। जिससे कि कर्मचारी एवं प्रशासनिक अधिकारियों के मध्य मधुर सम्बन्ध स्थापित हो।

Edit Annotate Fill & Sign Convert All

समाधान शीघ्रातिशीघ्र किया जाये। जिससे कि कर्मचारी एवं प्रशासनिक अधिकारियों के मध्य मधुर सम्बन्ध स्थापित हो।

- संगठन का एक प्रमुख उद्देश्य योग्य एवं अनुभवी कर्मचारियों की चयन एवं प्रशिक्षण भी है इसके साथ-साथ उन्हें संस्था में बनाये रखना भी एक प्रमुख उद्देश्य हैं।
- संगठन का एक प्रमुख उद्देश्य बदलती हुई तकनीकी वातावरण को ध्यान में रखते हुये अपनी संगठन सरंचना में इस प्रकार सुधार करना है, जिससे उसकी प्रभावशीलता एवं कुशलता में अधिकतम वृद्धि की जा सके।
- न्यूनतम प्रयास पर अधिकतम कार्य निस्पादन प्राप्त करना ही संगठन का प्राथमिक उद्देश्य है। इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिये प्रभावशाली संगठन प्रणाली की सरंचना की जाती है।
- एक अच्छे संगठन का प्रमुख उद्देश्य कर्मचारियों में मनोबल का विकास करना होता है, क्योंकि कर्मचारियों के मनोबल का सीधा सम्बन्ध कार्य निस्पादन से होता है। कर्मचारियों के मनोबल ऊँचा होने से कार्य निस्पादन की मात्रा एवं गुणवत्ता में वृद्धि होती है।
- आधुनिक युग में प्रत्येक संगठन का उद्देश्य अपने सामाजिक उत्तरदायित्वों का निर्वाह करना होता है। यह कार्य संगठन द्वारा अपने कर्मचारियों में सेवा भावना की जागृति द्वारा ही सम्भव बनाया जा सकता है।
- संगठन सदैव यह प्रयास करता है कि अधिकारियों व अधीनस्थों के मध्य अधिकार-दायित्व सम्बन्धों की अनुकूल स्थापना की जाये, जिससे सम्प्रेषण व्यवस्था को प्रभावी बनाया जा सके तथा आदेश-निर्देशों में एकता स्थापित कर कर्मचारी प्रशासक तथा जनता के मध्य सहयोग और सद्-भाव की स्थापना की जा सके।

यह अत्यन्त ही गम्भीर प्रश्न है कि प्रशासन द्वारा कितने अधीनस्थों को प्रबन्धित किया जा सकता है। इस हेतु प्रबन्धकीय, संगठनात्मक और कार्य सम्बन्धित अनेक कारकों को ध्यान में रखना पड़ता है। आइये इनका वर्गीकरण कर, यह समझनें का प्रयास करें कि कैसे संगठन पर अपना प्रभाव डालतें हैं-

- **लक्ष्य-** संगठन साधन है न कि साध्य, यह उपक्रम के उद्देश्यों की प्राप्ति का एक साधन है, संगठन लक्ष्य अभिमुखी प्रणाली है। अतः संगठन का निर्माण करते समय इस बात को ध्यान में रखना चाहिए कि, जो संगठन हम तैयार कर रहे हैं, वह प्रशासन के लक्ष्यों को पूरा करने में किस सीमा तक सक्षम होगा।
- **तकनीकी-** तकनीकी कार्य निष्पादन के तरीके को दर्शाती है। तकनीकि की प्रकृति के आधार पर संगठन की सरंचना करनी चाहिए। यदि तकनीकी सरल एवं नैत्यक प्रकृति की है तो सरंचना का प्रारूप कम जटिल होगा। इस प्रकार तकनीकी, संगठन सरंचना को प्रभावित करती है।

4:23
47

आधार पर संगठन की संरचना करनी चाहिए। यदि तकनीकी सरल एवं नैत्यक प्रकृति की है तो संरचना का प्रारूप कम जटिल होगा। इस प्रकार तकनीकी, संगठन संरचना को प्रभावित करती है।

- **कर्मचारियों की योग्यता-** संस्था में कार्यरत कर्मचारियों की योग्यता भी संगठन को प्रभावित करती है। अधिकारों के विकेन्द्रीकरण एवं कार्यों का बँटवारा करते समय अधीनस्थ कर्मचारियों की योग्यताओं को भी ध्यान में रखना आवश्यक होता है, जिससे लोग उस सरंचना में स्वयं को उपयुक्त महसूस करें और वे उसके साथ समायोजित हो सकें।
- **उपक्रम का आकार-** संगठन की सरंचना प्रशासन के क्षेत्र पर भी निर्भर करती है। प्रशासन का क्षेत्र बड़ा होने पर विशिष्टीकरण तथा विकेन्द्रीयकरण पर ध्यान दिया जा सकता है। क्षेत्र के बड़ा होने पर अधिकारों के केन्द्रीकरण एवं आदेश की एकता को ध्यान में रखा जाता है।
- **प्रशासकीय दृष्टिकोण-** संगठन का कार्य प्रशासक करते हैं, अतः उनका दृष्टिकोण भी संगठन को प्रभावित करता है।
- **वातावरण-** अनेक बड़े संगठन जटिल, गतिशील और अशांतमय वातावरण में काम करते हैं। सरंचनात्मक स्तरों पर प्रत्यक्ष रूप से वातावरणीय कारकों का अनुभव किया जाता है। संगठन की सरंचना राजनैतिक, आर्थिक व सामाजिक वातावरण को दृष्टिगत रखते हुए की जानी चाहिए, क्योंकि वातावरण भी संगठन को प्रभावित करता है। अतः संगठन की सरंचना करते समय वाहय तथा आन्तरिक दोनों प्रकार के वातावरण का विशेष ध्यान रखना चाहिए।

संगठन की सफलता अथवा असफलता इसके द्वारा प्राप्त परिणामों से ही ज्ञात की जा सकती है। संगठन की सफलता के लिए आवश्यक है कि इसकी रचना कुछ सिद्धान्तों के आधार पर की जाये। जो संगठन के अभीष्ट उद्देश्यों की प्राप्ति में पूर्णतः सक्षम हो संगठन को कुशल व सुदृढ़ बनाने हेतु विभिन्न विद्वानों ने संगठन के सिद्धान्त प्रतिपादित किये हैं।

10.4 संगठन के सिद्धान्त

उत्तरदायित्व, समन्वय, उद्देश्य, विशिष्टीकरण, पदसोपान, अनुरूपता, व्याख्या, विस्तार, नियंत्रण, एक सुदृढ़ संगठन में उपरोक्त सभी महत्वपूर्ण सिद्धान्तों का पालन किया जाना उपक्रम के अन्तिम उद्देश्यों को प्राप्त करने में सहायक माना जाता है इस प्रकार एक प्रभावी संगठन निम्नलिखित प्रकार से एक प्रशासन की सफलता में अपनी भूमिका का निर्वहन करता है-

1. संगठन ऐसा ढांचा प्रदान करता है, जिससे प्रशासन अपने प्राथमिक व द्वितीयक कार्य प्रभावपूर्ण ढंग से करने में समर्थ होता है, विभिन्न कार्यों को संघटित करके एक कार्यप्रणाली का रूप दिया जाता है। यह कार्य अधिकारियों व उनके अधीनस्थ कर्मचारियों के बीच सुनिश्चित संबंधों के द्वारा, अधिकार प्रत्योजन के द्वारा प्रशासन के कार्मिकों को जिम्मेदारी निश्चित करके किया जाता है।
2. यह प्रशासन से सम्बन्धित कर्मचारियों को पहल करने और रचनात्मक कार्यों के लिये प्रेरित करता है।

Edit Annotate Fill & Sign Convert All

3. यह मानवीय संसाधनों, नियमों और उत्तरदायित्वों का अनुकूलतम उपयोग एवं समन्वय सुनिश्चित करता है।
4. यह प्रशासन के कार्यों में प्रगति के अवसर को स्थायित्व प्रदान करता है।
5. उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु संगठन को अति सुविधाजनक बनाया जाता है, इसके लिए उपक्रम के कार्यों का समूहीकरण इस प्रकार किया जाता है, जिससे क्रिया, परामर्श तथा समन्वय तीनों सुव्यवस्थित तथा क्रमबद्ध तरीके से सम्पन्न हो सके।
6. संगठन की योजना में कर्तव्यों, उत्तरदायित्वों तथा सम्बन्धों की स्पष्ट व्याख्या होनी चाहिए।
7. एक प्रभावी संगठन में दिया जाने वाला नेतृत्व परम्परागत और प्रभावहीन न होकर गत्यात्मक और प्रभावशाली होना चाहिए।
8. एक आदर्श संगठन के विभिन्न विभागों के बीच प्रभावी संतुलन बनाये रखा जाना चाहिए।

अब तक आपने संगठन की अवधारणा को भली-भाँति समझ लिया होगा। अध्ययन को पूर्णता प्रदान करने के लिये संगठन और प्रशासन में क्या अन्तर है? इसे भी जानना आवश्यक है। आइये एक नजर में इसे समझने का प्रयास करें। सामान्यतः संगठन और प्रशासन को बिल्कुल एक समझ लिया जाता है जो सही नहीं है।

- बिना संगठन के प्रशासन निराधार, निरंकुश हो जाता है तथा इसके अभाव में किसी प्रकार का कार्य सम्भव नहीं हो सकता है। संगठन और प्रशासन के मध्य अन्तर को स्पष्ट करते हुए कहा जा सकता है कि जहाँ निश्चित एवं निर्धारित लक्ष्यों की प्राप्ति हेतु संगठित क्रियाओं का योग प्रशासन है, वहीं व्यक्ति समूह, क्रियाओं आदि की नियोजित व्यवस्था संगठन है।
- दूसरी ओर, प्रशासन को निश्चित एवं निर्धारित लक्ष्यों की प्राप्ति हेतु माध्यम कहा जा सकता है। जबकि संगठन को प्रशासनिक माध्यम का आधार कहा जा सकता है। इस प्रकार संगठन और प्रशासन को सम्बद्ध तो माना जा सकता है उचित होगा कि दोनों एक ही सिक्के के दो पहलू हैं।

10.5 संगठन का महत्व

यद्यपि संगठन का अस्तित्व कई युगों पूर्व हो चुका था, किन्तु प्रारम्भिक अवस्था में इसका समाज में कोई महत्व नहीं था। हाँ, आधुनिक युग में इसका महत्व दिन-प्रतिदिन बढ़ता जा रहा है और इसी कारण वर्तमान समाज को संगठनात्मक समाज की संज्ञा दी जा रही है। परिवार को समाज में सबसे पहला संगठन कहा जाता है, उसके बाद समय के साथ-साथ तरह के संगठन बनते हैं। देश के प्रशासन को चलाने के लिये संगठन अनिवार्य होते है। सरकार जब भी कोई नया कार्य हाथ में लेती है तो सरकारी संगठनों की स्थापना की जाती है। संगठन वास्तव में एक ढाँचा है जिसके जारिए लक्ष्यों की प्राप्त के लिए जनशक्ति, सामग्री और धन का अनुकूलतम उपयोग एवं समन्वय किया जाता है।
संगठन का उद्देश्य मानवीय तथा भौतिक साधनों पर नियन्त्रण करना है। व्यक्तियों तथा वर्गों के मध्य कार्य विभाजन तथा विशिष्टीकरण होने के कारण संगठन किसी भी वर्गीय क्रिया का अनिवार्य लक्षण

है। जब किसी लक्ष्य की प्राप्ति के लिये विभिन्न व्यक्ति एक साथ मिलते हैं तो उनके कार्य में किसी न

है। जब किसी लक्ष्य की प्राप्ति के लिये विभिन्न व्यक्ति एक साथ मिलते हैं तो उनके कार्य में किसी न किसी प्रकार का विशेषीकरण अनिवार्य हो जाता है।

श्रम-विभाजन के रूप में की जाने वाली वर्गीय क्रिया समुचित रूप प्रदान करने के लिये संगठन की स्थापना की जाती है। संगठन किस ढंग से काम करेगा, यह इस बात पर निर्भर करता है कि नीतियाँ और योजनाएँ कैसे बनाई जाती हैं और उन्हें कैसे लागू किया जाता है। संगठन में सर्वोच्च प्रशासक वर्ग नीति निर्धारण करता है। मध्य प्रशासकीय वर्ग योजनाएँ और कार्यक्रम बनाता है और नीचे के अधिकारी तथा कर्मचारी उन पर वास्तविक क्रियान्ववयन करते हैं।

जबकि हम जानते हैं कि हजारों वर्षों से ही समाज में संगठन मौजूद है, किन्तु समय के साथ-साथ संगठनों का रूप बदलता गया और आज तो अनेक प्रकार के संगठन मौजूद हैं। संगठन में कार्यरत व्यक्तियों की संख्या के आधार पर उन्हें बड़ा या छोटा कहा जा सकता है। एक कर्मचारी वाला छोटा संगठन है और लाखों कर्मचारियों वाला दूरदर्शन एक बड़ा संगठन है।

संगठन स्वयं में कोई साध्य नहीं है, यह तो मात्र साध्य की प्राप्ति का साधन है। कुशल एवं सुदृढ़ संगठन पर ही प्रभावशाली प्रबन्ध निर्भर करता है। संगठन ही प्रशासन को सफलता की ओर अग्रसर करा सकता है। वास्तव में यदि संगठन की प्रबन्ध की आधारशिला कहा जाये तो कोई अतिश्योक्ति नहीं होगी। यदि संगठन से सम्बन्धित नियोजिन में किसी प्रकार का दोष रह जाता है प्रबन्ध का कार्य कठिन एवं प्रभावहीन हो जाता है। इसके ठीक विपरीत, एक नियोजित एवं सुदृढ़ संगठन स्वस्थ्य संगठन की नींव डालता है।

वास्तुतः संगठन में मूलतः उसका ढाँचा, उसमें कार्यरत व्यक्तियों के बीच की कार्यशील व्यवस्था और उनके परस्पर संबंध शामिल होते हैं। वर्तमान परिवेश में व्यक्ति के जीवन और संगठनों के बीच अटूट सम्बंन्ध हैं, भले ही संगठन सार्वजानिक या निजी। व्यक्तियों के बिना संगठन की और संगठन के बिना व्यक्तियों की कल्पना करना कठिन है। वास्तव में व्यक्ति संगठनों में काम करता है, उनसे लाभ उठाता है और प्रभावित भी होता है। इससे उनकी कार्यकुशलता में वृद्धि होती है तथा अनेक श्रम समस्याओं का समाधान होता है।

कुशल संगठन के अन्तर्गत कार्य को विभिन्न भागों एवं समूहों में बाँटकर कर्मचारियों की योग्यतानुसार उनमें बाँट दिया जाता है। योग्यता एवं रूचि के अनुसार कार्य मिलने पर कर्मचारी उसे अधिक मन लगाकर करता है तथा अधिक वैज्ञानिक ढंग से कार्य के लिये अपने विचार प्रस्तुत करता है। जिससे कार्य निष्पादन सम्भव हो पाता है।

पीटर एफ0 ड्रकर ने इस सम्बन्ध में लिखा है कि आदर्श संगठन वह है जो सामान्य व्यक्तियों को असामान्य कार्य करने में सहायता करता है। संगठन को कई विभागों, शाखाओं उपविभागों आदि में बाँटा जाता है। जिससे उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु संगठन को अत्यन्त सुविधाजनक किया जाता है। इसी क्रम में एल.डी. हवाइट जैसे विद्वान कहते हैं कि आज का व्यक्ति अपने व्यक्तित्व से कम, संगठन से ज्यादा पहचान जा रहा है क्योकि आज व्यक्ति " संगठन मानव" बन गया है। वास्तव में आज हम

असामान्य कार्य करने में सहायता करता है। संगठन को कई विभागों, शाखाओं उपविभागों आदि में बाँटा जाता है। जिससे उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु संगठन को अत्यन्त सुविधाजनक किया जाता है। इसी क्रम में एल.डी. हवाइट जैसे विद्वान कहते हैं कि आज का व्यक्ति अपने व्यक्तित्व से कम, संगठन से ज्यादा पहचान जा रहा है क्योकि आज व्यक्ति " संगठन मानव'' बन गया है। वास्तव में आज हम

व्यक्ति को उसके संगठन के सदस्य के रूप में पहचानते हैं। आज व्यक्ति ही नहीं, बल्कि समाज में भी संगठन की व्यापक पहुँच हो गई है।

किसी भी संगठन की सफलता एवं असफलता इसके द्वारा प्रस्तुत कार्य निष्पादन एवं अन्तिम परिणामों से की जा सकती है। यदि निर्धारित लक्ष्य एवं उद्देश्य प्राप्त होते हैं, तो संगठन मजबूत एवं सक्षम है और यदि वे प्राप्त नहीं होते हैं तो उसका तात्पर्य यह है कि संगठन में कहीं त्रुटि एवं कमी रह गयी। संगठन के योजना में कर्तव्यों, उत्तरदायित्वों तथा सम्बन्धों की स्पष्ट व्याख्या होनी चाहिये।

प्रत्येक अधिकारी को अपने कार्यक्षेत्र, उसकी सीमाओं, कार्य निर्देशन का क्षेत्र आदि के सम्बन्ध में स्पष्ट जानकारी होनी चाहिये। अतः संगठन में यह भी आवश्यक है कि उसमें विकास एवं विस्तार करना सम्भव हो सके। यही नहीं उनमें परिस्थितियों के अनुसार परिवर्तन की भी व्यवस्था होनी चाहिये। इस प्रकार सफल प्रशासन हेतु सुव्यवस्थित, समन्वयपूर्ण एवं प्रभावी संगठन एक आधारभूत आवश्यकता है। आइये यह जानने का प्रयास करें कि प्रशासन क्यों आवश्यक है? इस सन्दर्भ में निम्नलिखित बिन्दुओं को क्रमबद्ध किया जा सकता है-

1. संगठन से प्रशासन में विशिष्टीकरण को बढ़ावा मिलता है। श्रेष्ठ संगठन के अन्तर्गत ही विशेषज्ञों की नियुक्ति की जा सकती है, जो प्रशासन के विभिन्न कार्यों से सम्बद्ध किये जाते हैं।
2. आधुनिक युग में प्रत्येक प्रशासन को अपनी क्रियाओं का विकास व विस्तार करना पड़ता है। यह कार्य संगठन द्वारा ही सम्भव होता है।
3. संगठन प्रशासन की विभिन्न क्रियाओं को आनुपतिक एवं सन्तुलित महत्व प्रदान करता है।
4. संगठन सम्बन्धी रचना से विभिन्न विभागों, उपविभागों स्थितियों, कार्यों तथा क्रियाओं में मध्य समन्वय स्थापित किया जाता है। स्वस्थ संगठन समन्वय को सुविधाजनक बनाता है, जिससे मानवीय प्रसाधनों का श्रेष्ठतम उपयोग सम्भव हो जाता है।
5. स्वस्थ संगठन भ्रष्टाचार को रोकता है, जिससे कर्मचारियों का मनोबल ऊँचा उठता है।
6. संगठन द्वारा कार्यभार, अधिकार, दायित्व तथा विभागीय प्रयासों में सन्तुलन की स्थापना की जाती है। परिणामतः कर्मचारियों में सहयोग व सहभागिता की भावना पनपती है।
7. एक श्रेष्ठ संगठन में अधिकारों का प्रत्यायोजन अत्यन्त सुव्यवस्थित ढंग से किया जा सकता है।
8. संगठन किसी उपक्रम के विकास एवं विस्तार में पर्याप्त सहायता प्रदान करता है।
9. एक प्रभावी संगठन नवीन शोध एवं अनुसंधानों के कारण विकसित हुए तकनीकी सुधारों का नवीनतम उपयोग किया जाना सम्भव बनाते हैं।
10. श्रेष्ठ संगठन संरचना से पूर्व निश्चित सम्बन्धों के कारण सन्देशों का सुव्यवस्थित आदान-प्रदान कर संचार को प्रभावी बनाता है।

4:24
47

प्रदान कर संचार को प्रभावी बनाता है।

10.6 औपचारिक संगठन

संगठन की प्रकृति, उद्देश्य निर्माण पद्धति, कार्य एवं अन्य आधार तत्वों को ध्यान में रखते हुए, विद्वान प्रायः इसे दो भागों में विभाजित करते हैं --

संगठन 1. औपचारिक संगठन
2. अनौपचारिक संगठन

जब किसी संगठन में कार्य करने वालें को कार्यक्षेत्र तथा उनकी स्थिति को निश्चित करके कर्तव्यों, अधिकारों, दायित्वों व पारस्परिक सम्बन्धों की स्पष्ट व्याख्या कर दी जाये तो सम्बन्धों के ऐसे स्वरूप को "औपचारिक संगठन" की संज्ञा जाती है। अतः औपचारिक संगठन में अमूर्त और बहुत कुछ स्थाई नियमों का समावेश होता है। जो प्रत्येक सहभागी के व्यवहार को प्रभावित करते हैं। ऐसे संगठन में प्रत्येक व्यक्ति को एक निश्चित विधि से नियमों का पालन करते हुए कार्य करना पड़ता है। दूसरे शब्दों में व्यवस्थित व नियोजित ढंग से निर्मित संगठन, जिसमें स्थिति,अधिकार एवं उत्तरदायित्वों की स्पष्टता होती है, औपचारिक कहा जाता है। यहाँ अधिकार उच्च से निम्न स्तर को प्रदान होता है और पूरे संगठन की संरचना संस्था के उद्देश्यों को पाने का समन्वित प्रयास करती है। इस सबंध में विभिन्न विद्वानों ने निम्नलिखित ढंग से अपने विचारों को प्रकट किया है। आइये इन्हें विश्लेषित करनें का प्रयास करें-

- बर्नार्ड के अनुसार, "जब दो या दो से अधिक व्यक्तियों की क्रियाएँ एक दिए हुए उद्देश्य की तरफ समन्वित की जाती है, तब औपचारिक संगठन का निर्माण होता है। दूसरे शब्दों में औपचारिक संगठन के अन्दर सम्मिलित कार्यविधि नीतियाँ तथा नियम यह दर्शाते हैं कि किसी के कार्य को प्रभावी एवं सुव्यवस्थित ढंग से पूरा करने के लिए एक व्यक्ति का दूसरे के साथ क्या सम्बन्ध होगा। यह मानवीय संगठन तथा तकनीकी पक्षो के बीच अपेक्षित सम्बन्धों को निर्धारित करता है।
- साइमन, स्मिथबर्ग तथा थॉम्पसन के अनुसार, औपचारिक संगठन वह है, जिसमें व्यवहार तथा सम्बन्धों को जानबूझकर औचित्य के आधार पर संगठन के सदस्यों के लिए योजनाबद्ध कर दिया जाता है।
- न्यूमैन के अनुसार, "जब किसी संगठन के दो या दो से अधिक व्यक्तियों की क्रियाओं को किसी निश्चित लक्ष्य की प्राप्ति के लिए चेतनापूर्वक सम्बन्धित किया जाता है। तो ऐसा संगठन औपचारिक संगठन कहलाता है।"
- रैले के अनुसार, औपचारिक संगठन से तात्पर्य मानवीय अन्तर-सम्बन्धों के ढंग से है, जिसकी व्याख्या प्रभावित नियमों तथा अर्थव्यवस्था के संबंधों द्वारा की जाती है।
- एलन के अनुसार, औपचारिक संगठन सीमाएँ, दिशा-निर्देश और नियम बनाते हैं, जिनका पालन करना आवश्यक होता है। वे ऐसा बुनियादी ढाँचा सुलभ कराते हैं, जिसके जारिए सरकार या कोई और उद्यम कार्य करता है।

Edit Annotate Fill & Sign Convert All

उपरोक्त आरेख उत्तराखण्ड सरकार के उच्च शिक्षा मंत्रालय के संगठनात्मक संरचना को पदसोपान के सिद्धान्तानुसार प्रदर्शित करता है। इसमें शीर्ष पर मंत्री जी तथा निम्न स्थिति पर कनिष्ठ सहायक गण होते हैं। यह एक आदर्श स्थिति है, जिसमें परिवर्तन सम्भव होता है। अब तक के विश्लेषणोरान्त हम औपचारिक संगठन की निम्नलिखित विशेषताओं को निरूपित कर सकते हैं। आइये क्रमवार इन्हें समझनें का प्रयास करें-

- औपचारिक संगठन की प्रकृति अवैयक्तिक होती है।

- इसका निर्माण पूर्व निर्धारित, पूर्व नियोजित होता है।
- औपचारिक संगठन की स्थापना स्वेच्छा से उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु किया जाता है।
- इसमें आदेश की एकता का पालन होता है।
- इनमें सभी स्तरों पर स्थिति अधिकार एवं उत्तरदायित्वों को परिभाषित करके उनकी व्याख्या की जाती है। दूसरे शब्दों में इसमें प्रत्येक अधिकारी के अधिकार कर्तव्यों एवं उत्तरदायित्वों की स्पष्ट व्याख्या की जाती है और उनकी सीमाएं निर्धारित ती कर दी जाती हैं।
- अधिकार एवं दायित्वों की स्पष्ट व्याख्या चार्ट एवं मैन्युअल का प्रयोग किया जाता है।
- यह पूर्णतः श्रम विभाजन के सिद्धान्त पर आधारित होता है।
- इसमें सभी व्यक्ति आपस में मिलकर कार्य करते है।
- यह प्रदत्त विधायन सिद्धान्त पर आधारित होता है।

जैसा कि हम जानते हैं कि जब प्रशासनिक संगठन में काम करने वाले व्यक्तियों के कार्यक्षेत्र तथा उनकी स्थिति को निश्चित करके उनके अधिकारों, दायित्वों व पारस्परिक सम्बन्धों की स्पष्ट व्याख्या कर दी जाय तो संगठन औपचारिक प्रकृति का हो जाता है। विचार को रोकने औपचारिक संगठन को पुनः विभिन्न प्रकारों में विभाजित किया है। आइये इसे आरेख के माध्यम से प्रदर्शित कर समझने का प्रयास करें-

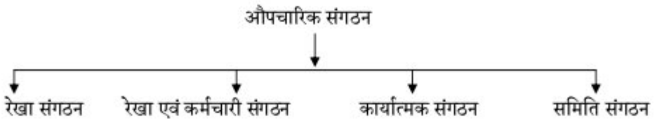

- रेखा संगठन अनौपचारिक संगठन का प्रथम भेद जिसमें प्रत्यक्ष शीर्ष रेखा सम्बन्ध होता है, यह प्रत्येक स्तर की स्थिति एवं कार्यो से ऊपर तथा नीचे के स्तर से सम्बन्ध स्थापित करता है।
- रेखा एवं कर्मचारी संगठन अनौपचारिक संगठन के इस भेद के सन्दर्भ में लुईस ए0 एलन के अनुसार, रेखा से तात्पर्य संस्था के उन पदों तथा तत्वों से है, जो संगठन के उद्देश्यों को पूर्ण करने हेतु उत्तरदायी होते हैं। सहायक का आशय उन पदों तथा तत्वों से है जो लाइन अधिकारी को अपने उद्देश्यों को पूरा करने हेतु आवश्यक परामर्श व सहायता उपलब्ध करते है।

- कार्यात्मक संगठन में प्रशासन का नियंत्रण इस प्रकार होता है कि प्रत्येक व्यक्ति को कम कार्य करना पड़े। अतः उसका कार्य छोटे-छोटे उप-कार्यों में में विभाजित कर दिया जाता है।
- सीमित संगठन- इस प्रकार के संगठन में संगठन के कार्यों को विभिन्न विभागों में विभक्त कर दिया जाता है, परन्तु किसी भी विभागाध्यक्ष को परामर्श के बिना निर्णय लेने का अधिकार नहीं होता है। सभी विभागाध्यक्षों की समिति का प्रधान महाप्रबन्धक कहलाता है।

इस प्रकार औपचारिक संगठन उपरोक्त के माध्यम से प्रशासकीय कार्यों को उनके अन्तिम स्वरूप तक पहुँचता है। अतः औपचारिक संगठन को लाभप्रद संगठन माना जाता है। हेन्स तथा मेसी ने इसके कई लाभों को क्रमबद्ध किया है। आइये इनमें से कुछ को समझनों का प्रयास करें-

- इसके अन्दर किसी कार्य की पुनरावृत्ति सम्भव नहीं होती है।
- इसमें उत्तर दायित्व में अन्तर बहुत कम होता है।
- इसमें कार्यों के सम्पादन में टाल-मटोल की सम्भावना बहुत कम होती है।
- इसके अन्दर सुरक्षा की भावना प्रधान होती है।
- इसके द्वारा उद्देश्यों की प्राप्ति सुविधा जनक होती है।
- इसमें पक्षपात के अवसर पूर्णतः समाप्त हो जाते हैं।

जिस प्रकार एक सिक्के के दो पहलू होते हैं, ठीक उसी प्रकार एक ओर तो औपचारिक संगठन के अनगिनत लाभ हैं, किन्तु इसके दोषों की भी गिनती कम नहीं है। इसके प्रमुख दोषों में निम्नलिखित को सम्मिलित किया जा सकता है-

- इस संगठन में समन्वय की समस्या सदैव उपस्थित रहती है।
- इसके द्वारा पहल करने की शक्ति समाप्त हो जाती है। कार्य एक-दूसरे को स्थानान्तरित करने का प्रयास किया जाता है।
- प्रायः अधिकारी अपने अधिकारों का प्रयोग अपने फायदे के लिए करते हैं, जिससे भ्रष्टाचार को बढ़ावा मिलता है।
- यन्त्रवत होने के कारण ऐसे संगठन में मनुष्य से ज्यादा नियम और नीति प्रधान होते हैं।

इस प्रकार औपचारिक संगठन लाभ और हानि के वातावरण में नीचे से ऊपर की ओर या ऊपर से नीचे की ओर एक व्यवस्थित क्रम में व्यवस्थित रहते हैं, जिसे पदसोपानिक व्यवस्थित क्रम कहा जाता है। इस तथ्य का भी स्मरण रखना चाहिए कि औपचारिक संगठन बहुत से छोटे-छोटे संगठनों से मिलकर निर्मित होता है। बिना छोटे संगठनों को आत्मसात किये बड़ा संगठन बनना असम्भव होता है।

वस्तुतः औपचारिक संगठन के अन्तर्गत वे सभी उप-संगठन आते हैं। जिनके सभी अवयव, लाइन एवं स्टाफ के आधार पर पदसोपनिक क्रम में व्यवस्थित होते हैं, तथा जिसमें काफी तादाद में कर्मचारियों को रोजगार प्राप्त होता है। इसके अतिरिक्त औपचारिक संगठन संवैधानिक कानून से जकड़े हुए होते हैं, जिनके उल्लंघन पर कठोर दंण्ड का प्रावधान होता है।

10.7 अनौपचारिक संगठन

4:24
47
126

वस्तुतः औपचारिक संगठन के अन्तर्गत वे सभी उप-संगठन आते हैं। जिनके सभी अवयव, लाइन एवं स्टाफ के आधार पर पदसोपनिक क्रम में व्यवस्थित होते हैं, तथा जिसमें काफी तादाद में कर्मचारियों को रोजगार प्राप्त होता है। इसके अतिरिक्त औपचारिक संगठन संवैधानिक कानून से जकड़े हुए होते हैं, जिनके उल्लंघन पर कठोर दंण्ड का प्रावधान होता है।

10.7 अनौपचारिक संगठन

संगठन के अनौपचारिक विचार के मुख्य प्रवर्तक एल्टन मेयो तथा जिन्होंने वेस्टने बिजली कम्पनी के हॉथनि संयन्त्र के विषय में कुछ प्रयोगों के बाद पाया कि कुछ व्यक्तियों के अधिक समय तक एक साथ मिलकर कार्य करने के कारण उनमें औपचारिक सम्बन्ध से विपरीत सम्बन्ध विकसित हो गये हैं। जिसे उन्होंने अनौपचारिक संगठन कह कर सम्बोधित किया।

अनौपचारिक संगठन उस संगठन को कहते हैं, जिनका निर्माण व्यवस्थित एवं नियोजित रूप में नहीं होता है, बल्कि इसका निर्माण स्वयं में हो जाता है। इन्हें सामाजिक मनोवैज्ञानिक संगठन भी कहा जाता है।

दूसरे शब्दों में यदि कर्मचारियों के पारस्परिक सम्बन्धों को स्पष्ट करने के लिय किसी प्रकार की औपचारिकता नहीं बरती जाये, तो उसे अनौपचारिक संगठन कहा जायगा। एक संगठन उस दशा में अनौपचारिक कहा जाता है। जबकि अन्तर व्यैक्तिक सम्बन्धों की स्थापना संयुक्त उद्देश्यों के लिए अनजाने में ही विकसित हो जाती है। अतः अनौपचारिक संगठन ऐसे प्रक्रिया है, जिसमें व्यक्ति निरन्तर एक-दूसरे से अन्तर सम्पर्क करते हैं।

अनौपचारिक संगठनों को अक्सर प्रतिरूप संगठन और औपचारिक संगठनों का छाया-संगठन माना जाता है। उनकी कोई स्पष्ट परिभाषा नहीं है और ऐसा करना बहुत कठिन भी है। उसके कोई निश्चित संगठनात्मक लक्ष्य भी नहीं होते। सदस्यों के परस्पर संबंध भी निश्चित नहीं होते। स्वतः स्फूर्त, गैर-सरकारी और आकारहीन संबंधों से अनुकूल भावनाएँ उत्पन्न होती हैं, जिनसें परस्पर सपर्क बढ़ता है और जान-पहचान के बंधन मजबूत होते हैं।

लक्ष्यों के अभाव और आकारहीन संबंधों के कारण अनौपचारिक संगठनों में औपचारिक व्यवस्था के कानून-कायदों का आभाव पाया जाता है विभिन्न विचारकों ने सम्बन्ध में अनेक मत प्रस्तुत किये हैं। जिनमें से कुछ महत्वपूर्ण विचार निम्नलिखित हैं-

1. बर्नार्ड के मतानुसार, एक संगठन, उस समय अनौपचारिक माना जाता है, जब अर्न्तवैयक्तिक सम्बन्धों का समूह संयुक्त उद्देश्य के लिए अनजाने में स्थापित हो जाता है।
2. प्रो0 डेविस के मतानुसार, अनौपचारिक संगठन ऐसे व्यक्तिगत तथा सामाजिक सम्बन्धों का जाल है, जिसकी स्थापना औपचारिक संगठन द्वारा नहीं की जाती है।
3. साइमन के मतानुसार, अनौपचारिक संगठन का अर्थ संगठन में अर्न्तवेंयक्तिक सम्बन्धों का होना है, जो उसके अन्दरूनी फैसलों को प्रभावित करते हैं।

127

4. एल.डी. ह्वाइट के मतानुसार, अनौपचारिक संगठन ऐसे कार्यात्मक सम्बन्ध है, जो लम्बे समय तक एक साथ कार्य करने वाले लोगों की आपसी अन्तः क्रियाओं के परिणामस्वरूप विकसित होते हैं।

उपरोक्त मतों के सुव्यवस्थित विश्लेषण के अनुसार हम अनौपचारिक संगठन की निम्नलिखित

Edit Annotate Fill & Sign Convert All

3. साइमन के मतानुसार, अनौपचारिक संगठन का अर्थ संगठन में अन्तर्वैयक्तिक सम्बन्धों का होना है, जो उसके अन्दरूनी फैसलों को प्रभावित करते हैं।

4. एल.डी. ह्वाइट के मतानुसार, अनौपचारिक संगठन ऐसे कार्यात्मक सम्बन्ध है, जो लम्बे समय तक एक साथ कार्य करने वाले लोगों की आपसी अन्तः क्रियाओं के परिणामस्वरूप विकसित होते हैं।

उपरोक्त मतों के सुव्यवस्थित विश्लेषण के अनुसार हम अनौपचारिक संगठन की निम्नलिखित विशेषताओं का निरूपण कर क्रमबद्ध अध्ययन कर सकते हैं-

- अनौपचारिक संगठन का निर्माण स्वतः होता है। प्रायः इनका निर्माण निजी आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु किया जाता है।
- अनौपचारिक संगठन औपचारिक संगठन का पूरक होता है।
- इसका विकास आपसी सम्बन्धों, रीति-रिवाजों और सामूहिक समूहों के द्वारा होता है। इसके नियम एवं पद्धतियां अलिखित होती हैं।
- अनौपचारिक संगठन को चार्ट या मैन्युअल के द्वारा प्रदर्शित नहीं किया जाता है।
- ये सामाजिक संगठन होते हैं। इसमें मनुष्य की इच्छा, आकांक्षा पसन्द और नापसन्द का पूर्व ध्यान रखा जाता है, क्योंकि यह मान्यता है कि संगठन निर्माण में मनुष्य की सशक्त भूमिका होती है, जिससे सामाजिक संतुष्टि मिलती है।
- यह सम्पूर्ण संगठन का एक आंतरिक भाग होता है।
- यह प्रबन्ध के सभी स्तरों पर पाया जाता है।
- इसमें पदों की क्रमता से पूर्ण रूप से मुक्त होता है।

अभी तक हम औपचारिक तथा अनौपचारिक दोनों प्रकार के संगठन का विस्तार से अध्ययन कर चुके हैं किन्तु यह अध्ययन तब तक पूर्ण नहीं होता जब तक इनके मध्य अन्तरों को आत्मसात् न कर लिया जाये।

अभ्यास प्रश्न-

1. संगठन शब्द का वास्तविक अर्थ क्या है?
   क. नियोजन ख. व्यवस्थित संरचना ग.नियंत्रण घ. समन्वयन
2. किस विद्वान के अनुसार 'संगठन, विशिष्ट उद्देश्यों की प्रप्ति के लिये स्वेच्छा से निर्मित मानवीय समूह हैं।'
   क. मर्टन ख. मूने व रैले ग. इटजियोनि घ. टेलर
3. किसी विद्वान के अनुसार 'संगठन, कर्मचारियों और उनके कार्यों में एकीकरण व सामंजस्य स्थापित करने की क्रिया है।'
   क.किम्बल एवं किम्बाल ख. टेलर ग. मिलबर्ड घ. मिल
4. औपचारिक संगठन के कितने उप-भाग होते हैं?
   क. चार ख. पाँच ग. आठ घ. दो

क. किम्बल एवं किम्बाल   ख. टेलर   ग. मिलबर्ड   घ. मिल

4. औपचारिक संगठन के कितने उप-भाग होते हैं?

क. चार   ख. पाँच   ग. आठ   घ. दो

5. किस विद्वान के अनुसार 'अनौपचारिक संगठन ऐसे व्यक्तिगत तथा सामाजिक सम्बन्धों का जाल है, जिसकी स्थापना औपचारिक संगठन द्वारा नहीं की जाती है।'

क. मैकाइवर तथा पेज   ख. किम्बाल एवं किम्बाल   ग. टेलर   घ. प्रो0 डेविस

10.8 सारांश

लोक प्रशासन विषय के अन्तर्गत संगठन को सम्भवतः सर्वाधिक महत्वपूर्ण व गम्भीर अवधारणा के रूप में पहचाना जाता है, क्योंकि संगठन की अवधारणा को स्पष्ट रूप से समझने के पश्चात् ही लोक प्रशासन के अन्य सिद्धान्तों तथा अवधारणाओं को आत्मसात किया जा सकता है।

आधुनिक युग में संगठन प्रशासन का एक आवश्यक कार्य बन गया है, क्योंकि इसके बिना निर्धारित लक्ष्यों को पाना असम्भव है। प्रशासन की सफलता इस बात पर निर्भर करती है कि संगठन में काम करने वाले व्यक्ति मिल-जुलकर उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए कार्य करें। क्रमशः दो भागों में वर्गीकृत किया जा सकता है, यथा-औपचारिक तथा अनौपचारिक।

10.9 शब्दावली

अधिकार- आदेश देने की शक्ति तथा यह निश्चित कर लेना कि इन आदेशों का पालन किया जा रहा है।

केन्द्रीयकरण- यह बिंदु अथवा स्तर जहाँ सभी निर्णय लेने वाले अधिकार केन्द्रित रहते हैं। नियंत्रण- अधीनस्थों के कार्यों का मापन तथा सुधार जिससे यह आश्वस्त हो सके कि कार्य नियोजन के अनुसार किया गया है।

प्रशासन- नियमों तथा कानूनों के अन्तर्गत प्रकार्यों को सुनिश्चित करने वाली संस्था।

पदसोपान- संगठन में उच्चतम शिखर से निम्नतम तथा निम्नतम से उच्चतम शिखर तक पदों, कर्तव्यों तथा अधिकारों की व्यवस्था।

समन्वयात्मक- कार्य विशेष/संगठन से सम्बन्धित समस्त तत्वों के मध्य सामन्जस्य, जिससे पूर्व निर्धारित उद्देश्यों को प्राप्त किया जा सके।

10.10 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1-ख, 2-ग, 3-ग, 4-क, 5-घ

10.11 सन्दर्भ ग्रन्थ-सूची

1. Arora, Ramesh k, 1972 Comparative Public Administration : An Ecological Approach: Adociate Publishing House: New Delhi.
2. Bhattacharya, Mohit, 1987 Publi Administration " The World Press Private Ltd: Calcutta.
3. Prasad, Ravindra D. Etc. al 9eds.) 1989 Administrative thinkers:Sterling Publishers : New Delhi.

इकाई-11 संगठन की विचारधाराएँ

इकाई की संरचना

11.1 प्रस्तावना
11.2 उद्देश्य
11.3 शास्त्रीय विचारधारा
- 11.3.1 हेनरी फेयोल का योगदान
- 11.3.2 एम0पी0 फोलेट का योगदान
- 11.3.3 लूथर गुलिक का योगदान
- 11.3.4 लिण्डाक उर्विक का योगदान

11.4 मानव सम्बन्धी विचारधारा
- 11.4.1 एल्टन मेयो का योगदान
- 11.4.2 डगलस मैग्रेगर का योगदान

11.5 व्यवस्था सम्बन्धी विचारधारा
11.6 सारांश
11.7 शब्दावली
11.8 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
11.9 सन्दर्भ ग्रन्थ-सूची
11.10 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री
11.11 निबंधात्मक प्रश्न

11.1 प्रस्तावना

पिछली इकाई में आपने संगठन सम्बन्धी विभिन्न अवधारणाओं तथा परिभाषाओं को विस्तार से समझा। संगठन को समग्र रूप से समझनें के लिये सिद्धान्तों की आवश्यकता होती है ओर सिद्धान्तों का निरूपण विचारधाराओं की अभिव्यक्ति से होता है। इन विभिन्न सिद्धान्तों और विचारधाओं का सम्बन्ध संगठन संरचना तथा इसके विभिन्न कार्यों से होता है। जिसे विभिन्न प्रकार के कर्मचारी सम्पादित करते हैं।

वास्तव में विचारधाएं विद्वानों के अवधारणात्मक अनुभवों तथा प्रशासनिक परिथितियों के निरीक्षण से पैदा हुए विश्लेषणात्मक ज्ञान का परिणाम होता है। वैसे यह तुलनात्मक अध्ययनों से भी प्राप्त किये जा सकते हैं। प्रशासनिक विचारकों के अनुसार हमें सदैव उन विचारधाराओं को ही क्रियात्मक रूप में परिणित करनी चाहिए, जो तथ्यों पर आधारित हो, जिससे समयानुसार उसे परिणामों की कसौटी पर रखा जा सके। इनका सुव्यवस्थित, सुसंगत तथा तार्किक होना भी सफलता का प्रतीक होता है। इस इकाई के अन्तर्गत हम संगठन की तीन प्रमुख विचारधाराओं को विश्लेषित करने का प्रयास करेंगे- 1.शास्त्रीय विचारधारा, 2.मानव सम्बन्धी विचाराधारा, 3.व्यवस्था सम्बन्धी विचाराधारा।

4:25
47
131

11.2 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के उपरान्त आप-

- संगठन सम्बन्धी शास्त्रीय विचारकों के बहुमूल्य विचारों का विश्लेषण कर सकेंगे।
- संगठन की मानव सम्बन्धी विभिन्न विचार धाराओं को समझ सकेंगे।
- संगठन से जुड़ी व्यवस्था सम्बन्धी विचारधारा को आत्मसात कर सकेंगे।

11.3 शास्त्रीय विचारधारा

लोक प्रशासन को समग्र रूप से समझने के लिए प्रशासनिक सिद्धान्त की आवश्यकता होती है। प्रशासनिक सिद्धान्त का सम्बन्ध प्रशासनिक संरचना तथा सरकार के कार्यों से होता है, इसके अर्थ को स्पष्ट करते हुए विलोनी ने लिखा है कि "प्रशासनिक सिद्धान्त, प्रशासकों के अवधारणात्मक अनुभवों तथा प्रशासनिक परिस्थितियों के निरीक्षण से पैदा हुई अवधारणाओं पर आधारित होती है।"

संगठन समबन्धी सर्वाधिक प्राचीन विचारधाराओं को ही शास्त्रीय विचारधारा की संज्ञा दी जाती है। इसे यांत्रिक दृष्टिकोण भी कहा जाता है, यह संगठन का पुराना दृष्टिकोण है, इसलिए इसे परम्परागत दृष्टिकोण पर आधारित सिद्धान्त भी कहा जाता हैं। इस विचारधारा के प्रबल समर्थकों में हेनरी फेयोल, उर्विक, फालेट, तथा लूथर गुलिक आदि विचारकों को रखा जाता है।

शास्त्रीय विचारकों ने गम्भीरतापूर्वक उन आधारों की खोज का प्रयत्न किया है, जिनके अनुसार संगठन में कार्य विभाजन, कार्यों के समन्वयन, इनकी सुव्यवस्थित परिभाषा, कर्मचारियों पर नियंत्रण, आदि के संदर्भ में अपने विचारों को प्रस्तुत करने का प्रयास किया हैं। इस विचारधारा के समर्थकों का मानना है कि संगठन के किसी कार्य को सम्पादित करने से पूर्व उसके कार्यों की रूपरेखा या ढाँचा तैयार कर लेना चाहिए।

सभी ने एक स्वर में कहा कि प्रशासन, प्रशासन होता है, चाहे उसके द्वारा किसी प्रकार के कार्य किसी परिप्रेक्ष्य में क्यों न सम्पादित किया जाए। प्रशासन बिना सुव्यवस्थित संगठनात्मक संरचना के नहीं किया जा सकता है।

वस्तुतः इस विचारधारा में मनुष्यों की अपेक्षा कार्यों पर अधिक ध्यान दिया जाता है, यह दृष्टिकोण अवैयक्तिक है, जिसमें दक्षता पर अत्यधिक बल दिया जाता है। इस अवधारणा का मुख्य लक्षण है- अवैयक्तिकता, कार्य-विभाजन, पदसोपान एवं दक्षता। आइये इस विचारधारा से जुड़े प्रमुख विद्वानों की विचारधाराओं को विस्तार से समझने का प्रयास करें-

11.3.1 हेनरी फेयोल का योगदान

हेनरी फेयोल का जन्म फ्रांस में 1841 में हुआ था। इन्होंने 19 वर्ष की आयु में खनिज अभियन्ता की विशेष योग्यता प्राप्त करने के बाद 1860 में फ्रांस की एक कोयला खान में इंजीनियर पद पर कार्य प्रारम्भ किया। हेनरी फयोल ने कई पुस्तकों की रचना की, इनकी अधिकांश पुस्तकें फ्रेंच भाषा में थी। इनकी सर्वाधिक महत्वपूर्ण पुस्तक "जनरल एण्ड इंडस्ट्रियल मैनजमेंट" है जिसमें इनके विचारों की

132

अभिव्यक्ति मिलती है। जो मूल रूप से सन् 1919 में फ्रेंच भाषा ओर सन् 1929 में अंग्रेजी में प्रकाशित हुई। इन्हें प्रशासन एवं 'प्रबन्ध के सिद्धान्तों के जनक' के नाम से जाना जाता है।

फेयोल पहले ऐसे व्यक्ति थे, जिन्होंने कहा था कि प्रशासनिक कार्य अन्य कार्यों की अपेक्षा बिल्कुल

Edit Annotate Fill & Sign Convert All

4:25

47

अवैयक्तिक है, जिसमें दक्षता पर अत्यधिक बल दिया जाता है। इस अवधारणा का मुख्य लक्षण है- अवैयक्तिकता, कार्य-विभाजन, पदसोपान एवं दक्षता। आइये इस विचारधारा से जुड़े प्रमुख विद्वानों की विचारधाराओं को विस्तार से समझने का प्रयास करें-

11.3.1 हेनरी फेयोल का योगदान

हेनरी फेयोल का जन्म फ्रांस में 1841 में हुआ था। इन्होंने 19 वर्ष की आयु में खनिज अभियन्ता की विशेष योग्यता प्राप्त करने के बाद 1860 में फ्रांस की एक कोयला खान में इंजीनियर पद पर कार्य प्रारम्भ किया। हेनरी फयोल ने कई पुस्तकों की रचना की, इनकी अधिकांश पुस्तकें फ्रेंच भाषा में थी। इनकी सर्वाधिक महत्वपूर्ण पुस्तक ''जनरल एण्ड इंडस्ट्रियल मैनजमेंट'' है जिसमें इनके विचारों की

अभिव्यक्ति मिलती है। जो मूल रूप से सन् 1919 में फ्रेंच भाषा ओर सन् 1929 में अंग्रेजी में प्रकाशित हुई। इन्हें प्रशासन एवं 'प्रबन्ध के सिद्धान्तों के जनक' के नाम से जाना जाता है।

फेयोल पहले ऐसे व्यक्ति थे, जिन्होंने कहा था कि प्रशासनिक कार्य अन्य कार्यों की अपेक्षा बिल्कुल अलग है। अतः प्रशासक वही हो सकता है जिसमें कुछ विशेष प्रतिभा हो। फेयोल के विचारानुसार प्रत्येक क्रिया समूह के साथ एक विशेष क्रिया रहती है। ऐसी योग्यता को तकनीकी योग्यता के नाम में सम्मिलित किया जा सकता है। आप ने प्रबन्ध के स्थान पर प्रशासन शब्द का प्रयोग किया है और उन्होंने इसके पाँच तत्व बताये हैं जो क्रमशः भविष्यवाणी, नियोजन, संगठन, समन्वय, आदर्श एंव नियंत्रण हैं। संगठन के सफल संचालन के लिये आपने निम्नलिखित 14 सिद्धान्तों का प्रतिपादन किया है। आइये क्रमशः इन्हें समझने का प्रयास करें-

1. **कार्य विभाजन का सिद्धांत-** इस सिद्धांत के अनुसार उद्देश्य प्राप्ति हेतु कर्मचारियों में उनकी योग्यता और कुशलतानुसार कार्य का विभाजन सुनिश्चित किया जाना चाहिए। इससे उत्पादकता बढ़ती है और तकनीकी तथा प्रशासकीय कार्य निष्पादन का स्तर ऊँचा होता है।
2. **अधिकार एवं दायित्व-** यदि किसी व्यक्ति को किसी कार्य को करने का दायित्व सौंपा जाए तो कार्य के सुव्यवस्थित निष्पादन हेतु आवश्यक अधिकार भी दिये जाने चाहिए। बिना अधिकार के कोई भी व्यक्ति कुशलतापूर्वक अपने कर्तव्यों का निर्वाह सुनिश्चित नहीं कर सकता
3. **अनुशासन-** फेयोल के अनुसार अनुशासन से अभिप्राय संगठन के नियमों के प्रति आस्था, आज्ञाकारिता तथा श्रद्धा से है। कर्मनिष्ठा तथा आदेश का पालन करना ही अनुशासन है। अनुशासन प्रशासकों के व्यक्तिव पर निर्भर करता है। इसके के अभाव में कोई भी संगठन समृद्ध नहीं हो सकता। अनुशासन बनाये रखने के लिए अच्छा पर्यवेक्षण, अनुशासन के नियमों की स्पष्टता, पुरस्कार तथा दण्ड की व्यवस्था का होना आवश्यक है।
4. **आदेश की एकता-** संगठन में एक व्यक्ति, एक अधिकारी के सिद्धान्त का पालन होना चाहिए। इससे यह लाभ होता है कि कर्मचारी एक ही अधिकारी के प्रति उत्तरदायी होता है तथा निर्देशों में स्पष्टता रहती है।
5. **निर्देशन की एकता-** इस सिद्धांत के अनुसार यदि संगठन का उद्देश्य एक है तो प्रबन्धक को सभी क्रियाओं के लिए एक ही निर्देशों का पालन करना चाहिए। यह सिद्धान्त कार्य में एकरूपता लाने, समन्वय तथा प्रयासों पर उचित ध्यान देने के लिए अत्यन्त आवश्यक है।
6. **उचित पारिश्रमिक-** हेनरी फेयोल के मतानुसार, कर्मचारियों की पारिश्रमिक दर तथा भुगतान की विधि उचित व सन्तोषप्रद होनी चाहिए। उन्होंने संगठन में कर्मचारियों को प्रोत्साहन देने के लिए गैर-वित्तीय प्रेरणाएं अपने पर भी बल दिया है।
7. **सामुदायिक हितों के लिए व्यक्तिगत हितों का समर्पण-** सदस्यों के व्यक्तिगत हितों तथा संकीर्ण विचारों को संगठन के सामूहिक हितों पर सदैव प्राथमिकता दी जानी चाहिए। यद्यपि कुशल प्रशासको को सामान्य एवं व्यक्तिगत हितों में समन्वय रखना चाहिए परन्तु

Edit Annotate Fill & Sign Convert All

4:25 47

यदि दोनों में संघर्ष हो जाये तो व्यक्तिगत हितों की अपेक्षा सामुदायिक हितों को प्राथमिकता देनी चाहिए।

8. **पदाधिकारी सम्पर्क श्रृंखला**- 'पदाधिकारी सम्पर्क श्रृंखला' का तात्पर्य सर्वोच्च पदाधिकारी से लेकर निम्नतम पदाधिकारी के बीच सम्पर्क की व्यवस्था के क्रम से है। वरष्ठि एवं अधीनस्थ के मध्य सम्बन्धों की स्पष्ट श्रृंखला निर्धारित होनी चाहिए और श्रृंखला का उल्लंघन नहीं किया जाना चाहिए।
9. **केन्द्रीयकरण**- संगठन के प्रशासन में केन्द्रीकरण को अपनाया जाए या विकेन्द्रीकरण को, इसका निर्णय संस्था के हितों, कर्मचारियों की मनोभावनाओं तथा कार्य प्रकृति आदि सभी बातों का ध्यान रख कर किया जाना चाहिए।
10. **व्यवस्था**- प्रत्येक वस्तु, यन्त्र तथा कर्मचारियों के लिए एक नियत स्थान व्यवस्थित क्रम में होना चाहिए।
11. **समता**- कार्य करने में लगे सभी कर्मचारियों के साथ उचित व्यवहार करने को समता कहा जाता है। समता का आशय कर्मचारियों के प्रति न्यायोचित तथा उदारता का भाव रखने से है, अर्थात समता, न्याय तथा दया का मिश्रण है। कर्मचारियों के साथ समानता का व्यवहार करने से कर्मचारियों में कार्य के प्रति लगन तथा संस्था के प्रति सम्मान पैदा होती है।
12. **स्थायित्व**- जहाँ तक सम्भव हो सके कर्मचारियों के कार्यकाल में स्थायित्व होना चाहिए, जिससे वे निश्चित होकर समर्पण से कार्य कर सकें। कर्मचारियों द्वारा जल्दी-जल्दी संस्था को छोड़कर चले जाना भी प्रायः कुप्रबंधन का ही परिणाम होता है। किसी कर्मचारी को नए कार्य को सीखने तथा कुशलतापूर्वक उसका निर्वहन करने में समय लगना स्वाभाविक है। अतः यदि उसे काम सीखने का समुचित समय न दिया जाय तो यह न्याय न होगा।
13. **पहल क्षमता**- पहल क्षमता से अभिप्राय किसी योजना को सोचने, प्रस्तावित करने और उसके क्रियान्यवयन की स्वतन्त्रता से है। प्रत्येक प्रबन्धक को अपने अधीन काम करने वाले व्यक्तियों में पहल की भावना को जाग्रत करना चाहिए। अधीनस्थ कर्मचारियों के अच्छे सुझाव एवं योजनाओं को क्रियान्वित तथा सराहना की जानी चाहिए। इससे कर्मचारी विकास को बल मिलेगा, सीखने का अवसर प्राप्त होगा और उनमें उत्तरदायित्व की भावना का विकास होगा।
14. **सहकारिता एवं संघ शक्ति की भावना**- संगठन की शक्ति, उसकी एकता, सहयोग और एक सूत्र में बंधे रहने में ही है। यदि सभी एक सूत्र में बंधकर कार्य नहीं करेंगे तो संगठन शीघ्र ही बिखर जायेगा और सामान्य उद्देश्यों की उपलब्धि संभव नहीं होगी। इसके लिए आदेश में एकता, सहयोग तथा संघीय शक्ति की ताकत में अटूट विश्वास आवश्यक है।

फेयोल को प्रशासनिक प्रबन्ध के क्षेत्र का एक महान विद्वान माना जाता है। इनके विचारों से प्रशासनिक सिद्धान्त के विकास हेतु मार्ग निर्धारण हुआ, इन्होंने नियोजन कार्य पर महत्व दिया, अधिकार अन्त:करण की महत्वपूर्ण समस्या पर जोर डाला और स्पष्ट किया कि संगठन के सिद्धान्त

सर्वव्यापी हैं और प्रशासन के प्रत्येक क्षेत्र में लागू हो सकते हैं। इस प्रकार आपके विचारों से पूर्ण रूप से स्पष्ट है कि ''आधुनिक प्रशासनिक संगठन के वास्तविक पिता हेनरी फेयोल ही है।''

11.3.2 एम0 पी0 फोलेट का योगदान

Edit Annotate Fill & Sign Convert All

4:25
47

एक सूत्र में बंधे रहने में ही है। यदि सभी एक सूत्र में बंधकर कार्य नहीं करेंगे तो संगठन शीघ्र ही बिखर जायेगा और सामान्य उद्देश्यों की उपलब्धि संभव नहीं होगी। इसके लिए आदेश में एकता, सहयोग तथा संघीय शक्ति की ताकत में अटूट विश्वास आवश्यक है।

फेयोल को प्रशासनिक प्रबन्ध के क्षेत्र का एक महान विद्वान माना जाता है। इनके विचारों से प्रशासनिक सिद्धान्त के विकास हेतु मार्ग निर्धारण हुआ, इन्होंने नियोजन कार्य पर महत्व दिया, अधिकार अन्त:करण की महत्वपूर्ण समस्या पर जोर डाला और स्पष्ट किया कि संगठन के सिद्धान्त

सर्वव्यापी हैं और प्रशासन के प्रत्येक क्षेत्र में लागू हो सकते हैं। इस प्रकार आपके विचारों से पूर्ण रूप से स्पष्ट है कि ''आधुनिक प्रशासनिक संगठन के वास्तविक पिता हेनरी फेयोल ही है।''

11.3.2 एम0 पी0 फोलेट का योगदान

एम0 पी0 फोलेट एक प्रसिद्ध सामाजिक, राजनैतिक दार्शनिक थी। इसका जन्म अमेरिका के बोस्टन नगर में 1868 में हुआ था। फोलेट के अनुसार व्यक्तियों का एक समूह केवल समूह मात्र ही नहीं होता अपितु समूह में एक सामूहिक शक्ति भी होती है। समूह की सामूहिक शक्ति उसके सदस्यों द्वारा किये गये प्रयत्नों से प्रकट होती हैं। व्यक्तिगत समूहों के मानवीय प्रयत्नों द्वारा समाज को विभिन्न प्रकार की उपयोगी सेवायें प्रदान की जाती हैं। उन्होंने समन्वयन पर अपना ध्यान केन्द्रित किया और इस प्रक्रिया से संबंधित कुछ सिद्धांतों को प्रतिपादित किया। आइये इन सिद्धान्तों को क्रमवार समझने का प्रयास करें-

1. **मानीवय दृष्टिकोण-** फोलेट के अनुसार संगठन की समस्त समस्याओं के विवरण के लिये मानवीय दृष्टिकोण के सिद्धान्त को अपनाया जाना चाहिये। उन्होंने यह भी बताया कि नियोक्ता और कर्मचारियों के बीच क्रियात्मक सहयोग की स्थापना करके प्रबन्ध को अत्यधिक प्रभावी बनाने का प्रयत्न किया जाना चाहिए।
2. **प्रत्यक्ष सम्पर्क का सिद्धांत-** किसी भी प्रकार का समन्वय करने में प्रबन्धकों व अन्य व्यक्तियों को एक दूसरे के साथ प्रत्यक्ष सम्पर्क करना चाहिए। उन्होनें प्रशासकों द्वारा अपनाई जाने वाली पदानुक्रमिका को त्याग देने का सुझाव दिया था। जिससे देरी करने, अधिक समय लेने वाली संवहन की विधियों से छुटकारा मिल जाता तथा प्रशासन में भ्रष्टाचार की संभावना क्षीण हो जायेगी।
3. **समन्वय-** फोलेट ने बताया कि समन्वय न तो एक बार करने की प्रक्रिया है और न ही निर्धारित समय के पश्चात् यह तो एक सतत् प्रक्रिया है। प्रशासकों को तो संगठन के कार्यों को सुव्यवस्थित रूप से चलाने के लिए सदैव ही सर्तक रहना पड़ता है। कर्मचारी, उच्च अधिकारी एवं जनता आदि सभी पक्षों के हित में समन्वय होना अति आवश्यक है।
4. **नियन्त्रण-** फोलेट के अनुसार एक प्रशासक को संगठन में नियन्त्रण तथ्यों का किया जाना चाहिये, न कि मनुष्यों का। इसके अतिरिक्त उन्होंने यह भी स्पष्ट किया कि प्रशासक अपनी योग्यता, कुशलता एवं दूरदर्शिता के आधार पर परिस्थितियों को सही ढंग से समझने में सक्षम होना चाहिए।
5. **नेतृत्व-** फोलेट आक्रात्मक नेतृत्व के विरूद्ध थी। उनके अनुसार नेतृत्व सद्भावना और सहयोग पर आधारित होना चाहिये। आपके अनुसार एक अच्छा नेतृत्व केवल अपने अनुगामियों का मार्गदर्शन ही नहीं करता, अपितु उससे स्वयं भी मार्गदर्शन प्राप्त करता है। नेता इस बात का प्रयत्न करता है कि उसके अनुगामी अपनी योग्यता का सर्वश्रेष्ठ प्रदर्शन करें।

Edit Annotate Fill & Sign Convert All

4:25

47

135

योग्यता, कुशलता एवं दूरदर्शिता के आधार पर परिस्थितियों को सही ढंग से समझने में सक्षम होना चाहिए।

5. **नेतृत्व-** फोलेट आक्रात्मक नेतृत्व के विरूद्ध थी। उनके अनुसार नेतृत्व सद्भावना और सहयोग पर आधारित होना चाहिये। आपके अनुसार एक अच्छा नेतृत्व केवल अपने अनुगामियों का मार्गदर्शन ही नहीं करता, अपितु उससे स्वयं भी मार्गदर्शन प्राप्त करता है। नेता इस बात का प्रयत्न करता है कि उसके अनुगामी अपनी योग्यता का सर्वश्रेष्ठ प्रदर्शन करें।

11.3.3 लूथर गुलिक का योगदान

लूथर गुलिक ने अपने अनुभवों तथा अध्ययनों को समन्वित करके संगठन के सामान्य सिद्धांतों का निर्माण किया आप संगठनात्मक कुशलता के स्तर को बढ़ाने वाले तटस्थ सिद्धांतों के समर्थक थे। आपने 'पेपर्स आन साईस ऑफ एडमिनिस्ट्रेशन' (1937) नामक पुस्तक का संपादन किया। आप राष्ट्रपति की प्रशासनिक प्रबंध समिति के सदस्य भी थे।

गुलिक टेलर एवं फेयोल से बहुत अधिक प्रभावित थे। गुलिक ने फेयोल के प्रशासन के पाँच तत्वों- योजना, संगठन, आदेश, समन्वय तथा नियंत्रण को अपने तटस्थ सिद्धातों के रूप में प्रयोग किया। गुलिक ने प्रशासन के कर्तव्यों को संक्षिप्त रूप से पोस्डकार्ब शब्द(एक्रोनिम) की संज्ञा देकर प्रस्तुत किया। आइये इनके विस्तार को समझें का प्रयास करें-

1. **योजना-** इसका तात्पर्य संपन्न किए जाने वाले कार्यों का निर्धारण तथा संगठन के निर्धारित उद्देश्य की प्राप्ति के लिए उन्हें संपन्न करने के तरीकों का निर्धारण से है।
2. **संगठन-** से तात्पर्य औपचारिक सत्ता संगठन की स्थापना करना जिसके माध्यम से निर्धारित उद्देश्य के कार्य-उपभागों को व्यवस्थित, परिभाषित या समन्वित किया जाता है।
3. **कार्मिक संबंधी कार्य-** से तात्पर्य कर्मचारियों की भर्ती तथा प्रशिक्षण कार्य के अनुकूल स्थिति बनाना।
4. **निर्देशन करना-** इसका अर्थ निर्णय करना और इन्हें विशिष्ट और सामान्य आदेशों और निर्देशों का रूप प्रदान करना।
5. **समन्वय करना-** इसके अन्तर्गत कार्य के विभिन्न भागों में पारस्परिक सम्बन्ध स्थापित करना, आता हैं संगठन में यह सर्वाधिक महत्वपूर्ण कार्य है।
6. **प्रतिवेदन देना-** कार्यपालिका जिसके प्रति उत्तरदायी होती है, उन्हें प्रशासन की गतिविधियों से अवगत रखने की प्रक्रिया को प्रतिवेदन की संज्ञा दी जाती है।
7. **बजट बनाना-** संगठन के आय व्यय हेतु वार्षिक बजट सम्बन्धी कार्यों को सम्पादित करना।

11.3.4 लिण्डॉल उर्विक का योगदान

शास्त्रीय विचारधारा के महत्वपूर्ण विचारकों में आपको सम्मिलित किया जाता है। आपने संगठन के निम्न सिद्धान्तों का प्रतिपादन किया है। आइये इन्हें क्रमशः आत्मसात् करने का प्रयास करें-

1. **उद्देश्य का सिद्धान्त-** आपके अनुसार संगठन के उद्देश्यों की पूर्ण एवं स्पष्ट परिभाषा दी जानी चाहिए। इसके सहायक उद्देश्यों में स्पष्ट अन्तर किया जाना चाहिए जिससे कि प्रशासकीय कार्यों को मुख्य उद्देश्य के प्रति अधिक प्रभावपूर्ण बनाया जा सके। संगठन के स्वरूप का निर्माण इस प्रकार किया जाना चाहिए, जिससे संगठन के उद्देश्यों की प्राप्ति में व्यक्तिगत प्रयासों का अधिकतम सहयोग मिल सके।

Edit Annotate Fill & Sign Convert All

प्रशासकीय कार्यों को मुख्य उद्देश्य के प्रति अधिक प्रभावपूर्ण बनाया जा सके। संगठन के स्वरूप का निर्माण इस प्रकार किया जाना चाहिए, जिससे संगठन के उद्देश्यों की प्राप्ति में व्यक्तिगत प्रयासों का अधिकतम सहयोग मिल सके।

2. **नियन्त्रण के क्षेत्र का सिद्धान्त-** इस सिद्धान्त के अनुसार किसी वरिष्ठ अधिकारी के अधीन अधीनस्थों की संख्या केवल उतनी ही होनी चाहिए कि कार्यों पर वह उचित नियन्त्रण स्थापित कर सके। जिससे कार्य सुव्यवस्थित रूप् से सम्पन्न हो सके।
3. **व्याख्या का सिद्धान्त-** एक कुशल संगठन के लिए यह भी आवश्यक है कि प्रत्येक अधिकारी के अधिकार, कर्तव्य, दायित्व की स्पष्ट व्याख्या हो, जिससे कार्य के निष्पादन में किसी प्रकार की भ्रान्त धारणा न रहे।
4. **समन्वय का सिद्धान्त-** संगठन का उद्देश्य प्रशासन के विभिन्न कार्यों, साधनों तथा व्यक्तियों की क्रियाओं में समन्वय स्थापित करना है।
5. **विशिष्टीकरण का सिद्धान्त-** इस सिद्धान्त के अनुसार संगठन के प्रत्येक व्यक्ति को वही कार्य आवंटित करना चाहिए, जिसके लिए वह शारीरिक व मानसिक दृष्टि से क्षमतावान हो। जिससे वह अपना सर्वोतम योगदान प्रस्तुत कर सके।
6. **पदाधिकारियों में सम्पर्क का सिद्धान्त-** इस सिद्धान्त के अनुसार संगठन ऊपर से नीचे की ओर वरिष्ठता तथा अधीनता के क्रम से परस्पर सम्बद्ध होना चाहिए। जहाँ तक सम्भव हो, अधीनस्थ को अपने वरिष्ठ की सत्ता का उल्लंघन नहीं करना चाहिए। इससे अनुशासन को बनाये रखने में सहायता मिलती है।
7. **निरन्तरता का सिद्धान्त-** संगठन एवं पुनर्संगठन की विधि निरन्तर चालू रहती है। अतः इसके लिए प्रत्येक इकाई में विशिष्ट व्यवस्थाओं को निर्माण होना चाहिए। संगठन व्यवस्था न केवल तात्कालिक क्रियाऐं लिए अपितु भविष्य में इन क्रियायों को बनाये रखने के लिए भी पर्याप्त होनी चाहिए।

संगठन के शास्त्रीय सिद्धान्त की यह कह कर विद्वानों ने आलोचना की है कि इस सिद्धान्त से यह स्पष्ट नहीं होता है कि किस विशेष स्थिति में कोन सा सिद्धान्त महत्व देने योग्य है? साइमन ने प्रशासन के सिद्धान्तों को प्रशासन की कहावतें मात्र कह कर इनका उपहास किया है। क्योंकि यह एक संकुचित विचार है जो व्यक्तियों के संगठन में उनके साथियों से अलग रखकर निरीक्षण करता है, अर्थात यह व्यक्ति परक है।

इन कमियों के बावजूद प्रशासन के क्षेत्र में शास्त्रीय विचारधार के योगदान की उपेक्षा नहीं की जा सकती। इस दृष्टिकोण की कमियों ने संगठन तथा उसके व्यवहार के भावी शोध की प्रेरणा प्रदान की इस प्रकार यह दृष्टिकोण संगठन की विचारधाराओं के विकास क्रम में में मील आधार का कार्य करता है।

11.4 मानव सम्बन्धी विचारधारा

मानवीय संबंधों से हमारा तात्पर्य मुख्यतः नियोक्ताओं और कार्मिकों के उन संबंधों से है, जो कानूनी मानकों द्वारा नियंत्रित नहीं होते। ये संबंध कानूनी तत्वों की अपेक्षा नैतिक और मनोवैज्ञानिक तत्वों से अधिक संबंधित है। इस विचारधारा के समर्थकों का यह दृष्टिकोण इस तथ्य पर आधारित है कि

प्रशासन का कार्य व्यक्तियों को समझने तथा वे क्या करते हैं ओर क्यों करते हैं, पर अधिक केन्द्रीत करने की आवश्यकता पर बल दिया है।

इस विचारधारा के अनुसार, संगठन की समस्याओं के समाधान के लिए सामाजिक और मनोविज्ञान के व्यवहार के प्रयोग में लाया जाता है। वास्तव में मानवीय सम्बन्ध अभिप्रेरणा, सम्प्रेषण व्यवस्था, प्रशिक्षण, नेतृत्व आदि प्रबन्धकीय विधियों के अंतर्गत आते हैं। इसलिए इस दृष्टिकोण को मानवीय सम्बन्ध, नेतृत्व व्यावहारिक विज्ञान की संज्ञा भी दी जाती है।

11.4.1 एल्टन मेयो का योगदान

अमेरिका के हार्वर्ड यूनिवर्सिटी के समाजशास्त्री जार्ज ईल्टन मेयो ने अपने विचारों की स्थापना 1920 से लेकर 1930 तक वैस्टर्न इलैक्ट्रिक कम्पनी के हॉथॉन कारखाने में विभिन्न प्रयोगों के आधार पर की हाथोर्न प्रयोगों ने उद्योगों में मानवीय संबंधों की नींव डाली और यह सिद्ध कर दिया कि भौतिक तत्वों की तुलना में उत्पादकता में वृद्धि की दृष्टि से मानवीय तथा सामाजिक तत्व अधिक प्रभावपूर्ण होते हैं। परंतु बाद में किये गये अनेक शोध अध्ययनों ने यह इंगित किया है कि हाथोर्न प्रयोगों द्वारा प्रतिपादित मानवीय संबंध सिद्धांत यद्यपि उपयोगी हैं, परंतु वे आज की बदली हुई परिस्थितियों में कर्मचारियों तथा संगठन के विकास संबंधी समस्याओं का पूर्ण निराकरण करने में पूर्णतः सक्षम सिद्ध नहीं हो पा रहे हैं।

अमेरिका की वैस्टन इलेक्ट्रिक कम्पनी के हॉथोर्न कारखाने में मानवीय समबन्धों के बारे में जो परीक्षण किये गये हैं उन्हें हॉथोर्न प्रयोग के नाम से जाना जाता है। इस कारखाने के कर्मचारियें में अत्यधिक असन्तोष व्याप्त था। जिसके कारण कारखाने में उत्पादन लगातार कम होता जा रहे थी। अधिकारियों ने उत्पादन बढ़ाने के लिए अनेक प्रयत्न किये, किन्तु परिणाम विपरीत ही रहा। अन्त में परेशान होकर अधिकारियों ने 'हार्वर्ड स्कूल ऑफ बिजनेस एडमिनिस्ट्रेशन' से इस सम्बन्ध में सहयोग माँगा।

इस सम्बन्ध में जार्ज ईल्टन मेयो ने अनेक अध्ययन किये। परिणामतः इस तथ्य का खुलासा हुआ कि कार्यशील घण्टों, मजदूरी अथवा कार्य की दशाओं से भी अधिक महत्वपूर्ण कोई कारक है और वह है कर्मचारियों की अपने कार्यों के प्रति अभिवृत्तियाँ, जो कि कर्मचारियों की उत्पादकता में प्रत्यक्ष रूप से वृद्धि करता है।

ईल्टन मेयो एवं उनके सहयोगियों ने चार से बारह सप्ताह की अवधि में विभिन्न प्रयोग किये। जिनमें कर्मचारियों को भिन्न-भिन्न प्रकार की कार्य-दशायें दी गयी। संक्षेप में इन प्रयोगों से प्राप्त परिणामों को निम्नलिखित क्रम से प्रस्तुत कर आत्मसात् किया जा सकता है-

1. सामान्य कार्य-दशाओं के अन्तर्गत 48 घण्टे प्रति में प्रत्येक महिला कर्मचारी ने प्रति सप्ताह 2,400 रिलेज यन्त्र का उत्पादन किया।
2. इसके पश्चात् महिला कर्मचारियों से कार्यानुसार मजदूरी पर उत्पादन कराया गया, जिसके परिणामस्वरूप उत्पादन में वृद्धि हुई।

3. इसके पश्चात् पाँच सप्ताह तक पाँच-पाँच मिनट के दो विश्राम दिये गये। इसके परिणामस्वरूप उत्पादन में पुनः वृद्धि हुई।
4. इसके पश्चात् दोनों विश्राम के समय को बढ़ाकर दस-दस मिनट कर दिया गया। इसके परिणामस्वरूप उत्पादन में तेजी से वृद्धि हुई।
5. इसके पश्चात् पाँच-पाँच मिनट के छः विश्राम दिये गये। जिसके परिणामस्वरूप उत्पादन में कमी आयी और महिला कर्मचारियों ने यह शिकायत की कि बार-बार विश्रामों के कारण उनके कार्य का क्रम टूट जाता है।
6. इसके पश्चात् विश्रामों की संख्या घटाकर दो कर दी गई और प्रथम विश्राम के दौरान कम्पनी ने नाश्ते की व्यवस्था की जिसके परिणामस्वरूप उत्पादन में तेजी से वृद्धि हुई।
7. इसके पश्चात् महिला कर्मचारियों के कार्य का समय आधा घण्टा प्रति दिन घटा दिया गया, अर्थात् अब उनकी छुट्टी सायं 5 बजे के स्थान पर 4.30 बजे होने लगी। इसके परिणामस्वरूप उत्पादन में वृद्धि हुई।
8. इसके पश्चात् महिला कर्मचारियां की छुट्टी आधा घंटा और घटाकर 4 बजे होने लगी लेकिन उत्पादन पहले के समान ही रहा।

अन्त में सारी सुविधायें समाप्त करके उन्हें पुरानी दशाओं में ही कार्य कराया जाने लगा और यह आश्चर्यजनक तथ्य सामने आया कि उत्पादन का सबसे ऊँचा रिकार्ड रहा, जो कि प्रत्येक महिला कर्मचारी का 48 घण्टे का प्रति सप्ताह का औसत 3,000 रिलेज यन्त्र हो गया।

परिणामतः यह कहा जा सकता है कि हॉथोर्न प्रयोगों ने इस बात को सिद्ध कर दिया है कि यदि कर्मचारियों के साथ मानवीय व्यवहार किया जाये तो उनसे अधिक सहयोग प्राप्त किया जा सकता है और संगठन के पूर्व निर्धारित लक्ष्यों को प्राप्त किया जा सकता है। मेयो के अन्य योगदानों में निम्नलिखित को सम्मिलित किया जा सकता है-

- मानवीय सम्बन्ध विचारधारा का प्रतिपादन,
- कर्मचारियों को गैर-आर्थिक प्रेरणा,
- सम्प्रेषण की व्यवस्था,
- संगठन का एक सामाजिक व्यवस्था के रूप में होना,
- रचनात्मक नेतृत्व का पाया जाना,
- कर्मचारियों का विकास होना।

11.4.2 डगलस मैग्रेगर का योगदान

डगलस मैग्रेगर अमेरिका में मिशीगन विश्वविद्यालय के प्रोफेसर थे। आपने प्रशासकों की कर्मचारियों के प्रति प्रशासकीय समस्याओं का समाधान करने के लिये व्यावहारिक विज्ञान को आधार बनाया।

आपने एक्स 'X' सिद्धांत और वाई 'Y' सिद्धान्त का प्रतिपादन किया जो कि काफी लोकप्रिय है।

4:25
47

- संगठन का एक सामाजिक व्यवस्था के रूप में होना,
- रचनात्मक नेतृत्व का पाया जाना,
- कर्मचारियों का विकास होना।

11.4.2 डगलस मैग्रेगर का योगदान

डगलस मैग्रेगर अमेरिका में मिशीगन विश्वविद्यालय के प्रोफेसर थे। आपने प्रशासकों की कर्मचारियों के प्रति प्रशासकीय समस्याओं का समाधान करने के लिये व्यावहारिक विज्ञान को आधार बनाया।

आपने एक्स 'X' सिद्धांत और वाई 'Y' सिद्धान्त का प्रतिपादन किया जो कि काफी लोकप्रिय है। आइये इन दोनों सिद्धान्तों को क्रमशः समझने का प्रयास करें-

1. **एक्स 'X' सिद्धांत-** इस सिद्धांत के अनुसार, मनुष्य स्वभावतः आलसी होता है, न्यूनतम कार्य करना चाहता है, उत्तरदायित्व से दूर रहता है, स्वार्थी होता है, महत्वाकांक्षी नहीं होता है, अपनी सुरक्षा को अधिक महत्व देता है, उसे नवीनता ग्राहय नहीं होती है एवं संगठन के लक्ष्यों के प्रति उदासीन रहता है। अतः प्रशासकों को चाहिये कि वे कर्मचारियों को उपयुक्त पुरस्कार द्वारा अधिक कार्य करने के लिये प्रेरित करें। समय-समय पर आवश्यकतानुसार उन्हें दण्डित भी करें और उन पर पूर्ण नियन्त्रण रथापित रहेगा।
2. **वाई 'Y' सिद्धांत-** इस सिद्धांत के अनुसार, मनुष्य स्वभाव से निष्क्रिय नहीं होते, अपितु उनमें यह गुण आ गया है तो यह संगठन में काम करते-करते अनेक अनुभव का परिणाम होता है। सभी श्रमिकों में आशा, आकांक्षा, साहस एवं उत्साह आदि के गुण विद्यमान होते हैं। अतः प्रशासकों को चाहिये कि कर्मचारियों के इस गुण को विकसित करने के लिये पूर्ण अवसर प्रदान करें।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि एक्स सिद्धांत निर्देशन एवं नियन्त्रण की तकनीक पर आधारित है ओर इसमें सत्ता के केन्द्रीयकरण पर अधिक बल दिया जाता है। आधुनिक युग में एक्स सिद्धांत की कोई उपयोगिता नहीं हैं। वाई सिद्धांत संगठनात्मक वातावरण के निर्माण और सत्ता के विकेन्द्रीयकरण पर अधिक बल देता है। आधुनिक युग में वाई सिद्धांत अधिक उपयोगी है

11.5 व्यवस्था सम्बन्धी विचारधारा

व्यवस्था का तात्पर्य, ऐसी इकाइयों से है जो अन्र्तसम्बन्धित होती हैं तथा प्रत्येक एक दूसरे को प्रभावित करती है। व्यवस्था उपागम के मुताबिक प्रत्येक व्यवस्था कई उपव्यवस्थाओं से मिलकर बनती है, जिसमें अगर कोई भी उपव्यवस्था ठीक से कार्य नहीं करती है, तो सम्पूर्ण व्यवस्था पर उसका प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। जैसे- मानव शरीर का निर्माण पंच तत्वों से होता है और शरीर में स्थित हृदय इस व्यवस्था की एक उप-व्यवस्था है। इस उपागम का सर्वप्रथम प्रयोग मानव विज्ञापन शास्त्री रेटली ब्राउन द्वारा किया गया था।

लोक प्रशासन के विद्वानों ने भी प्रशासनिक तथ्यों तथा घटनाओं के विश्लेषण में व्यवस्था उपागम के प्रयोग का प्रारम्भ किया, लोक प्रशासन के अन्तर्गत इस दृष्टिकोण को प्रचलित करने में चेस्टर बर्नार्ड का नाम सर्वप्रथम है. चेस्टर बर्नार्ड ने संगठन को एक सहकारी व्यवस्था माना है, क्योंकि वह संगठन को लोगों के सहकारी प्रयासों के प्रतिफल की भावना उन उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए होती है, जिन्हें वह अकेले प्राप्त नहीं कर सकता। उसके मतानुसार भौतिक सीमाएँ समूह को सहयोग हेतु आकर्षिक करती है और सहयोग की भावना सहयोगातमक व्यवस्था को कायम करती है।

आप ने संगठन को एक ऐसी व्यवस्था के रूप में समझा है। जिसमें कार्य करने वाले व्यक्तियों के व्यवहार व्यक्तित्व और अभिलाषा भावनात्मक विकास की पारस्परिक क्रिया होती है और उन्हीं के फलस्वरूप सामूहिक क्रिया का विकास होता है, परिणामस्वरूप संगठन लोगों के सहयोग की सूची

Edit Annotate Fill & Sign Convert All

2. फेयोल ने संगठन के कितने सिद्धान्त बताये हैं?
   क. 15 ख. 26 ग. 14 घ. 20
3. 'जनरल एण्ड इण्डस्ट्रियल मैनेजमेन्ट' नामक पुस्तक किसने लिखी है?
   क. टेलर ख. गुलिक ग. उर्विक घ. हेनरी फेयोल
4. पोस्डकार्ब का सूत्र किस विद्वान द्वारा प्रतिपादित किया गया था?
   क. टेलर ख. विलियम्स ग. गुलिक घ. फेयोल
5. संगठन के मानवीय दृष्टिकोण से निम्न में से कौन सा विद्वान जुड़ा हुआ माना जाता है?
   क. एम0पी0 फोलेट ख. किक्बाल् ग. गिडिंग्स घ. उर्विक
6. हाँथार्न प्रयोग किस विद्वान द्वारा किये गये थे?
   क. टेलर ख. गुलिक ग. मेयो घ. फेयोल
7. एक्स तथा वाई सिद्धान्त के प्रतिपादक कौन थे?
   क. टेलर ख. मेयो ग.मैग्रेनर घ. उर्विक
8. हाँथार्न प्रयोग किस इलेक्ट्रिक कम्पनी में किये गये थे?
   क. जनरल इलेक्ट्रिक ख. वेस्टर्न इलेक्ट्रिक ग. भारती इलेक्ट्रिक घ. अफ्रीकन इलेक्ट्रिक

11.6 सारांश

संगठन सम्बन्धी सर्वाधिक प्राचीन विचारधाराओं को ही शास्त्रीय विचारधारा की संज्ञा दी जाती है। इसे यांत्रिक दृष्टिकोण भी कहा जाता है, यह संगठन का पुराना दृष्टिकोण है, इसलिए इसे परम्परागत दृष्टिकोण पर आधारित सिद्धान्त भी कहा जाता है।

मानवीय संबंधों से हमारा तात्पर्य मुख्यतः नियोक्ताओं और कार्मिकों के उन संबंधों से है, जो कानूनी मानकों द्वारा नियंत्रित नहीं होते। ये संबंध कानूनी तत्वों की अपेक्षा नैतिक और मनोवैज्ञानिक तत्वों से अधिक संबंधित है। इस विचारधारा के समर्थकों का यह दृष्टिकोण इस तथ्य पर आधारित है कि प्रशासन का कार्य व्यक्तियों को समझने तथा वे क्या करते हैं ओर 'क्यों करते हैं' पर अधिक केन्द्रीत करने की आवश्यकता पर बल दिया है।

व्यवस्था का तात्पर्य, ऐसी इकाइयों से है जो अर्न्तसम्बन्धित होती हैं तथा प्रत्येक एक दूसरे को प्रभावित करती है। व्यवस्था उपागम के मुताबिक प्रत्येक व्यवस्था कई उपव्यवस्थाओं से मिलकर बनती है, जिसमें अगर कोई भी उपव्यवस्था ठीक से कार्य नहीं करती है, तो सम्पूर्ण व्यवस्था पर उसका प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। जैसे- मानव शरीर का निर्माण पंच तत्वों से होता है और शरीर में स्थित हृदय इस व्यवस्था की एक उप-व्यवस्था है। इस उपागम का सर्वप्रथम प्रयोग मानव विज्ञापन शास्त्री रेटली ब्राउन द्वारा किया गया था।

11.7 शब्दावली

अधिकार- आदेश देने की शक्ति तथा यह निश्चित कर लेना कि इन आदेशों का पालन किया जा रहा है।

केन्द्रीयकरण- यह बिंदु अथवा स्तर जहाँ सभी निर्णय लेने वाले अधिकार केन्द्रित रहते हैं।

नियंत्रण- अधीनस्थों के कार्यों का मापन तथा सुधार जिससे यह आश्वस्त हो सके कि कार्य नियोजन के अनुसार किया गया है।

समन्वय- व्यक्ति तथा समूह के प्रयासों में सामूहिक कार्यों तथा उद्देश्यों को पूरा करने के लिए

4:25
47

है।

केन्द्रीयकरण- यह बिंदु अथवा स्तर जहाँ सभी निर्णय लेने वाले अधिकार केन्द्रित रहते हैं।
नियंत्रण- अधीनस्थों के कार्यों का मापन तथा सुधार जिससे यह आश्वस्त हो सके कि कार्य नियोजन के अनुसार किया गया है।
समन्वय- व्यक्ति तथा समूह के प्रयासों में सामूहिक कार्यों तथा उद्देश्यों को पूरा करने के लिए सामंजस्य स्थापित करना।
विकेन्द्रीकरण- उपक्रम के नीचे के स्तरों पर निर्णय लेने की शक्ति को सोंपना।
निर्णयन- किसी कार्य को करने के विभिन्न विकल्पों में से सर्वश्रेष्ठ विकल्प का चयन या किसी कार्य के निष्पादन के लिए विवेकपूर्ण चयन।
अधिकार का प्रयोजन- निर्धारित कार्यों के निष्पादन के लिए आवश्यक अधिकारों को अन्य व्यक्तियों को सौंपना।
नेतृत्व- समूह के लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए व्यक्तियों को प्रभावित करने की प्रक्रिया की कला।
अभिप्रेरणा- एक व्यक्ति के बीच इच्छा अथवा अनुभव का होना जिसके कारण वह कार्य करने के लिए उद्यत होता है।
दायित्व- एक व्यक्ति की बाध्यता अथवा सौंपे गए कार्य को निष्पादित करने की उसकी बाध्यता।
नियोजन- किन कार्यों को कहाँ और कैसे करना है का पूर्व निर्णय।
सिद्धांत- मूल सत्य अथवा किसी निश्चित समय पर विश्वास योग्य सत्य जो दो अथवा अधिक चलों के सेट के बीच संबंधों की व्याख्या करता है, ये वर्णनात्मक भी हो सकते हैं जो यह बतलाते हैं कि क्या होगा अथवा आदेशात्मक (अथवा नियामक) भी होते हैं जो व्यक्ति को क्या करना है का आदेश देते हैं,
आदेश की एकता- प्रत्येक अधीनस्थ को एक ही अधिकारी के प्रति जवाबदेही के लिए बाध्य किया जाना चाहिए। यह सिद्धांत यह बतलाता है कि जितना अधिक एक व्यक्ति एक ही अधिकारी के प्रति जवाबदेही करेगा, उतना ही कम विवाद की समस्या उत्पन्न होने की संभावना होगी।
निर्देश की एकता- इस सिद्धांत का आशय एक अधिकारी, एक योजना अर्थात् एक से ही उद्देश्य वाली सामूहिक क्रियाओं के लिए एक ही अधिकारी द्वारा निदेश किया जाना चाहिए।

11.8 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1-क, 2-ग, 3-घ, 4-ग, 5-क, 6-ग, 7-ग, 8-ख

11.9 सन्दर्भ ग्रन्थ-सूची

1. डॉ0 सी0 वी0 गुप्ता, व्यापारिक संगठन और प्रबन्ध, सुल्तान चन्द एण्ड सन्स, नई दिल्ली-1996,
2. मामोरिया एवं मामोरिया, व्यापारिक योजना और नीति, हिमालया पब्लिशिंग हाउस, मुम्बई-1996,

Edit Annotate Fill & Sign Convert All

इकाई- 12 संगठन के सिद्धान्त- I

इकाई की संरचना

12.1 प्रस्तावना
12.2 उद्देश्य
12.3 पद सोपान
12.4 नियंत्रण का क्षेत्र
12.5 आदेश की एकता
12.6 सारांश
12.7 शब्दावली
12.8 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
12.9 सन्दर्भ ग्रन्थ-सूची
12.10 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री
12.11 निबंधात्मक प्रश्न

12.1 प्रस्तावना

अभी तक के अध्ययन में आप पूर्णतया संगठन की अवधारणा तथा इसकी विभिन्न विचारधाराओं से जुड़े विद्वानों के मतों का विस्तृत अध्ययन कर चुके हैं। प्रस्तुत इकाई संगठन से वास्तविक तथा कार्यात्मक सिद्धान्तों का विस्तार से विवेचना करने का प्रयास करेगी। अध्ययन की सुविधा तथा क्रमबद्धत: को ध्यान में रखते हुए, इन सिद्धान्तों में पद सोपान, नियंत्रण का क्षेत्र तथा आदेश की एकता को सम्मिलित किया गया है।

12.2 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के उपरान्त आप-

- गठन के प्रथम सिद्धान्त पद सोपान के सम्बन्ध में ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।
- नियंत्रण के क्षेत्र की अवधारणा का विश्लेषण कर सकेगें।
- आदेश की एकता सम्बन्धी सिद्धान्त की विवेचना कर सकेंगे।

12.3 पदसोपान

प्रशासनिक दृष्टि से देखा जाए तो पदसोपान का अर्थ किसी अधीनस्थ पर वरिष्ठ की सत्ता या उच्चता से है। यह एक ऐसा बहुस्तरीय संगठन है, जिसमें क्रमवार कई स्तर होते है जो आपस में एक-दूसरे से जुड़े होती हैं। यह एक ऐसी व्यवस्था है जिससे किसी संगठन के विभिन्न व्यक्तियों के प्रयासों को एक-दूसरे से समन्वित ढंग से सम्बन्धित किया जाता है। संगठन के विभिन्न सिद्धान्तों में का स्थान महत्वपूर्ण एवं प्रथम है। दूसरे शब्दो में यह अधिकार और आदेश की शीर्ष स्तरीय व्यवस्था है।

संगठन का एक सार्वभौमिक सिद्धान्त है, पदसोपान के अभाव में किसी संगठन की कल्पना सम्भव

Edit Annotate Fill & Sign Convert All

स्थान महत्वपूर्ण एवं प्रथम है। दूसरे शब्दों में यह आविष्कार और आदेश की शीर्ष स्तरीय व्यवस्था है।

संगठन का एक सार्वभौमिक सिद्धान्त है, पदसोपान के अभाव में किसी संगठन की कल्पना सम्भव नहीं हो सकती है। इसलिए यह सभी संगठनों की एक आधारभूत आवश्यकता होती है। प्रत्येक प्रशासकीय संगठन पद-सोपान के रूप में गठित होता है। अतः शिखर से नीचे तक उच्च अधिकारियों एवं अधीनस्थों के सम्बन्धों को परस्पर सम्बद्ध करने की व्यवस्था को ही पद-सोपान की संज्ञा दी जाती है।

संगठन सिद्धान्त के पितामह फेयोल के अनुसार उच्चतम प्रबंध से न्यूनतम पदों तक की श्रृखला ही पद सोपान के नाम से जानी जाती है। इसमें आदेश ऊपर से नीचे तथा एक क्रम में चलने चाहिये। पद-सोपान उत्तरदायित्व के अनेक स्तरा होते है, में प्रत्येक व्यक्ति का यह कर्तव्य होता है कि जहाँ तक सम्भव हो अधीनस्थ को अपने वरिष्ठ की सत्ता का उल्लंघन नहीं करना है परन्तु आवश्यकता पडने पर तथा शीघ्र निर्णय लेने के लिये, फेयोल के अनुसार कभी-कभी इस क्रम को तोड़ा भी जा सकता है। है।

संगठन में इन संबंधों से पिरामिड आकार की संरचना की स्थापना हो जाती है। इस संरचना को मूने और रैले ने सीढ़ीनुमा प्रक्रिया की संज्ञा दी है। संगठन में "सीढ़ीनुमा" का तात्पर्य है अधिकारी तथा संबन्धित दायित्वों के अनुपात में दायित्वों का स्तर निर्धारित करना। मूने के अनुसार यह सीढ़ीनुमा श्रृंखला समस्त संगठनो में पाई जाती है, अतः जहाँ कहीं भी वरिष्ठ और कनिष्ठों के मध्य सम्बन्धों की स्थापना होगी, एक संगठन होगा, वहाँ सीढ़ीनुमा सिद्धान्त भी क्रियात्मक रूप से लागू होगा।

यह सिद्धान्त के अनुसार सभी पदाधिकारियों के मध्य प्रत्यक्ष सम्पर्क होना चाहिये, किसी भी सूचना का संचार सभी सम्बन्धित प्रबन्धकीय पदाधिकारियों के स्तर से होना चाहिये। वरिष्ठ एवं अधीनस्थों के मध्य सम्बन्धों की स्पष्ट श्रृंखला निर्धारित होनी, चाहिए और श्रृंखला का उल्लंघन कदापि नहीं किया जाना चाहिए। आज्ञा व देने लेने के मार्ग विल्कुल स्पष्ट होने चाहिये। इस प्रकार पद-सोपान आदेशों का एक प्रवाह बन जाता है।

पदसोपान में चूँकि सत्ता के अनेक स्तर होते हैं। अतः उसमें सत्ता का हस्तान्तरण करना अनिवार्य होता है। उच्च अथवा प्रवर अधिकारी द्वारा प्रत्येक अधीनस्थ कर्मचारी को कार्य का एक क्षेत्र आवंटित किया जाता है। इस आवंटितक्षेत्र में उसे निर्णय लेने का पूर्ण अधिकार होता है। प्रत्यायोजन द्वारा उच्च अधिकारी जो कुछ भी करता है उसके लिये सदा अपने उच्च अधिकारी के प्रति उत्तररदायी होता है।

प्रत्येक आज्ञा, पत्र-व्यवहार, तथा संचार आदि उचित मार्ग द्वारा ही आना जाना चाहिये अर्थात् तत्काल उच्च अधिकारी द्वारा शिखर अधिकारी तक क्रम से जाना चाहिये। एक लिपिक, प्रधान लिपिक के अधीन है प्रधान लिपिक एक कार्यालय अधीक्षक के अधीन है तथा कार्यालय अधीक्षक अनुभाग अधिकारी के अधीन है आदि। यदि लिपिक को कोई बात अनुभाग अधिकारी से कहनी है, तो वह प्रधान लिपिक के माध्यम से कार्यालय अधीक्षक तक पहचेगा और तब उसके द्वारा अनुभाग-अधिकारी तक पहुँचेगा।

उत्तरदायी होता है।

प्रत्येक आज्ञा, पत्र-व्यवहार, तथा संचार आदि उचित मार्ग द्वारा ही आना जाना चाहिये अर्थात् तत्काल उच्च अधिकारी द्वारा शिखर अधिकारी तक क्रम से जाना चाहिये। एक लिपिक, प्रधान लिपिक के अधीन है प्रधान लिपिक एक कार्यालय अधीक्षक के अधीन है तथा कार्यालय अधीक्षक अनुभाग अधिकारी के अधीन है आदि। यदि लिपिक को कोई बात अनुभाग अधिकारी से कहनी है, तो वह प्रधान लिपिक के माध्यम से कार्यालय अधीक्षक तक पहचेगा और तब उसके द्वारा अनुभाग-अधिकारी तक पहुँचेगा।

इसी प्रकार यदि अनुभाग अधिकारी लिपिक की कोई आदेश देना चाहता है तो वह आदेश कार्यालय अधीक्षक के द्वारा ही प्रधान लिपिक तक पहुँचना चाहिए और तब उसके माध्यम से लिपिक तक आना चाहिए। उपरोक्त निर्वचन के उपरान्त पद सोपान सिद्धान्त की निम्नलिखित विशेषताओं का प्रतिपादन किया जा सकता है। आइये इन्हें क्रमबद्ध कर समझनें का प्रयास करें-

1. प्रशासनिक संगठन की क्रिया-कलाप को इकाइयों और उप-इकाइयों में विभाजित करना सम्भव हो जाता है।
2. इन इकाइयों की स्थापना एक के नीचे एक की जाती है जिससे पिरामिड के आकार की संरचना का निर्माण होता है।
3. विभिन्न स्तरों को से सम्बन्धित अधिकारो एवं उत्तर दायित्वों का निर्धारण सम्भव हो पाता है।
4. सोपानक्रम पर आधारित संगठन सुव्यवस्थित रूप से उचित माध्यम से सिद्धान्त का पालन करता है।
5. कर्मचारी केवल अपने से निकटतम वरिष्ठ अधिकारी से आदेश माँगता है किसी भी अन्य अधिकारी से नहीं।
6. अधिकार और उत्तरदायित्व में समुचित समन्वय एवं ताल-में ल रेखा जाता है, क्योंकि बिना उत्तरदायित्व के अधिकार खतरनाक होते है तथा बिना अधिकार के उत्तरदायित्व महत्वहीन बन जाते हैं।

सोपानक्रम के बिना किसी संगठन की कल्पना करना कठिन है।एक प्रशासनिक संगठन में विभिन्न कर्मचारी एक साथ काम करते हैं, अतः यह वांछनीय है कि प्रत्येक व्यक्ति को अपने-अपने कर्तव्यों एव उत्तरदायित्वों का बोध हो, यही नहीं। प्रत्येक व्यक्ति को इस बात का भी ज्ञान होना चाहिये कि उसके अन्य व्यक्तियों के साथ क्या सम्बन्ध है? उसके मस्तिष्क में यह तथ्य स्पष्ट होना चाहिये कि उसे किसकी आज्ञा का अनुपालन करना है। केवल ऐसा होने पर ही संगठन से भ्रम, विवाद तथा मतभेद दूर किये जा सकते हैं। और इसे प्रभावी रूप से जनता के प्रति जावब देह बनाया जा सकता है।

इस प्रकार जो संगठन पदसोपान के अनुसार कार्य करते है उनमें अधिकार एवं सत्ता ऊपर से नीचे की ओर एक-एक सीढ़ी या एक-एक स्तर से उतरते हुए आते हैं। इस सीढ़ीनुमा व्यवस्था की आवश्यकता दो कारणों से पूरी होती है, पहला- कार्य में विशेषज्ञता प्राप्त करने के उद्देश्य से कार्य को उसके आवश्यक हिस्सों में बाँटवारा। और दूसरा- विशेषाताओं के व्यवहार तथा कार्यों को एक संयुक्त प्रयास में समन्वित ढंग जोड़ने की प्रक्रिया को प्राप्त करना।

पदसोपान में ऊपर या नीचे एक-एक स्तर चढ़ कर या उतर कर आया जाता है। इस प्रकार सोपानक्रम संगठन में संचार तथा सत्ता के विभिन्न स्तरों के मध्य आदेशों की एक श्रृंखला का सशक्त बन जाता हैं। सोपानक्रम सिद्धान्त में यह आवश्यक है कि ऊपर यी नीचे के स्तर से संपर्क स्थापित करते समय

बीच के किसी भी स्तरा को अनेदेखा न किया जाए। संगठन में सोपानक्रम सिद्धांत के प्रयोग से होने वाले लाभों को निम्नलिखित ढंग से क्रमबद्ध कर आत्मसात् किया जा सकता है-

1. प्रशासनिक संगठन में उद्देश्यों में एकता होनी चाहिए। यह एकता पद सोपान द्वारा ही प्राप्त की जा सकती है।
2. संगठन में कार्यों विभाजन होता है जिससे विभिन्न कार्य इकाइयाँ अस्तित्व में आती है, सोपानक्रम, संगठन की विभिन्न इकाइयों को आपस में समन्वित कर एक संयुक्त ढाँचे की रचना करता है। जिससे संगठनात्मक एकीकरण एवं समन्वय द्वारा संगठन को और प्रभावी बनाया जाता है।
3. इस सिद्धान्त में संगठन में नीचे से ऊपर तक एवं ऊपर से नीचे तक आवश्यक संचार व्यवस्था स्थापित की स्थापना होती है। जिससे प्रत्येक कार्मिक को यह स्पष्ट हो जाता है कि उसका अगल संबंध किस कर्मचारी से है।
4. यह सिद्धान्त प्रत्येक स्तर और पद पर उत्तरदायित्व निर्धारित करने में सहायक होता है।

बीच के किसी भी स्तरा को अनेदेखा न किया जाए। संगठन में सोपानक्रम सिद्धांत के प्रयोग से होने वाले लाभों को निम्नलिखित ढंग से क्रमबद्ध कर आत्मसात् किया जा सकता है-

1. प्रशासनिक संगठन में उद्देश्यों में एकता होनी चाहिए। यह एकता पद सोपान द्वारा ही प्राप्त की जा सकती है।
2. संगठन में कार्यों विभाजन होता है जिससे विभिन्न कार्य इकाइयाँ अस्तित्व में आती है, सोपानक्रम, संगठन की विभिन्न इकाइयों को आपस में समन्वित कर एक संयुक्त ढाँचे की रचना करता है। जिससे संगठनात्मक एकीकरण एवं समन्वय द्वारा संगठन को और प्रभावी बनाया जाता है।
3. इस सिद्धान्त में संगठन में नीचे से ऊपर तक एवं ऊपर से नीचे तक आवश्यक संचार व्यवस्था स्थापित की स्थापना होती है। जिससे प्रत्येक कार्मिक को यह स्पष्ट हो जाता है कि उसका अगल संबंध किस कर्मचारी से है।
4. यह सिद्धान्त प्रत्येक स्तर और पद पर उत्तरदायित्व निर्धारित करने में सहायक होता है। प्रत्येक कर्मचारी को संगठन में अपनी स्थिति और उत्तरदायित्वों का ज्ञान होता है तथा यह भी मालूम होता है कि वह किसके प्रति प्रत्यक्ष तौर पर उत्तरदायी है।
5. इसके द्वारा उचित माध्यम से व्यवस्था में प्रक्रिया का कड़ाई से नियमानुसार पालन किया जाता है, जिससे आसान तथा भ्रष्ट रास्तों का प्रयोग प्रतिबन्धित हो जाता है।
6. सोपानक्रम के फलस्वरूप उच्चतम स्तर पर काम का भार कम हो जाता है, तथा विकेन्द्रीकरण द्वारा निर्णय लेने की प्रक्रिया आसान हो जाती है। संगठन का प्रत्येक कर्मचारी निर्णय लेने और अपने अधीनस्थों के मार्गनिर्देशन के लिए प्रशिक्षित किया जाता है जिससे अधीनस्थ कर्मचरियों एवं अधिकारियों में भी संगठन में अपने महत्व की भावना उत्पन्न होती है।
7. सुव्यवस्थित व्यवस्था तथा नियमो का कड़ाई से पालन किए जाने के कारण कर्यों की गति आसान हो जाती है और यह जानना आसान हो जाता है कि किसी करर्म से सम्बन्धित पत्रावली किस कर्मचारी विशेष के पास तथा किन कारणों से अवद्ध है।

यद्यपि पद सोपान व्यवस्था की उपयोगिता को सामान्य रूप से स्वीकार किया जाता है परन्तु साथ ही साथ इस बात का भी ध्यान रखा जाना चाहिए कि सिक्के के दो पहलू होते है अर्थात इस व्यवस्था के निम्नलिखित दोषों को भी रेखांकित करना आवश्यक है-

यह सिद्धान्त कार्य के निष्पादन में अनावश्यक विलम्ब करता है इस व्यवस्था में कई दिन सप्ताह तथा महीने लग सकते है, अतः यह सिद्धान्त लालफीताशाही को बढ़ावा मिलता है।तथा भ्रष्टाचार का जन्म होता है।

अत्यधिक औपचारिक के कारण संगठन में उच्च अधिकारियों एवं अधीनस्थों के मध्य औपचारिक सम्बन्ध पैदा हो जाते है। ऐसे सम्बन्धों के कारण उच्चतर पदाधिकारियों एवं निम्न पदाधिकारियों के

मध्य पारस्परिक सहयोग की भावना में कमी हो जाती है तथा सभी यांत्रिक बनकर मूकदर्शक बने रहते है।

वस्तुतः इस सिद्धान्त के गुणों एवं दोषों को देखते हुए यह सिद्ध हो जाता है कि संगठन में पदसोपान के दोषों की अपेक्षा उसके लाभ की अधिकता है। यदि उच्च एवं निम्न अधिकारियों के मध्य समुचित निष्ठा एवं विश्वास पैदा हो जाए, तो कार्य के विलम्ब के दोषों तथा उच्चाधिकारियों एवं अधीनस्थ से उत्पन्न दोषों को निश्चित रूप से कम किया जा सकता है जिससे एक प्रशासनिक संगठन को अधिक परदर्शी, जवाबदेह तथा प्रभावी बनाया जा सकता है।

12.4 नियंत्रण का क्षेत्र

यह अत्यन्त महत्वपूर्ण प्रश्न है कि प्रशासनिक संगठन में किसी अधिकारी का कार्य क्षेत्र कितना होना चाहिए नियन्त्रण के माध्यम क्या होने चाहिये? इन प्रश्नों के उत्तर के रूप में 'नियंत्रण का क्षेत्र नामक सिद्धान्त' की स्थापना की गयी है संगठन में आधिकारी के पास अधिक कार्य भी नहीं होना चाहिए और कम भी नहीं, क्षमता के अनुसार ही कार्य क्षेत्र निर्धारित होना चाहिए।

लोक प्रशासन के चिन्तकों के अनुसार अधिकारियों का नियन्त्रण क्षेत्र सीमित होना चाहियें क्योंकि नियन्त्रण क्षेत्र के व्यापक होने पर नियत्रण का प्रभाव कम हो जाता है। ।

स्पैन का शाब्दिक अर्थ वह दूरी है, जो किसी व्यक्ति के अंगूठे और कनिष्ठ ऊंगली को फैलाए जाने से बनती है। जबकि नियंत्रण शब्द का मतलब आदेश-निर्देश या नियंत्रित करने वाले अधिकार या सत्ता से हैं। लोक प्रशासन में नियंत्रण के क्षेत्र का तात्पर्य उन अधीनस्थ कर्मचारियों से है, जिन पर एक अधिकारी कारगर एवं प्रभावी ढंग से नियंत्रण करता है।

संगठन में एक उच्च अधिकारी को अपने अधीनस्थ कर्मचारी वर्ग की क्रियाओं पर नियन्त्रण रखना होता है। इससे वह आश्वस्त होता है कि प्रत्येक कार्य नियमों एवं निर्देशों के अनुसार किया जा रहा है या नहीं, परन्तु उस नियन्त्रण के क्षेत्र की भी शारीरिक व मानसिक सीमायें होती है जोकि एक उच्च

यद्यपि पद सोपान व्यवस्था की उपयोगिता को सामान्य रूप से स्वीकार किया जाता है परन्तु साथ ही साथ इस बात का भी ध्यान रखा जाना चाहिए कि सिक्के के दो पहलू होते है अर्थात इस व्यवस्था के निम्नलिखित दोषों को भी रेखांकित करना आवश्यक है-

यह सिद्धान्त कार्य के निष्पादन में अनावश्यक विलम्ब करता है इस व्यवस्था में कई दिन सप्ताह तथा महीने लग सकते है, अतः यह सिद्धान्त लालफीताशाही को बढ़ावा मिलता है।तथा भ्रष्टाचार का जन्म होता है।

अत्यधिक औपचारिक के कारण संगठन में उच्च अधिकारियों एवं अधीनस्थों के मध्य औपचारिक सम्बन्ध पैदा हो जाते है। ऐसे सम्बन्धों के कारण उच्चतर पदाधिकारियों एवं निम्न पदाधिकारियों के

मध्य पारस्परिक सहयोग की भावना में कमी हो जाती है तथा सभी यांत्रिक बनकर मूकदर्शक बने रहते है।

वस्तुतः इस सिद्धान्त के गुणों एवं दोषों को देखते हुए यह सिद्ध हो जाता है कि संगठन में पदसोपान के दोषों की अपेक्षा उसके लाभ की अधिकता है। यदि उच्च एवं निम्न अधिकारियों के मध्य समुचित निष्ठा एवं विश्वास पैदा हो जाए, तो कार्य के विलम्ब के दोषों तथा उच्चाधिकारियों एवं अधीनस्थ से उत्पन्न दोषों को निश्चित रूप से कम किया जा सकता है जिससे एक प्रशासनिक संगठन को अधिक परदर्शी, जवाबदेह तथा प्रभावी बनाया जा सकता है।

12.4 नियंत्रण का क्षेत्र

यह अत्यन्त महत्वपूर्ण प्रश्न है कि प्रशासनिक संगठन में किसी अधिकारी का कार्य क्षेत्र कितना होना चाहिए नियन्त्रण के माध्यम क्या होने चाहिये? इन प्रश्नों के उत्तर के रूप में 'नियंत्रण का क्षेत्र नामक सिद्धान्त' की स्थापना की गयी है संगठन में आधिकारी के पास अधिक कार्य भी नहीं होना चाहिए और कम भी नहीं, क्षमता के अनुसार ही कार्य क्षेत्र निर्धारित होना चाहिए।

लोक प्रशासन के चिन्तकों के अनुसार अधिकारियों का नियन्त्रण क्षेत्र सीमित होना चाहियें क्योंकि नियन्त्रण क्षेत्र के व्यापक होने पर नियत्रण का प्रभाव कम हो जाता है। ।

स्पैन का शाब्दिक अर्थ वह दूरी है, जो किसी व्यक्ति के अंगूठे और कनिष्ठ ऊंगली को फैलाए जाने से बनती है। जबकि नियंत्रण शब्द का मतलब आदेश-निर्देश या नियंत्रित करने वाले अधिकार या सत्ता से हैं। लोक प्रशासन में नियंत्रण के क्षेत्र का तात्पर्य उन अधीनस्थ कर्मचारियों से है, जिन पर एक अधिकारी कारगर एवं प्रभावी ढंग से नियंत्रण करता है।

संगठन में एक उच्च अधिकारी को अपने अधीनस्थ कर्मचारी वर्ग की क्रियाओं पर नियन्त्रण रखना होता है। इससे वह आश्वस्त होता है कि प्रत्येक कार्य नियमों एवं निर्देशों के अनुसार किया जा रहा है या नहीं, परन्तु उस नियन्त्रण के क्षेत्र की भी शारीरिक व मानसिक सीमायें होती है जोकि एक उच्च अधिकारी अपने अधीनस्थ कर्मचारियों पर लागू कर सकता है।

नियन्त्रण के क्षेत्र पर एक महत्वपूर्ण सीमा मानवीय ध्यान-क्षेत्र द्वारा लागू होती हैं। उदाहरण के तौर पर यह देखा जाता है कि एक व्यक्ति केवल सीमित कर्मचारियों, जैसे- सात, नौ अथवा बारह का ही सक्रिय पर्यवेक्षक कर सकता है। यदि एक उच्च अधिकारी से आशा की जाये कि वह उससे अधिक व्यक्तियों की क्रियाओं का नियन्त्रण करेगा जितनी कि वह वास्तव में कर सकता है तो उसका परिणाम होगा कार्य में देरी तथा अकुशलता के रूप में दृष्टिगत होगा।

अनुसंधानकर्ताओं ने इस तथ्य की खोज के अनेक प्रयास किये हैं कि व्यक्तियों की वह आदर्श संख्या क्या होनी चाहिये जिनकी क्रियाओं पर एक उच्च अधिकारी द्वारा प्रभावी नियन्त्रण किया जा कर सके वस्तुतः ऐसा अनुसन्धान पूर्णतः निरर्थक है। एक अधिकारी द्वारा कितने व्यक्तियों पर प्रभावी नियन्त्रण किया जा सकता है। यह तथ्य नियन्त्रणकर्ता की शक्ति, सौंपे गये कार्य की प्रवृति और कर्मचारियों की शारीरिक स्थिति पर निर्भर करता हैं आइये सम्बन्ध में महत्वपूर्ण विचार को के मतों को जानने व समझने का प्रयास करें-

- एल0 उर्विक के मतानुसार एक व्यक्ति अधिक से अधिक पाँच या छः सहायक कर्मचारियों को क्रियाओं पर सफलतापूर्वक नियन्त्रण रख सकता है।
- ई0 एफ0 एल0 ब्रीच के मतानुसार एक उच्चधिकारी के अधीन अधीनस्थों की संख्या पर्याप्त है। लिण्डाल के मतानुसार, कोई एक व्यक्ति अपने तुरन्त अधीन अधिक से अधिक पाँच सहायक कर्मचारियों की क्रियाओं का प्रबन्ध कर सकता है।
- श्री हेमिल्टन ने अपने विचार व्यक्त करते हुए लिखा है, सामान्यतया एक मानव तीन से छः मस्तिष्क पर प्रभावी ढंग से नियंत्रण रख सकता है।
- हेनरी फेयोल के विचारानुसार प्रबन्धक पर्यवेक्षक के नियंत्रण में अधिक से अधिक पाँच या छः अधीनस्थ होने चाहिए।

वस्तुतः यह कहा जा सकता है कि सभी विचारकों में यह सहमति प्रदर्शित होती है, कि क्षेत्र जितना छोटा होगा, सम्पर्क उतना ही ज्यादा होगा और परिणाम स्वरूप नियंत्रण अधिक कारगर होगा,

कर सके वस्तुतः ऐसा अनुसन्धान पूर्णतः निरर्थक है। एक अधिकारी द्वारा कितने व्यक्तियों पर प्रभावी नियन्त्रण किया जा सकता है। यह तथ्य नियन्त्रणकर्ता की शक्ति, सौंपे गये कार्य की प्रवृति और कर्मचारियों की शारीरिक स्थिति पर निर्भर करता हैं आइये सम्बन्ध में महत्वपूर्ण विचार को के मतों को जानने व समझने का प्रयास करें-

- एल0 उर्विक के मतानुसार एक व्यक्ति अधिक से अधिक पाँच या छः सहायक कर्मचारियों को क्रियाओं पर सफलतापूर्वक नियन्त्रण रख सकता है।
- ई0 एफ0 एल0 ब्रीच के मतानुसार एक उच्चधिकारी के अधीन अधीनस्थों की संख्या पर्याप्त है। लिण्डाल के मतानुसार, कोई एक व्यक्ति अपने तुरन्त अधीन अधिक से अधिक पाँच सहायक कर्मचारियों की क्रियाओं का प्रबन्ध कर सकता है।
- श्री हेमिल्टन ने अपने विचार व्यक्त करते हुए लिखा है, सामान्यतया एक मानव तीन से छः मस्तिष्क पर प्रभावी ढंग से नियंत्रण रख सकता है।
- हेनरी फेयोल के विचारानुसार प्रबन्धक पर्यवेक्षक के नियंत्रण में अधिक से अधिक पाँच या छः अधीनस्थ होने चाहिए।

वस्तुतः यह कहा जा सकता है कि सभी विचारकों में यह सहमति प्रदर्शित होती है, कि क्षेत्र जितना छोटा होगा, सम्पर्क उतना ही ज्यादा होगा और परिणाम स्वरूप नियंत्रण अधिक कारगर होगा, क्योंकि शारीरिक और मानसिक दोनों ही दृष्टियों से मानव क्षमता की एक सीमा होती है। इसलिए कोई वरिष्ठ अधिकारी कितनी भी सक्षम क्यों न हो वह असीमित संख्या में अधीनस्थों का निरीक्षण नहीं कर सकता। एक प्रबन्धक अधिक से अधिक 6 या 7 अधीनस्थों के कार्य का नियंत्रण कर सकता है।

नियंत्रण का यह क्षेत्र निम्नलिखित कारणों पर निर्भर करता है।

12.5 आदेश की एकता

लोक प्रशासन की महत्वपूर्ण समस्याओं में से एक है सामूहिक साहयोग और समन्वय से काम करवाना, जिससे संगठन के सदस्य एक उद्देश्य के लिये, एक शक्ति से, एक स्वर से निरन्तर कार्य करे न कि एक दूसरे के विरूद्ध कार्य निस्पादन में।

इस सिद्धांत के अनुसार आदेश में एकता होनी चाहिये। इसके लिये यह आवश्यक है कि प्रत्येक कर्मचारी को आदेश एक ही अधिकारी द्वारा दिये जाये। जिससे वह उसके प्रति जावबदेह रहें। इससे उनके मन में कोई आशंका नहीं होती क्योंकि अनेक अधिकारियों द्वारा दिये गये आदेश एक-दूसरे के प्रतिकूल भी हो सकते हैं। इससे वह अपने उत्तरदायित्व का ठीक प्रकार से निर्वाह नहीं कर पाता, अनुशासन खतरे में पड़ जाता है। जिससे उपक्रम में शान्ति एवं स्थिरता का खतरा पैदा हो जाता है।

आदेश की एकता से कर्मचारियों में कार्य के प्रति न हो भ्रान्तियाँ पैदा होती है न ही गलतियाँ और न ही कार्यसम्पन्न करने में अनावश्यक विलम्ब होता है। जिससे वे सदैव आत्मविश्वास के साथ कार्य करते है। इस सिद्धान्त के अनुसार वह स्थिति बड़ी अवांछनीय होती है जब संगठन में किसी सदस्य को ऐसी स्थिति में रख दिया जाता है, जब कि उसे एक से अधिक उच्च अधिकारियों के आदेश प्राप्त होते हैं।

एक महत्वपूर्ण तथा आवश्यक प्रश्न यह है कि क्या व्यवहार में संगठनों में आदेश की एकता को अपनाया जा सकता है। आइये एक उदाहरण द्वारा इस प्रश्न पर विचार करें- मुख्य सचिव प्रदेश स्तर

पर कृषि, पशुपालन, सहकारिता, कानून व्यवस्था, शिक्षा, चिकित्सा और स्वाथ्य सेवाओं जैसे सभी विभागों और कार्य कलापों का प्रमुख होता है।

इस प्रकार अगर देखा जाये तो प्रदेश के सभी वि भागों के कर्मचरियों की सीधे उसी से आदेश लेने चाहिये, लेकिन व्यवहार में वे अपने प्रमुख सचिवों और विभागीय प्रमुखों दोनों से आदेश लेते हैं। विभागीय प्रमुख सचिव तथा मंत्रि महोदय दोनों से आदेश लेते है। इस तरह, आधुनिक संगठनों की एकता लागू कर पाना मुश्किल होता है।

इस तरह समावेश की एकता में महत्व एकता का है न कि समावेश का। एकता का मतलब संगठन के काम में एकरूपता से है। आदेश में एकता का क्षेत्र अधिकारियों या समान्य प्रशासकों और तकनीकों अधिकारियों द्वारा कर्मचारियों को आदेश दिये जाने से है। जब तक समावेश संगठन के उद्देश्य की एकरूपता के अनुकूल होते है। यह बात महत्वपूर्ण नहीं रहती कि कौन-कौन अधिकारी क्या आदेश दे रहे है उपरोक्त निर्वचन के आलोक में इस सिद्धान्त की निम्नलिखित विशेषताओं का निरूपण किया जा सकता है आइये इसे क्रमबद्ध कर समझनें का प्रयास करें-

- आदेश की एकता से सत्ता या संगठन से संम्बद्ध सूत्रों का स्पष्टीकरण होता है,
- आदेश की एकता से कार्य व आदेश का उत्तरदायित्व निर्धारण होता है,
- आदेश की एकता से इन बात की भी सम्भावना हो जाती है कि अनेक विरोधी आदेशें का

कर्मचारी को आदेश एक ही अधिकारी द्वारा दिये जाये। जिससे वह उसके प्रति जावबदेह रहें। इससे उनके मन में कोई आशंका नहीं होती क्योंकि अनेक अधिकारियों द्वारा दिये गये आदेश एक-दूसरे के प्रतिकूल भी हो सकते हैं। इससे वह अपने उत्तरदायित्व का ठीक प्रकार से निर्वाह नहीं कर पाता, अनुशासन खतरे में पड़ जाता है। जिससे उपक्रम में शान्ति एवं स्थिरता का खतरा पैदा हो जाता है। आदेश की एकता से कर्मचारियों में कार्य के प्रति न हो भ्रान्तियाँ पैदा होती है न ही गलतियाँ और न ही कार्यसम्पन्न करने में अनावश्यक विलम्ब होता है। जिससे वे सदैव आत्मविश्वास के साथ कार्य करते है। इस सिद्धान्त के अनुसार वह स्थिति बड़ी अवांछनीय होती है जब संगठन में किसी सदस्य को ऐसी स्थिति में रख दिया जाता है, जब कि उसे एक से अधिक उच्च अधिकारियों के आदेश प्राप्त होते हैं।

एक महत्वपूर्ण तथा आवश्यक प्रश्न यह है कि क्या व्यवहार में संगठनों में आदेश की एकता को अपनाया जा सकता है। आइये एक उदाहरण द्वारा इस प्रश्न पर विचार करें- मुख्य सचिव प्रदेश स्तर

पर कृषि, पशुपालन, सहकारिता, कानून व्यवस्था, शिक्षा, चिकित्सा और स्वाथ्य सेवाओं जैसे सभी विभागों और कार्य कलापों का प्रमुख होता है।

इस प्रकार अगर देखा जाये तो प्रदेश के सभी वि भागों के कर्मचरियों की सीधे उसी से आदेश लेने चाहिये, लेकिन व्यवहार में वे अपने प्रमुख सचिवों और विभागीय प्रमुखों दोनों से आदेश लेते हैं। विभागीय प्रमुख सचिव तथा मंत्रि महोदय दोनों से आदेश लेते है। इस तरह, आधुनिक संगठनों की एकता लागू कर पाना मुश्किल होता है।

इस तरह समावेश की एकता में महत्व एकता का है न कि समावेश का। एकता का मतलब संगठन के काम में एकरूपता से है। आदेश में एकता का क्षेत्र अधिकारियों या समान्य प्रशासकों और तकनीकों अधिकारियों द्वारा कर्मचारियों को आदेश दिये जाने से है। जब तक समावेश संगठन के उद्देश्य की एकरूपता के अनुकूल होते है। यह बात महत्वपूर्ण नहीं रहती कि कौन-कौन अधिकारी क्या आदेश दे रहे है उपरोक्त निर्वचन के आलोक में इस सिद्धान्त की निम्नलिखित विशेषताओं का निरूपण किया जा सकता है आइये इसे क्रमबद्ध कर समझनें का प्रयास करें-

- आदेश की एकता से सत्ता या संगठन से संम्बद्ध सूत्रों का स्पष्टीकरण होता है,
- आदेश की एकता से कार्य व आदेश का उत्तरदायित्व निर्धारण होता है,
- आदेश की एकता से इन बात की भी सम्भावना हो जाती है कि अनेक विरोधी आदेशें का लाभ उठाकर कर्मचारी व अधिकारियों के बीच मनमुटाव पैदा करा सकते है,
- निर्देशों में परस्पर विरोध का अभाव, दृष्टिगत हो सकता है,
- कर्मचरियो का प्रभावपूर्ण निरीक्षण, पर्यवेक्षण व नियंत्रण सम्भव होता है, तथा
- विभिन्न कार्यों के लिये उत्तरदायित्व का स्पष्ट निर्धारण किया जाता है जिससे कार्य निस्पादन गुण से युक्त होता है।

वस्तुतः आदेश की एकता कार्मचारियों को उद्देश्य के प्रति सजग, समर्पित और कार्य कुशल बनाती है।

अभ्यास प्रश्न-

1. संगठन सिद्धान्त के पितामह किसे माना जाता है?
   क. फेयोल ख. टेलर ग. गुलिक घ. उर्विक
2. संगठन संरचना की तुलना सीढ़ी संरचना से किस विद्वान ने की है?
   क. टेलर ख. फेयोल ग. मूने तथा रेले घ. मर्टन
3. पद सोपान व्यवस्था में कितने स्तर होते हैं?
   क. तीन ख. चार ग. पाँच घ. संगठन की आवश्यकता एवं प्रकृति के अनुसार
4. लोक प्रशासन में नियंत्रण का क्षेत्र सम्बन्धित है-
   क. आदेश ख. धन से ग. सरकार से घ. जनता से

5. नियंत्रण के लिये किसने कहा कि 'यह पाँच या छः सह कर्मियो की क्रियाओं को सुव्यवस्थित कर सकता है।'
   क. ब्रीच ख. उर्विक ग. टेलर घ. फेयोल

12.6 सारांश

वर्तमान युग सूचना प्रोद्योगिक और ज्ञान का युग है। जब प्रशासनिक संगठनों की जवाबदेह ही सुनिश्चित करना एक राज्य का सर्वोच्तम प्रयास माना जाने लगा है। ऐसी संगठनात्मक कार्यकुशलता, पादरर्शिता और प्रभावपूर्णता बनाये रखने के लिये संगठन की संरचना में लोक प्रशासन के विचार को द्वारा वर्णित सिद्धान्तों का कठोरता से अनुपालन किया जाना अनिवार्य है।

12.7 शब्दावली

क. आदेश ख. धन से ग. सरकार से घ.जनता से

5. नियंत्रण के लिये किसने कहा कि 'यह पाँच या छः सह कर्मियो की क्रियाओं को सुव्यवस्थित कर सकता है।'
   क. ब्रीच ख. उर्विक ग. टेलर घ. फेयोल

12.6 सारांश

वर्तमान युग सूचना प्रोद्योगिक और ज्ञान का युग है। जब प्रशासनिक संगठनों की जवाबदेह ही सुनिश्चित करना एक राज्य का सर्वोच्तम प्रयास माना जाने लगा है। ऐसी संगठनात्मक कार्यकुशलता, पादरर्शिता और प्रभावपूर्णता बनाये रखने के लिये संगठन की संरचना में लोक प्रशासन के विचार को द्वारा वर्णित सिद्धान्तों का कठोरता से अनुपालन किया जाना अनिवार्य है।

12.7 शब्दावली

प्रशासनिक दृष्टिकोण- प्रबंध के कार्यों तथा उनके निष्पादन के लिए आवश्यक गुणों के संदर्भ में प्रबंधन प्रक्रिया का विश्लेषण करना।

तंत्र विचारधारा- संतुलित तथा एकीकृत तंत्र के रूप में प्रबंध को समझना।

समग्र अध्ययन- किसी कार्य का निष्पादन करने में लगने वाले समय का मापन व विश्लेषण करने के लिए प्रयोग की जाने वाली तकनीक।

नियंत्रण का विस्तार- एक प्रबंधक के द्वारा प्रभावपूर्ण पर्यवेक्षण करने के लिए सीमित कर्मचारियों की संख्या निर्धारण।

आदेश की सोपान श्रृंखला- उच्चतम अधिकारी से लेकर नीचे के सतर तक उपक्रम में कार्य करने वाले व्यक्तियों के बीच अधिकार संबंध का यह सोपान बोध कराती है। इसमें अधिकारियों की कड़ी होती है। जो दोनों ही दिशाओं, (ऊपर से नीचे तथा नीचे से ऊपर) में संवहन के लिए कड़ी के रूप में कार्य करते हैं।

प्रबंध की सार्वभौमिकता- प्रबंध विज्ञान के मूल अथवा प्रमुख तत्व, सिद्धांत अवधारणाएँ सभी प्रकार की परिस्थितियों में सभी स्थानों पर लागू होत हैं, व्यवहार में उनका प्रयोग सांस्कृतिक अंतरों, संभाव्यताओं, अथवा परिस्थितियों के अनुसार किया जाता है।

आदेश की सोपान श्रृंखला- उच्चतम अधिकारी से लेकर नीचे के सतर तक उपक्रम में कार्य करने वाले व्यक्तियों के बीच अधिकार संबंध का यह सोपान बोध कराती है। इसमें अधिकारियों की कड़ी होती है। जो दोनों ही दिशाओं, (ऊपर से नीचे तथा नीचे से ऊपर) में संवहन के लिए कड़ी के रूप में कार्य करते हैं।

प्रबंध अथवा नियंत्रण का विस्तार- एक प्रबंधक के द्वारा प्रभावपूर्ण पर्यवेक्षण करने के लिए सीमित कर्मचारियों की संख्या निर्धारण।

12.8 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1-क, 2-ग, 3-घ, 4-क, 5-ख

12.9 सन्दर्भ ग्रन्थ-सूची

1. Bhattacharya, Mohit, 1987 Publi Administration " The World Press Private Ltd: Calcutta.
2. Prasad, Ravindra D. Etc. al 9eds.) 1989 Administrative thinkers:Sterling Publishers : New Delhi.
3. चतुर्वेदी, त्रिलोक नाथ, 1989 तुलनात्मक लोक प्रशासन Research Publication नई दिल्ली।
4. Avasth, A., & maheshwari S, 1984 Public Adiministration; Lakshmi Narain Agarwal ; Agra

12.10 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री

1. Baker R.J.S. 1972 Adiministrative Theory and Aublic Administration ; Hut Chinos : London.
2. Gros Betras, 1964 the Managing Organisations : The Administrative Struggle Vol: The Fee Press of Glencoe : London.
3. Gulick L. and Urwick L. (rds.) 1937 Papers on Science of Administeation ; The Institute of Public Adminisration ; Columbia Unviersity : New Yrk.
4. Prasad, Ravindra, D (ed) 1989 Adninistrative Thinkers: Sterling

इकाई-13 संगठन के सिद्धान्त-II

इकाई की संरचना

13.1 प्रस्तावना
13.2 उद्देश्य
13.3 संगठन के सिद्धान्त
    13.3.1 समन्वय
    13.3.2 प्रत्यायोजन
    13.3.3 पर्यवेक्षण
    13.3.4 केन्द्रीयकरण
    13.3.5 विकेन्द्रीकरण
13.4 सारांश
13.5 शब्दावली
13.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
13.7 सन्दर्भ ग्रन्थ-सूची
13.8 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री
13.9 निबंधात्मक प्रश्न

13.1 प्रस्तावना

यह सर्वविदित है कि प्रशासनिक संगठन नियमों और सिद्धान्तों के आधार पर अपनी संरचना और दैनिक क्रिया कलाषो को अगली जामा पहनाते हैं पिछली इकाई ने संगठन के आधार भूत तीन सिद्धान्तों को विस्तृत विवेचना प्रस्तुत की है। वर्तमान इकाई वस्तुतः उन सिद्धान्तों का विवेचन करेगी जिनका उपयोग क्रियात्मक रूप से संगठन को प्रत्यायोजन, पर्यवेक्षण, केन्द्रीयकरण तथा विकेन्द्रीकरण, को सम्मिलित किया गया है।

13.2 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के उपरान्त आप-

- संगठन में समन्वय के सिद्धान्त को जान सकेंगे।
- संगठन में प्रत्यायोजन के सिद्धान्त के समझ सकेंगे।
- संगठन में पर्यवेक्षण के सिद्धान्त की विवेचना कर सकेंगे।
- संगठन में केन्द्रीयकरण की अवधारणा का विवेचन कर सकेंगे।
- संगठन में विकेन्द्रीकरण के सिद्धान्त के आत्मसात कर सकेंगे।

13.3 संगठन के सिद्धान्त

संगठन के सिद्धान्तों को निम्नलिखित बिन्दुओं के माध्यम से समझने का प्रयास करते हैं।

13.3.1 समन्वय

समन्वय से आशय विभिन्न उत्पन्ति के साधनों और उनकी क्रियाओं को इस तरह से क्रमबद्ध से है, जिससे कि प्रभावी ढंग से संगठन के लक्ष्यों को प्राप्त किया जा सके। एक प्रशासक अपने अधीनस्थ कर्मचारियों एवं अधिकारियों के मध्य सामूहिक प्रयासों को इस प्रकार सुव्यवस्थित करता है कि सामान्य उद्देश्यों की पूर्ति में सभी का योगदान सकारात्मक हों।

सामान्यतः समन्वय यह सुनिश्चित करता है कि एक कर्मचारी दूसरे कर्मचारी के कार्यों में सहयोग दे। इसके के अभाव में सामूहिक प्रयासों की सही दिशा नहीं दी जा सकती है। यह संगठन का हृदय हैं, जिसमें सर्वोच्च अधिकारी से लेकर नीचे स्तर तक के श्रमिकों को उद्देय प्राप्ति के लिए समन्वित प्रयास हेतु प्रेरित किया जाता है, इससे गुणवत्ता के साथ समय बद्ध कार्य का निष्पादन सम्भव हो पाता है।

इस प्रकार संगठन के लक्ष्य को ध्यान में रखकर संगठन के अधीनस्थों तथा विभागों में एकीकरण करने की प्रक्रिया, इसमें समाहित होती है। में संगठन के प्रशासक अनेक कार्य, होते हैं, जैसे नियोजन, नियंत्रण, नियुक्तियाँ, संगठन, अभिप्रेरणा आदि। इन सभी में समन्वय रखना उसके लिये अति

- संगठन में समन्वय के सिद्धान्त को जान सकेंगे।
- संगठन में प्रत्यायोजन के सिद्धान्त के समझ सकेंगे।
- संगठन में पर्यवेक्षण के सिद्धान्त की विवेचना कर सकेंगे।
- संगठन में केन्द्रीयकरण की अवधारणा का विवेचन कर सकेंगे।
- संगठन में विकेन्द्रीकरण के सिद्धान्त के आत्मसात कर सकेंगे।

13.3 संगठन के सिद्धान्त

संगठन के सिद्धान्तों को निम्नलिखित बिन्दुओं के माध्यम से समझने का प्रयास करते हैं।

13.3.1 समन्वय

समन्वय से आशय विभिन्न उत्पन्ति के साधनों और उनकी क्रियाओं को इस तरह से क्रमबद्ध से है, जिससे कि प्रभावी ढंग से संगठन के लक्ष्यों को प्राप्त किया जा सके। एक प्रशासक अपने अधीनस्थ कर्मचारियों एवं अधिकारियों के मध्य सामूहिक प्रयासों को इस प्रकार सुव्यवस्थित करता है कि सामान्य उद्देश्यों की पूर्ति में सभी का योगदान सकारात्मक हों।

सामान्यतः समन्वय यह सुनिश्चित करता है कि एक कर्मचारी दूसरे कर्मचारी के कार्यों में सहयोग दे। इसके के अभाव में सामूहिक प्रयासों की सही दिशा नहीं दी जा सकती है। यह संगठन का हृदय हैं, जिसमें सर्वोच्च अधिकारी से लेकर नीचे स्तर तक के श्रमिकों को उद्देय प्राप्ति के लिए समन्वित प्रयास हेतु प्रेरित किया जाता है, इससे गुणवत्ता के साथ समय बद्ध कार्य का निष्पादन सम्भव हो पाता है।

इस प्रकार संगठन के लक्ष्य को ध्यान में रखकर संगठन के अधीनस्थों तथा विभागों में एकीकरण करने की प्रक्रिया, इसमें समाहित होती है। में संगठन के प्रशासक अनेक कार्य, होते हैं, जैसे नियोजन, नियंत्रण, नियुक्तियाँ, संगठन, अभिप्रेरणा आदि। इन सभी में समन्वय रखना उसके लिये अति महत्वपूर्ण प्रकार्य होता है। अतः हम कह सकते हैं कि समन्वय का सार है जिसमें सामूहिक लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए संस्था के मानवीय एवं भौतिक संसाधनों में समन्वय स्थापित करने का प्रयास किया जाता है। आइये इसे एक उदाहरण द्वारा समझनें का प्रयास करें-

जिस प्रकार भारतीय क्रिक्रेट टीम के खिलाड़ी दूसरी टीम पर उसी दशा में जीत प्राप्त प्राप्त करतें हैं, जबकि टीम के समस्त खिलाड़ी आपस में समन्वय रखते अपनी भूमिकाओं का निर्वहन करें। ठीक उसी प्रकार संगठन के कर्मचारी भी संगठन के पूर्व-निर्धारित लक्ष्यों को तब ही प्राप्त कर सकते हैं, जबकि उनके कार्यों में समन्वय हो। इस प्रकार समन्वय प्रशासन का महत्वपूर्ण कार्य है। समन्वय को विभिन्न विद्वानों ने अपने-अपने ढंग से समझाने का प्रयास किया हैं आइने इसकी विभिन्न परिभाषाओं को समझने का प्रयास करें-

- हेनरी फेयोल के शब्दों में, ''समन्वय से अभिप्राय किसी संगठन की सभी क्रियाओं में एकरूपता स्थापित करने से है, जिससे उसकी कार्यशीलता तथा सफलता सम्भव हो सके।''
- मूने तथा रैले के अनुसार, ''कार्य की एकता की स्थापना हेतु सामूहिक प्रयास का व्यवस्थित आयोजन ही समन्वय कहलाता है।''
- न्यूमैन के अनुसार, ''समन्वय का सम्बन्ध व्यक्तियों के एक समूह के कार्यों को व्यवस्थित ढंग से जोड़ने तथा उनमें एकरूपता लाने से है।''

- कूण्टज 'ओ' डोनेल के अनुसार, ''समन्वय प्रबन्ध का सार है, जो एक समूह के लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए व्यक्तिगत प्रयासों में एकरूपता लाने के लिए किया जाता है।''
- पार्कर फौलेट के अनुसार- यह एक निरन्तर चलने वाली प्रक्रिया है। अतः प्रारम्भ से ही संस्था की क्रियाओं में समन्वय स्थापित करना चाहिए क्योंकि बाद में इसकी स्थपना करना अत्यन्त कठिन हो जाता है।

उपर्युक्त परिभाषाओं के आलोक में यह कहा जा सकता है कि समन्वय संगठन में पारस्परिक विरोध व कटुता को दूर करता है, जिससे सहयोग पूर्ण वातावरण का निर्माण करता है। चूँकि प्रत्येक संगठन में विभिन्न योग्यताओं, इच्छाओं, दृष्टिकोणों तथा आकांक्षाओं वाले व्यक्ति कार्य करते हैं। अतः यदि इस विविधता को उद्देश्य की एकता में रूपान्तरित न किया जाये तो परिणाम नकारात्मक होंगे। वस्तुतः समन्वय ही है वह कला है जो अनेकता को एकता में परिवर्तित कर परिवर्तित संगठन को कार्यकुशल एवं प्रभावी बनाता है। लोक प्रशासन के विचारक समन्वय के अन्तर्गत निम्नलिखित क्रियाओं को सम्मिलित करते हैं-

- कूण्टज 'ओ' डोनेल के अनुसार, ''समन्वय प्रबन्ध का सार है, जो एक समूह के लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए व्यक्तिगत प्रयासों में एकरूपता लाने के लिए किया जाता है।''
- पार्कर फौलेट के अनुसार- यह एक निरन्तर चलने वाली प्रक्रिया है। अतः प्रारम्भ से ही संस्था की क्रियाओं में समन्वय स्थापित करना चाहिए क्योंकि बाद में इसकी स्थपना करना अत्यन्त कठिन हो जाता है।

उपर्युक्त परिभाषाओं के आलोक में यह कहा जा सकता है कि समन्वय संगठन में पारस्परिक विरोध व कटुता को दूर करता है, जिससे सहयोग पूर्ण वातावरण का निर्माण करता है। चूँकि प्रत्येक संगठन में विभिन्न योग्यताओं, इच्छाओं, दृष्टिकोणों तथा आकांक्षाओं वाले व्यक्ति कार्य करते हैं। अतः यदि इस विविधता को उद्देश्य की एकता में रूपान्तरित न किया जाये तो परिणाम नकारात्मक होंगे। वस्तुतः समन्वय ही है वह कला है जो अनेकता को एकता में परिवर्तित कर परिवर्तित संगठन को कार्यकुशल एवं प्रभावी बनाता है। लोक प्रशासन के विचारक समन्वय के अन्तर्गत निम्नलिखित क्रियाओं को सम्मिलित करते हैं-

- संगठन की समस्त क्रियाओं में प्रारम्भ से ही समन्वय स्थापित करना चाहिए,
- विभिन्न अधिकारियों द्वारा किसी निर्णय पर सामूहिक विचार-विमर्श करना चाहिए,
- अधिकारियों एवं कर्मचारियों के मध्य प्रत्यक्ष सम्प्रेषण व्यवस्था स्थापित करना चाहिए तथा
- सेवी-वर्गीय विभागों की आन्तरिक क्रियाओं में समन्वय स्थापित करना चाहिए।

उपरोक्त निर्वचन के पश्चात् समन्वय द्वारा प्राप्त विभिन्न लोगों को निम्नलिखित ढंग से सचिबद्ध कर आत्मसात् किया जा सकता है। आइये इन्हें समझने का प्रयास करें-

- समन्वय एक सतत् चलने वाली प्रक्रिया है। यह स्थिर न होकर गत्यात्मक हैं जो कि किसी निश्चित उद्देश्य के लिए क्रियान्वित की जाता है।
- समन्वय आयोजना, संगठन, अनुमान तथा नियन्त्रण के समन्वय का मूर्त विज्ञान है।
- समन्वय की आवश्यकता सभी व्यावसायिक, गैर-व्यावसायिक, राजनीतिक, सामाजिक, धार्मिक संगठनो में उनेक प्रारम्भिक कार्यों से ही प्रारम्भ हो जाती है।
- संगठन की कार्यकुशलता उचित समन्वय पर ही निर्भर करती है, जितना कुशल समन्वय होगा, संगठन उतना ही सुचारू रूप से अपने कार्यों का निष्पादन करेगा।

इस प्रकार कार्य की एकता की स्थापना हेतु सामूहिक प्रयास की नियमित व्यवस्था ही समन्वय का मूल आधार है।

एक ओर जहाँ समन्वय के विभिन्न लाभ हैं, वही दूसरी ओर इसके महत्वपूर्ण कार्य भी है। जिन्हें अध्ययन को पूर्णता प्रदान करने हेतु वर्गीकृत कर अध्ययन किया जाना आवश्यक हैं। आइये इन्हें विश्लेषित करने का प्रयास करें-

- बिना समन्वय के एक संस्था के कर्मचारी विभिन्न दिशाओं में भटक सकते हैं, समन्वय समूह के सदस्यों में समान उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए सामूहिकतर की भावना को जगाने का प्रयास करता है।
- सामान्यतया यह देखा गया है कि एक ही संगठन के विभागीय उद्देश्य व वैयक्तिक उद्देश्य परस्पर विरोधी होते हैं। जिससे संसाधनों का दुरूपयोग प्रारम्भ हो जाता है। ऐसे विरोधों को दूर कर संसाधनों का सदुपयोग संभव बनाने का कार्य करता है।
- निजीकरण उदारीकरण और भूमण्डलीकरण के कारण प्रशासनिक संगठन के आकार में बेतहाशा वृद्धि होने लगी है। इनका बढ़ता हुआ आकार, जटिल संगठन संरचना तथा दोषपूर्ण सम्प्रेषण को जन्म देता है और ऐसी दशा में संगठन में प्रवाहपूर्ण कार्य प्रणाली के लिये समन्वय की आवश्यकता बढ़ जाती है।
- जब समूह का मिला-जुला प्रभाव समूह के प्रत्येक सदस्य के पृथक-पृथक किये जा सकने वाले योगदान के योग से अधिक हो, तो इसे सिनर्जी लाभ कहा जाता है। समन्वय द्वारा एक संगठन को सिनर्जी लाभ होता है, क्योंकि समन्वय द्वारा वैयक्तिक प्रयास समूह प्रयास में बदल दिये जाते हैं और संगठन की कुल कार्यक्षमता बढ़ जाती है।
- समन्वय के अन्तर्गत ऐसी योजनाओं का निर्माण किया जाता है जो कि अधीनस्थ कर्मचारियों की गतिविधियों में उचित समन्वय स्थापित करने में सर्वथा सक्षम हों तथा जो उनकी गतिविधियों का नियमन कर सकें।

अब तक के विश्लेषण से आप समन्वय के सिद्धान्त के अनुप्रयोगों से भलीभाँति परिचित हो चुके हैं। अब प्रश्न यह उठाता है कि क्या समन्वय लागू करनी की कोई प्रक्रिया भी है? जी हाँ समन्वय को

- बिना समन्वय के एक संस्था के कर्मचारी विभिन्न दिशाओं में भटक सकते हैं, समन्वय समूह के सदस्यों में समान उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए सामूहिकतर की भावना को जगाने का प्रयास करता है।
- सामान्यतया यह देखा गया है कि एक ही संगठन के विभागीय उद्देश्य व वैयक्तिक उद्देश्य परस्पर विरोधी होते हैं। जिससे संसाधनों का दुरूपयोग प्रारम्भ हो जाता है। ऐसे विरोधों को दूर कर संसाधनों का सदुपयोग संभव बनाने का कार्य करता है।
- निजीकरण उदारीकरण और भूमण्डलीकरण के कारण प्रशासनिक संगठन के आकार में बेतहाशा वृद्धि होने लगी है। इनका बढ़ता हुआ आकार, जटिल संगठन संरचना तथा दोषपूर्ण सम्प्रेषण को जन्म देता है और ऐसी दशा में संगठन में प्रवाहपूर्ण कार्य प्रणाली के लिये समन्वय की आवश्यकता बढ़ जाती है।
- जब समूह का मिला-जुला प्रभाव समूह के प्रत्येक सदस्य के पृथक-पृथक किये जा सकने वाले योगदान के योग से अधिक हो, तो इसे सिनर्जी लाभ कहा जाता है। समन्वय द्वारा एक संगठन को सिनर्जी लाभ होता है, क्योंकि समन्वय द्वारा वैयक्तिक प्रयास समूह प्रयास में बदल दिये जाते हैं और संगठन की कुल कार्यक्षमता बढ़ जाती है।
- समन्वय के अन्तर्गत ऐसी योजनाओं का निर्माण किया जाता है जो कि अधीनस्थ कर्मचारियों की गतिविधियों में उचित समन्वय स्थापित करने में सर्वथा सक्षम हों तथा जो उनकी गतिविधियों का नियमन कर सकें।

अब तक के विश्लेषण से आप समन्वय के सिद्धान्त के अनुप्रयोगों से भलीभाँति परिचित हो चुके हैं। अब प्रश्न यह उठाता है कि क्या समन्वय लागू करनी की कोई प्रक्रिया भी है? जी हॉं समन्वय को क्रियान्वित करने की निम्नलिखित विधियॉं हैं। आइये इन्हे क्रमबद्ध कर समझनें का प्रयास करें-

- नियोजन- नियोजन को समन्वय की तरफ बढ़ा हुआ प्रथम कदम मानते हैं। यह साधन, कर्मचारी वर्ग एवं उनके व्यवहार आदि से प्रत्यक्ष सम्बन्धित होता हैं। एक अच्छा नियोजन का कार्य आधी सफलता की गारण्टी होता है। अतः संगठन में कुशल समन्वय के लिये प्रभावी नियोजन का होना अवश्यक है।
- संगठन के समस्त अनुभाग समन्वय में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं, प्रशासन में विभिन्न प्रकार के विवाद उठते हैं, जिनका समाधान समन्वय के द्वारा किया जाता है। अतः विभागीय स्तर पर समन्वय की स्थापना, प्रभावी समन्वय का द्वितीय चरण है।
- लेखा विभाग- किसी भी संगठन लेखा विभाग मंत्रलाय स्वयं एक महत्वपूर्ण समन्वयकर्ता है, प्रशासकीय विभाग लेखा विभाग में अपनी वित्त सम्बन्धी माँगे प्रस्तुत करते हैं ओर ऐसा करने में वे अक्सर समन्वयात्मक दृष्टिकोण अपनाते हैं, बजट-निर्माण के क्रम में लेखा विभाग को विभिन्न प्रकार की समन्वयकारी भूमिका निभानी पड़ती है। अतः

आवश्यकतानुसार समन्वय स्थापना में लेखा एवं वित्त अनुभाग की सहायता ली जा सकती है।

- अन्तर्विभागीय समितियाँ- प्रशासनिक विभागों के बीच उत्पन्न होने वाले विवादों और मतभेदों को सुलझाने तथा प्रशासनिक क्रियाओं विभागीय समितियों का महत्व पूर्ण स्थान होता है। अतः इन समितियों की स्थापना एवं कुशल प्रयोग समन्वय को प्रभावी बनाता है।
- संचार के साधन- संचार के साधन को भी समन्वय स्थापना में महत्वपूर्ण होते हैं। संचार के साधनों द्वारा लिखित या लिखित सूचनाओं, आज्ञाओं, निर्देशों आदि को एक अधिकारी से दूसरे अधिकारी तक पहुँचाया जाता है, जिससे समन्वय की प्रक्रिया आसान हो जाती है।

13.3.2 प्रत्यायोजन

आज सूचना क्रान्ति के युग में किसी एक व्यक्ति के लिये उपक्रम की सम्पूर्ण व्यवस्था पर नियन्त्रण रखना सम्भव नहीं है। इसीलिये व्यक्ति अपना कार्य अन्य व्यक्तियों को सौंप देते हैं। इस प्रकार से अपने कार्य-भार को दूसरे व्यक्तियों को सौंपना ही प्रत्यायोजन कहलाता है। अतः यदि कोई अधिकारी स्वयं कार्य करने में समर्थ नहीं है तो उसके लिए उसे अपने अधिकारों को हस्तान्तरित करना होता है।

दूसरे शब्दों में प्रत्येक व्यक्ति को जिसे कुछ कार्य सौंपे जाये तो आवश्यक है कि उसे कुछ अधिकार भी प्रदान किये जायें, क्योंकि अधिकारों के बिना कोई भी व्यक्ति अपने कर्तव्य को पूर्णतया पालन करने में असमर्थ रहेगा। अतः यह आवश्यक है कि यदि किसी व्यक्ति को कोई कार्य सौंपा जाये तो उसे कुछ अधिकार भी प्रदान किये जाये। अधिकारों के इस प्रकार के हस्तान्तरण को ही अधिकारों के प्रत्यायोजन की संज्ञा दी जाती है। इस सम्बन्ध में लोक प्रशासन के विद्वानों ने विभिन्न परिभाषायें प्रस्तुत की हैं। आइये इन्हें विश्लेषित करें-

1. एफ0जी0 मूरे के अनुसार, ''अधिकार प्रत्यायोजन का आशय कार्यों का अन्य व्यक्तियों को हस्तान्तरण तथा उस कार्य को करने की शक्ति का हस्तांतरण है।''
2. लुईस ए0 ऐलन के अनुसार, ''प्रत्यायोजन एक क्रियात्मक संचालन शक्ति है। यह एक ऐसी

प्रकार के विवाद उठते हैं, जिनका समाधान समन्वय के द्वारा किया जाता है। अतः विभागीय स्तर पर समन्वय की स्थापना, प्रभावी समन्वय का द्वितीय चरण है।

- लेखा विभाग- किसी भी संगठन लेखा विभाग मंत्रलाय स्वयं एक महत्वपूर्ण समन्वयकर्ता है, प्रशासकीय विभाग लेखा विभाग में अपनी वित्त सम्बन्धी माँगे प्रस्तुत करते हैं ओर ऐसा करने में वे अक्सर समन्वयात्मक दृष्टिकोण अपनाते हैं, बजट-निर्माण के क्रम में लेखा विभाग को विभिन्न प्रकार की समन्वयकारी भूमिका निभानी पड़ती है। अतः

आवश्यकतानुसार समन्वय स्थापना में लेखा एवं वित्त अनुभाग की सहायता ली जा सकती है।

- अन्तर्विभागीय समितियाँ- प्रशासनिक विभागों के बीच उत्पन्न होने वाले विवादों और मतभेदों को सुलझाने तथा प्रशासनिक क्रियाओं विभागीय समितियों का महत्व पूर्ण स्थान होता है। अतः इन समितियों की स्थापना एवं कुशल प्रयोग समन्वय को प्रभावी बनाता है।
- संचार के साधन- संचार के साधन को भी समन्वय स्थापना में महत्वपूर्ण होते हैं। संचार के साधनों द्वारा लिखित या लिखित सूचनाओं, आज्ञाओं, निर्देशों आदि को एक अधिकारी से दूसरे अधिकारी तक पहुँचाया जाता है, जिससे समन्वय की प्रक्रिया आसान हो जाती है।

13.3.2 प्रत्यायोजन

आज सूचना क्रान्ति के युग में किसी एक व्यक्ति के लिये उपक्रम की सम्पूर्ण व्यवस्था पर नियन्त्रण रखना सम्भव नहीं है। इसीलिये व्यक्ति अपना कार्य अन्य व्यक्तियों को सौंप देते हैं। इस प्रकार से अपने कार्य-भार को दूसरे व्यक्तियों को सौंपना ही प्रत्यायोजन कहलाता है। अतः यदि कोई अधिकारी स्वयं कार्य करने में समर्थ नहीं है तो उसके लिए उसे अपने अधिकारों को हस्तान्तरित करना होता है।

दूसरे शब्दों में प्रत्येक व्यक्ति को जिसे कुछ कार्य सौंपे जाये तो आवश्यक है कि उसे कुछ अधिकार भी प्रदान किये जायें, क्योंकि अधिकारों के बिना कोई भी व्यक्ति अपने कर्तव्य को पूर्णतया पालन करने में असमर्थ रहेगा। अतः यह आवश्यक है कि यदि किसी व्यक्ति को कोई कार्य सौंपा जाये तो उसे कुछ अधिकार भी प्रदान किये जाये। अधिकारों के इस प्रकार के हस्तान्तरण को ही अधिकारों के प्रत्यायोजन की संज्ञा दी जाती है। इस सम्बन्ध में लोक प्रशासन के विद्वानों ने विभिन्न परिभाषायें प्रस्तुत की हैं। आइये इन्हें विश्लेषित करें-

1. एफ0जी0 मूरे के अनुसार, ''अधिकार प्रत्यायोजन का आशय कार्यों का अन्य व्यक्तियों को हस्तान्तरण तथा उस कार्य को करने की शक्ति का हस्तांतरण है।''
2. लुईस ए0 ऐलन के अनुसार, ''प्रत्यायोजन एक क्रियात्मक संचालन शक्ति है। यह एक ऐसी प्रक्रिया है, जिसका अनुसरण करते हुए एक प्रशासक अपने कार्य को इस तरह विभाजित करता है कि इसका ऐसा भाग जो केवल वह स्वयं ही संगठन में अपनी अद्वितीय स्थिति के कारण प्रभावपूर्णता के साथ कर सकता है, वह स्वयं करता है और अन्य भागों के सम्बन्ध में ही दूसरों से सहायता लेता है।''

उपरोक्त दृष्टिकोणों के आधार पर प्रत्यायोजन की निम्नलिखित विशेषताओं की स्थापना की जा सकती है-

- प्रत्यायोजन संगठन की वह प्रक्रिया है, जिसके द्वारा अधिकारों या सत्ता का एक भाग अधीनस्थों को सौंपा जाता है। इसमें अधिकारों का स्तान्तरण किया जाता है।

- प्रत्यायोजन के बाद भी इस क्रिया को करने वाले अधिकारी के पास अधिकार बने रहते है। इस प्रकार यह अधिकारों का वितरण है न कि विकेन्द्रीकरण।
- प्रत्यायोजन उपरिगामी तथा पार्श्विक प्रकृति का भी हो सकता है। जिससे अधीनस्थों की अधिकार सीमा को स्पष्ट होती है।
- प्रत्यायोजन का अर्थ अधिकार त्यागना नहीं है, बल्कि अधिकारों को सौंपना होता है। निष्पादन सरल हो सके।
- प्रत्यायोजन सौंपे गये अधिकारों को कभी भी कम या अधिक कर सकता है।
- प्रत्यायोजन में उस व्यक्ति के कार्य की सीमाऐं भी निश्चित की जाती है, जिसे अधिकार सौंपे गये हैं।
- प्रत्यायोजन का उद्देश्य प्रशासकीय एवं क्रियात्मक दक्षता को बढ़ाना होता है। यह सदैव सिद्धान्तों के आधार पर किये जाते हैं।
- ऐसे अधिकारों का प्रत्यायोजन कदापि नहीं किया जा सकता जो स्वयं के पास न हो।

प्रक्रिया है, जिसका अनुसरण करते हुए एक प्रशासक अपने कार्य को इस तरह विभाजित करता है कि इसका ऐसा भाग जो केवल वह स्वयं ही संगठन में अपनी अद्वितीय स्थिति के कारण प्रभावपूर्णता के साथ कर सकता है, वह स्वयं करता है और अन्य भागों के सम्बन्ध में ही दूसरों से सहायता लेता है।"

उपरोक्त दृष्टिकोणों के आधार पर प्रत्यायोजन की निम्नलिखित विशेषताओं की स्थापना की जा सकती है-

- प्रत्यायोजन संगठन की वह प्रक्रिया है, जिसके द्वारा अधिकारों या सत्ता का एक भाग अधीनस्थों को सौंपा जाता है। इसमें अधिकारों का स्तान्तरण किया जाता है।

- प्रत्यायोजन के बाद भी इस क्रिया को करने वाले अधिकारी के पास अधिकार बने रहते है। इस प्रकार यह अधिकारों का वितरण है न कि विकेन्द्रीकरण।
- प्रत्यायोजन उपरिगामी तथा पार्श्विक प्रकृति का भी हो सकता है। जिससे अधीनस्थों की अधिकार सीमा को स्पष्ट होती है।
- प्रत्यायोजन का अर्थ अधिकार त्यागना नहीं है, बल्कि अधिकारों को सौंपना होता है। निष्पादन सरल हो सके।
- प्रत्यायोजन सौंपे गये अधिकारों को कभी भी कम या अधिक कर सकता है।
- प्रत्यायोजन में उस व्यक्ति के कार्य की सीमाऐं भी निश्चित की जाती है, जिसे अधिकार सौंपे गये हैं।
- प्रत्यायोजन का उद्देश्य प्रशासकीय एवं क्रियात्मक दक्षता को बढ़ाना होता है। यह सदैव सिद्धान्तों के आधार पर किये जाते हैं।
- ऐसे अधिकारों का प्रत्यायोजन कदापि नहीं किया जा सकता जो स्वयं के पास न हो।
- प्रत्यायोजन में कार्य निष्पादन हेतु अधिकारों का प्रत्यायोजन किया जाता है, न कि पद का।

अब तक हम यह अच्छी तरह जान चुके हैं कि व्यस्तताओं एवं जटिलताओं के कारण कोई भी प्रशासक संगठन की समस्त क्रियाओं का सफल संचालन नहीं कर सकता, क्योंकि प्रायः एक प्रशासक को संगठन की समस्त क्रियाओं का ज्ञान थोड़ा ही होता है। आधुनिक समय में प्रशासक के लिये निम्नलिखित कारणों से प्रत्यायोजन करना आवश्यक होता है। आइये उन कारणों को क्रमबद्ध कर समझने का प्रयास करें-

- कोई भी प्रशासक कितना ही योग्य क्यों न हो, वह संगठन की समस्त क्रियाओं पर अकेला नियन्त्रण नहीं रख सकता। इसके अतिरिक्त यदि कोई प्रशासक संगठन की विविध क्रियाओं को करना भी चाहे तो, वह अनेक महत्वपूर्ण कार्यों को समय पर पूरा नहीं कर सकेगा। अतः हम कह सकते हैं कि प्रत्येक मानव अपूर्ण हैं, अतः इस मानवीय अपूर्णता के कारण प्रत्यायोजन करना आवश्यक हो जाता है।
- आधुनिक युग विशिष्टीकरण का युग है और किसी भी एक व्यक्ति के लिये यह सम्भव नहीं है कि वह सभी क्षेत्रों की क्रियाओं में विशिष्टता प्राप्त कर लें। अतः प्रशासकों को विशेषज्ञों को कार्यों का प्रत्यायोजन करना पड़ता है।
- आधुनिक संचार और सूचना क्रान्ति के युग में में में समाज की बढ़ती हुई आवश्यकताओं की पूर्ति करने के लिये संगठन को अपने कार्यात्मक क्षेत्र के आकार में विस्तार करना पड़ता है। विस्तार करने के लिये अनेक शाखायें अथवा उप-विभागों की स्थापना करनी पड़ती है।

इन नये उप-विभागों की क्रियाओं को संचालित करने के लिये प्रत्यायोजन की निरन्तर आवश्यकता पड़ती है।

- उच्च अधिकारी अपने अधिकारों एवं कर्तव्यों का प्रत्यायोजन करके निम्न-स्तर के प्रबन्ध अधिकारियों को महत्वपूर्ण विषयों एवं समस्याओं पर निर्णय लेने के अवसर प्रदान करते हैं। इसे निम्न स्तर के कर्मचारियो में भी आवश्यक गुणों का विकास होता है ओर भविष्य में अच्छे कर्मचारी आसानी से उपलब्ध हो जाते है।

उपयुक्त विवेचन के आधार पर प्रत्यायोजन की आवश्यकता के समबन्ध में कहा जा सकता है कि जिस प्रकार अधिकार एक प्रशासन कार्य की कुन्जी है, ठीक उसी प्रकार अधिकार का प्रत्यायोजन संगठन की कुन्जी है। आधुनिक समय में प्रशासनिक संगठन अधिकारों का प्रत्यायोजन किये बिना सफलता प्राप्त नहीं कर सकता।

उपरोक्त आवश्यकताओं के आलोक में लोक प्रशासन के विभिन्न विद्वानों ने प्रत्यायोजन का

प्रत्यायोजन करना आवश्यक हो जाता है।

- आधुनिक युग विशिष्टीकरण का युग है और किसी भी एक व्यक्ति के लिये यह सम्भव नहीं है कि वह सभी क्षेत्रों की क्रियाओं में विशिष्टता प्राप्त कर लें। अतः प्रशासकों को विशेषज्ञों को कार्यों का प्रत्यायोजन करना पड़ता है।
- आधुनिक संचार और सूचना क्रान्ति के युग में में में समाज की बढ़ती हुई आवश्यकताओं की पूर्ति करने के लिये संगठन को अपने कार्यात्मक क्षेत्र के आकार में विस्तार करना पड़ता है। विस्तार करने के लिये अनेक शाखायें अथवा उप-विभागों की स्थापना करनी पड़ती है।

इन नये उप-विभागों की क्रियाओं को संचालित करने के लिये प्रत्यायोजन की निरन्तर आवश्यकता पड़ती है।

- उच्च अधिकारी अपने अधिकारों एवं कर्तव्यों का प्रत्यायोजन करके निम्न-स्तर के प्रबन्ध अधिकारियों को महत्वपूर्ण विषयों एवं समस्याओं पर निर्णय लेने के अवसर प्रदान करते हैं। इसे निम्न स्तर के कर्मचारियो में भी आवश्यक गुणों का विकास होता है ओर भविष्य में अच्छे कर्मचारी आसानी से उपलब्ध हो जाते है।

उपयुक्त विवेचन के आधार पर प्रत्यायोजन की आवश्यकता के समबन्ध में कहा जा सकता है कि जिस प्रकार अधिकार एक प्रशासन कार्य की कुन्जी है, ठीक उसी प्रकार अधिकार का प्रत्यायोजन संगठन की कुन्जी है। आधुनिक समय में प्रशासनिक संगठन अधिकारों का प्रत्यायोजन किये बिना सफलता प्राप्त नहीं कर सकता।

उपरोक्त आवश्यकताओं के आलोक में लोक प्रशासन के विभिन्न विद्वानों ने प्रत्यायोजन का वर्गीकरण प्रस्तुत किया है। आइये इसके वर्गीकरण को विस्तार से समझने का प्रयास करें -

- **सामान्य प्रत्यायोजन-** जब संगठन की समस्त क्रियाओं का कार्य-भार किसी एक व्यक्ति को सौंप दिया जाता है, तो यह सामान्य प्रत्यायोजन कहलाता है।
- **निश्चित प्रत्यायोजन-** जब एक व्यक्ति को निश्चित क्रियाओं के सम्बन्ध में ही कार्य-भार सौंपा जाता है, तब निश्चित प्रत्यायोजन अस्तित्व में आता है।
- **लिखित प्रत्यायोजन-** जब कार्य-भार का प्रत्यायोजन लिखित रूप में सौंपा जाये तो इसे लिखित भारार्पण की संज्ञा दी जाती है।
- **मौखिक प्रत्यायोजन-** जब कार्य-भार मौखिक रूप में सोंपा जाये तो उसे मौखिक प्रत्यायोजन के नाम से जानते हैं। इसकी तुलना में लिखित प्रत्यायोजन को संगठन में अधिक श्रेष्ठ माना जाता है।
- **औपचारिक प्रत्यायोजन-** जब प्रत्यायोजन संगठन की अधिकार रेखा द्वारा निर्धारित सीमाओं के आधार पर होता है तो उसे औपचारिक प्रत्यायोजन के नाम से जाना जाता है।
- **अनौपचारिक प्रत्यायोजन-** इसके के अन्तर्गत अधीनस्थ कर्मचारी उच्च-अधिकारियों की आज्ञा पर नहीं, अपितु स्वतः प्रेरणा में कार्य करते है। इसका का मुख्य उद्देश्य लालफीताशाही को समाप्त कर भ्रष्टाचार का अन्त करना होता है।
- **पाश्विक प्रत्यायोजन-** जब प्रत्यायोजन समस्तरीय अधिकारी को किया जाये तो उसे पर्श्विक भारार्पण कहा जाता है।
- **अधोगामी प्रत्यायोजन-** अधोगामी प्रत्यायोजन के अन्तर्गत प्रत्यायोजन प्राय उच्च अधिकारी से नीचे के अधिकारी की ओर होता है।

प्रशासकीय संगठनों में प्रत्यायोजन के सफलता से क्रियान्यवयन हेतु, विभिन्न प्रकार के सिद्धान्तों का निरूपण किया गया है। ज्ञातव्य हो कि वे सिद्धान्त संगठन की प्रकृति और उसकी आवश्यकतानुसार परिवर्तनीय हैं कभी-कभी एक से अधिक सिद्धान्तों का प्रयोग भी लक्ष्यों की सफलता एवं सुव्यवस्थित प्राप्ति के लिये किया जा सकता है।

आइये प्रभावी प्रत्यायोजन के लिये निरूपित कुछ सिद्धान्तों को समझने का प्रयास करें-

- **प्रत्याशित परिणामों के द्वारा कर्तव्यों को सौंपने का सिद्धान्त-** उच्च अधिकारी अपने कर्तव्यों का प्रत्यायोजन अपने अधीनस्थों को करता है। परन्तु ऐसा करते समय उच्च-अधिकारी को चाहिये वह अधीनस्थों को उन उद्देश्यों को स्पष्ट कर दे जिन्हें वह प्राप्त करना चाहता है।
- **अधिकार एवं दायित्व का सिद्धान्त-** इस सिद्धान्त के अनुसार अधीनस्थों को प्रत्यायोजन करते समय उनके अधिकारों एवं दायित्वों को ध्यान में रखा जाता है।

लालफीताशाही को समाप्त कर भ्रष्टाचार का अन्त करना होता है।

- **पार्श्विक प्रत्यायोजन-** जब प्रत्यायोजन समस्तरीय अधिकारी को किया जाये तो उसे पर्श्विक भारार्पण कहा जाता है।
- **अधोगामी प्रत्यायोजन-** अधोगामी प्रत्यायोजन के अन्तर्गत प्रत्यायोजन प्राय उच्च अधिकारी से नीचे के अधिकारी की ओर होता है।

प्रशासकीय संगठनों में प्रत्यायोजन के सफलता से क्रियान्यवयन हेतु, विभिन्न प्रकार के सिद्धान्तों का निरूपण किया गया है। ज्ञातव्य हो कि वे सिद्धान्त संगठन की प्रकृति और उसकी आवश्यकतानुसार परिवर्तनीय हैं कभी-कभी एक से अधिक सिद्धान्तों का प्रयोग भी लक्ष्यों की सफलता एवं सुव्यवस्थित प्राप्ति के लिये किया जा सकता है।

आइये प्रभावी प्रत्यायोजन के लिये निरूपित कुछ सिद्धान्तों को समझने का प्रयास करें-

- **प्रत्याशित परिणामों के द्वारा कर्तव्यों को सौंपने का सिद्धान्त-** उच्च अधिकारी अपने कर्तव्यों का प्रत्यायोजन अपने अधीनस्थों को करता है। परन्तु ऐसा करते समय उच्च-अधिकारी को चाहिये वह अधीनस्थों को उन उद्देश्यों को स्पष्ट कर दे जिन्हें वह प्राप्त करना चाहता है।
- **अधिकार एवं दायित्व का सिद्धान्त-** इस सिद्धान्त के अनुसार अधीनस्थों को प्रत्यायोजन करते समय उनके अधिकारों एवं दायित्वों को ध्यान में रखा जाता है।
- **पूर्ण उत्तरदायित्व का सिद्धान्त-** कोई भी अधिकारी केवल अपने अधिकारों को प्रत्यायोजन कर सकता है, उत्तरदायित्वों का नहीं। प्रत्येक अधिकारी जो अपने कार्य को अधीनस्थों को सौंपता है, सौंपे गये कार्यों के सम्बन्ध में पूर्ण उत्तरदायित्व उसी अधिकारी का होता है, अधीनस्थों को नहीं।
- **आदेश की एकता का सिद्धान्त-** प्रत्यायोजन की प्रक्रिया सम्पन्न करते समय इस तथ्य को ध्यान में रखना चाहिए कि अधीनस्थों को आदेश केवल उच्च-स्तर से ही प्राप्त हों तथा एक ही अधिकारी आदेश दे।

प्रायः सामान्यज्ञों द्वारा यह प्रश्न उठाया जाता है कि क्या प्रत्यायोजन वास्तव में लाभकारी है? इस सम्बन्ध में लोक प्रशासन के विभिन्न विद्वानों ने एक स्वर में निम्नलिखित लाभों को सूचिबद्ध किया है। जिनके आधार पर प्रशासनिक संगठनों में प्रत्यायोजन किया जाना लाभप्रद होता है आइये इनको समझने का प्रयास करें-

- प्रत्यायोजन संगठन के में प्रभावशाली आधार का कार्य करता है।
- प्रत्यायोजन निर्णय की प्रक्रिया प्रभावशाली आधार तक पहुंचाने में सहायता होता है, जिससे पारस्परिक सहयोग बढ़ता है।
- इसके द्वारा अधीनस्थों को प्रशिक्षण प्रदान करने में सहायता मिलती है।
- यह पदोन्नति से सम्बन्धित निर्णय लेने में सहायता होता है।
- यह प्रशासनिक पर्यवेक्षण को अधिक प्रभावी बनाता है।
- इसके उपयोग प्रशासन को नीतिनिर्माण करने का पर्याप्त समय प्राप्त होता है।
- प्रत्यायोजन के द्वारा संगठन विस्तार में सुगमता होती है।

- इसके क्रियान्यवयन उपकरण प्रत्यायोजन को ही माना जाता है।
- यह सदैव अधीनस्थों के मनोबल में वृद्धि कर कार्य निस्पादन को सुगम बनाता है। इससे अधीनस्थों को व्यक्तिगत विकास में भी सहायता मिलती है।

उपरोक्त लाभों के विश्लेषण से यह स्पष्ट है कि अधिकारों का प्रत्यायोजन अधिकारी एवं अधीनस्थों दोनों के ही हित में है और इससे सम्पूर्ण उपक्रम लाभान्वित होता है तथा जनता के प्रति जवाब देही सुनिश्चित होती है।

13.3.3 पर्यवेक्षण

जब प्रशासनिक संगठनों में निर्णय निम्न अधिकारियों तक संचारित कर दिये जाये तो पद सोपान में उच्चाधिकारी को अगला कार्य पदसोपान में यह देखना होता है कि उन्हें प्रभावी रूप से क्रियान्वित किया जाये। उनका यह दायित्व है कि वे इस सम्बन्ध में आवश्वस्त करते रहे है कि संगठन सुचारू रूप से कार्य करता रहे तथा निर्दिष्ट उद्देश्यों की प्राप्ति समन्वित के लिये प्रयास निरन्तर किये जाते रहें। प्रशासनिक संगठन की इसी आवश्यकता को ही पर्यवेक्षण कहा जाता है।

इस प्रकार किसी संगठन के उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए किये जाने वाले सामूहिक प्रयास का पर्यवेक्षण करना आवश्यक हो जाता है। दूसरे शब्दों में पर्यवेक्षण से अभिप्राय होता है कार्यरत

समझने का प्रयास करें-

- प्रत्यायोजन संगठन के में प्रभावशाली आधार का कार्य करता है।
- प्रत्यायोजन निर्णय की प्रक्रिया प्रभावशाली आधार तक पहुंचाने में सहायता होता है, जिससे पारस्परिक सहयोग बढ़ता है।
- इसके द्वारा अधीनस्थों को प्रशिक्षण प्रदान करने में सहायता मिलती है।
- यह पदोन्नति से सम्बन्धित निर्णय लेने में सहायता होता है।
- यह प्रशासनिक पर्यवेक्षण को अधिक प्रभावी बनाता है।
- इसके उपयोग प्रशासन को नीतिनिर्माण करने का पर्याप्त समय प्राप्त होता है।
- प्रत्यायोजन के द्वारा संगठन विस्तार में सुगमता होती है।

- इसके क्रियान्वयन उपकरण प्रत्यायोजन को ही माना जाता है।
- यह सदैव अधीनस्थों के मनोबल में वृद्धि कर कार्य निस्पादन को सुगम बनाता है। इससे अधीनस्थों को व्यक्तिगत विकास में भी सहायता मिलती है।

उपरोक्त लाभों के विश्लेषण से यह स्पष्ट है कि अधिकारों का प्रत्यायोजन अधिकारी एवं अधीनस्थों दोनों के ही हित में है और इससे सम्पूर्ण उपक्रम लाभान्वित होता है तथा जनता के प्रति जवाब देही सुनिश्चित होती है।

13.3.3 पर्यवेक्षण

जब प्रशासनिक संगठनों में निर्णय निम्न अधिकारियों तक संचारित कर दिये जाये तो पद सोपान में उच्चाधिकारी को अगला कार्य पदसोपान में यह देखना होता है कि उन्हें प्रभावी रूप से क्रियान्वित किया जाये। उनका यह दायित्व है कि वे इस सम्बन्ध में आवश्वस्त करते रहे है कि संगठन सुचारू रूप से कार्य करता रहे तथा निर्दिष्ट उद्देश्यों की प्राप्ति समन्वित के लिये प्रयास निरन्तर किये जाते रहें। प्रशासनिक संगठन की इसी आवश्यकता को ही पर्यवेक्षण कहा जाता है।
इस प्रकार किसी संगठन के उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए किये जाने वाले सामूहिक प्रयास का पर्यवेक्षण करना आवश्यक हो जाता है। दसरे शब्दों में पर्यवेक्षण से अभिप्राय होता है कार्यरत कर्मचारियों पर निगरानी रखना। यह ऐसी प्रक्रिया है जिसके अंतर्गत कोई व्यक्ति अन्य व्यक्तियों के कार्य का निर्देशन और निरीक्षण करता है। इसका का मुख्य प्रयोजन यह सुनिश्चित करना है कि कर्मचारियों को जो कार्य सौंपे जाते हैं, वे उन्हें भलीभांति और कुशलता पूर्वक करते हैं।
कार्यालय प्रभावी या उसके ऊपर के अधिकारियों से मिले सामान्य आदेशों और निदेशों को कार्यालय के पर्यवेक्षण स्तर पर कार्यान्वित किया जाता है। रिपोर्टों का तैयार होना, उनको टाइप किया जाना, पत्रों का फाइल होना, बैठकों की व्यवस्था, आगंतुकों का सत्कार कर विवरणियों को तैयार किया जाना तथा इसी प्रकृति के अन्य कार्यों को किया जाना और इन कार्यों के होने वाले परिणाम बहुत कुछ इस बात पर निर्भर करते हैं कि कार्यालय पर्यवेक्षण किस प्रकार का है।
पर्यवेक्षण के दोषपूर्ण या उसमें कमी होने से नीतियों और कार्यक्रमों के सुचारू रूप से कार्यान्वयन में अनेक बाधाएं और आ सकती है। यदि पर्यवेक्षण न किया जाए तो प्रत्येक कर्मचारी कार्यालय के उद्देश्यों को ध्यान में रखे बिना ही अपनी सुविधा के अनुसार मनमनाने ढंग से काम करेगा। कार्यालय के कार्यों में बढ़ती जटिलता के कारण अब पर्यवेक्षण के महत्व को अधिक स्वीकारा जाने लगा है। केवल किताबी ज्ञान प्राप्त व्यक्ति यदि कार्यालय में काम करने आता है तो वह वहां हो रहे काम को देखकर ही उन्हें नहीं सीख सकता। इसके लिए तो आवश्यक होता है। कि उसे सतत् मागदर्शन और निर्देशन प्राप्त होता रहे तथा कार्य को सीखने और कुशलता पूर्वक उसे करने की उसे प्रेरणा मिले। कार्यालय पर्यवेक्षण के फलस्वरूप नए तथा पुराने सभी प्रकार के कर्मचारी कार्य को अच्छी तरह से कर पाते हैं।

कार्यालय के पर्यवेक्षण के फलस्वरूप कार्यालय के कार्य समन्वित ढंग से हो पाते हैं। ये कार्य दिन-प्रतिदिन अधिकाधिक विशेषीकृत होते जा रहे हैं, जिम्मेदारी विभिन्न स्तरों के अधिकारियों के मध्य विभक्त होती हे और एक दूसरे पर निर्भरता भी होती है। इन सबके फलस्वरूप रिपोर्टों, बीजकों ओर पत्रों के मसोदों को अच्छी तरह से तैयार करने के कार्य में पर्यवेक्षण आवश्यक हो जाता है। चूंकि कार्य अनेक विभागों में होता है अतः आवश्यक होता है कि काम के संबंध में कर्मचारी एक दूसरे से विचार-विमर्श करते रहें।
इस प्रकार पर्यवेक्षण का कार्य करने वाले अधिकारी/कर्मचारी संगठन में कड़ी का काम करते हैं। इस सिद्धान्त के अनुसार नेता एवं कर्मचारियों के मध्य जितना अधिक व्यक्तिगत व प्रत्यक्ष सम्पर्क होगा नेतृत्व भी उतना ही अधिक प्रभावशाली होगा।

के कार्यों में बढ़ती जटिलता के कारण अब पर्यवेक्षण के महत्व को अधिक स्वीकारा जाने लगा है। केवल किताबी ज्ञान प्राप्त व्यक्ति यदि कार्यालय में काम करने आता है तो वह वहां हो रहे काम को देखकर ही उन्हें नहीं सीख सकता। इसके लिए तो आवश्यक होता है। कि उसे सतत् मागदर्शन और निर्देशन प्राप्त होता रहे तथा कार्य को सीखने और कुशलता पूर्वक उसे करने की उसे प्रेरणा मिले। कार्यालय पर्यवेक्षण के फलस्वरूप नए तथा पुराने सभी प्रकार के कर्मचारी कार्य को अच्छी तरह से कर पाते हैं।

कार्यालय के पर्यवेक्षण के फलस्वरूप कार्यालय के कार्य समन्वित ढंग से हो पाते हैं। ये कार्य दिन-प्रतिदिन अधिकाधिक विशेषीकृत होते जा रहे हैं, जिम्मेदारी विभिन्न स्तरों के अधिकारियों के मध्य विभक्त होती हे और एक दूसरे पर निर्भरता भी होती है। इन सबके फलस्वरूप रिपोर्टो, बीजकों ओर पत्रों के मसोदों को अच्छी तरह से तैयार करने के कार्य में पर्यवेक्षण आवश्यक हो जाता है। चूंकि कार्य अनेक विभागों में होता है अतः आवश्यक होता है कि काम के संबंध में कर्मचारी एक दूसरे से विचार-विमर्श करते रहें।

इस प्रकार पर्यवेक्षण का कार्य करने वाले अधिकारी/कर्मचारी संगठन में कड़ी का काम करते हैं। इस सिद्धान्त के अनुसार नेता एवं कर्मचारियों के मध्य जितना अधिक व्यक्तिगत व प्रत्यक्ष सम्पर्क होगा नेतृत्व भी उतना ही अधिक प्रभावशाली होगा।

उपरोक्त विवेचना के उपरान्त पर्यवेक्षण की निम्नलिखित विशेषताएँ दृष्टिगत होती है। आइये इनको क्रमशः समझने का प्रयास करें-

1. संगठन में काम करने वाले कर्मचारियों को निरंतर निर्देशित और अभिप्रेरित करना होता है, जिससे वे और अच्छे तरह से काम कर सकें। प्रबंध के सबसे नीचे के स्तर पर पर्यवेक्षक होते हें, जिनका कर्मचारियों के साथ सतत संपर्क होता है तथा उनके दिन-प्रतिदिन के कार्य में वे उनका निदेशन और निर्देशन करते हैं। इस प्रकार पर्यवेक्षक एक सतत् गतिशील प्रक्रिया है।
2. कार्यालय पर्यवेक्षण प्रत्यायोजित कार्य है: कार्यालय के पर्यवेक्षक के पास जो शक्ति होती है वह उसे अपने ऊपर के अधिकारियों से मिली हुई होती है। कार्यालय का प्रबंधक वहां के कर्मचारियों के काम के निदेशन का अधिकार पर्यवेक्षक को सौंप देता है। पर्यवेक्षण प्रत्यायोजित कार्य तो है, परन्तु इसके संबंध में मुख्य बात यह है कि पर्यवेक्षक के पास अधिकार तो होता है और उसके साथ ही साथ कार्य में लगे हुए कर्मचारियों के काम के संबंध में जिम्मेदारी भी उसी की होती है।
3. कार्यालय पर्यवेक्षण प्रबंध का पहला स्तर है: प्रबंध की अनेक श्रेणियों में से पर्यवेक्षण पहली श्रेणी है। पर्यवेक्षक योजना बनाने वाले ओर उन्हें कार्यान्वित करने वालों के बीच कड़ी का काम करता है। प्रबंध के प्रथम स्तर के अधिकारी होने के नाते पर्यवेक्षक के पास कार्य की प्रगति के संबंध में मूल स्रोत से प्राप्त सूचना होती है ओर वह कार्य को निर्धारित समय में पूरा कराता है।

   आधुनिक युग में प्रशासकीय संगठन में पर्यवेक्षण का महत्व और भी बढ़ गया है लोक प्रशासन में नीतियों की रचना, कार्यक्रमों का निर्धारण, बजट-निर्माण तथा कर्मचारियों की नियुक्ति इत्यादि कार्य तभी सफल हो सकते हैं यदि उनक कार्यों के पर्यवेक्षण। आज के युग में पर्यवेक्षण का स्वरूप पहले की तुलना में बदल गया है, अब इसका उद्देश्य पहले की तरह केवल गलतियों को खोजना नहीं, बल्कि यह देखना है कि कार्य करने की सुविधाएं कर्मचारी को प्राप्त हैं, या नहीं।

13.3.4 केन्द्रीयकरण

जब उपक्रम के उच्च-प्रबन्धकों के द्वारा अधीनस्थों को अधिकारों का भारार्पण नहीं किया जाता है और अधीनस्थ उच्च-प्रबन्ध के निर्देशानुसार ही कार्य करते हैं, तब इस संगठन के प्रारूप को केन्द्रीयकरण की संज्ञा देते हैं। केन्द्रीयकरण एक ऐसी स्थिति होती है, जिसके अन्तर्गत सभी प्रमुख अधिकार किसी एक व्यक्ति या विशिष्ट पद के पास सुरक्षित रहते हैं, अर्थात्। इस व्यवस्था के अन्तर्गत अधिकारों का सहायकों को भारर्पण नहीं किया जाता है।

वास्तव में कार्य के सम्बन्ध में अधिकांश निर्णय उन व्यक्तियों द्वारा नहीं लिये जाते जो कि कार्य में संलग्न हैं, अपितु संगठन में एक उच्चतर बिन्दु पर लिए जाते हैं। यह अधिकार सत्ता का न्यूनतम प्रत्यायोजन है। केन्द्रीकरण का तात्पर्य है, सत्ता को संगठन के उच्च स्तर पर केन्द्रित करना। इस व्यवस्था के अन्तर्गत नीति-निर्धारण एवं निर्णय लेने की शक्ति को प्रशासनिक संगठन के उच्च अधिकारियों के अधिकार क्षेत्र में रखा जाता है, तथा संगठन के निचले स्तर के अधिकारी निर्देश, सलाह तथा स्पष्टीकरण हेतु ऊपरी स्तर के अधिकारियों पर निर्भर रहते हैं।

लोक प्रशासन के विभिन्न विचारकों ने इस सम्बन्ध में विभिन्न दृष्टिकोण प्रस्तुत किये हैं। आइये इन्हें

प्रशासन में नीतियों की रचना, कार्यक्रमों का निर्धारण, बजट-निर्माण तथा कर्मचारियों की नियुक्ति इत्यादि कार्य तभी सफल हो सकते हैं यदि उनके कार्यों के पर्यवेक्षण। आज के युग में पर्यवेक्षण का स्वरूप पहले की तुलना में बदल गया है, अब इसका उद्देश्य पहले की तरह केवल गलतियों को खोजना नहीं, बल्कि यह देखना है कि कार्य करने की सुविधाएं कर्मचारी को प्राप्त हैं, या नहीं।

13.3.4 केन्द्रीयकरण

जब उपक्रम के उच्च-प्रबन्धकों के द्वारा अधीनस्थों को अधिकारों का भारार्पण नहीं किया जाता है और अधीनस्थ उच्च-प्रबन्ध के निर्देशानुसार ही कार्य करते हैं, तब इस संगठन के प्रारूप को केन्द्रीयकरण की संज्ञा देते हैं। केन्द्रीयकरण एक ऐसी स्थिति होती है, जिसके अन्तर्गत सभी प्रमुख अधिकार किसी एक व्यक्ति या विशिष्ट पद के पास सुरक्षित रहते हैं, अर्थात्। इस व्यवस्था के अन्तर्गत अधिकारों का सहायकों को भारर्पण नहीं किया जाता है।

वास्तव में कार्य के सम्बन्ध में अधिकांश निर्णय उन व्यक्तियों द्वारा नहीं लिये जाते जो कि कार्य में संलग्न हैं, अपितु संगठन में एक उच्चतर बिन्दु पर लिए जाते हैं। यह अधिकार सत्ता का न्यूनतम प्रत्यायोजन है। केन्द्रीकरण का तात्पर्य है, सत्ता को संगठन के उच्च स्तर पर केन्द्रित करना। इस व्यवस्था के अन्तर्गत नीति-निर्धारण एवं निर्णय लेने की शक्ति को प्रशासनिक संगठन के उच्च अधिकारियों के अधिकार क्षेत्र में रखा जाता है, तथा संगठन के निचले स्तर के अधिकारी निर्देश, सलाह तथा स्पष्टीकरण हेतु ऊपरी स्तर के अधिकारियों पर निर्भर रहते हैं।

लोक प्रशासन के विभिन्न विचारकों ने इस सम्बन्ध में विभिन्न दृष्टिकोण प्रस्तुत किये हैं। आइये इन्हें समझने का प्रयास करें-

1. हेनरी फेयोल के अनुसार, ''संगठन में अधीनस्थों की भूमिका को कम करने के लिए जो भी कदम उठाये जाते हैं, वे सब विकेन्द्रीयकरण के अन्तर्गत आते हैं।''
2. कुण्टज 'ओ' डोनेल के अनुसार, "केन्द्रीयकरण और विकेन्द्रीकरण में ठीक उतना ही अन्तर है जितना कि ठण्डे और गरम में पाया जाता है।"
3. लुइस ए0 ऐलन के शब्दों में, "केन्द्रीयकरण से आशय है कि किये जाने वाले कार्य के सम्बन्ध में अधिकांश निर्णय उन व्यक्तियों द्वारा नहीं लिये जाते हैं जो कि कार्य कर रहे हैं, अपितु संगठन के उच्चतर बिन्दु पर लिये जाते हैं।"

उपरोक्त परिभाषाओं के विवेचन के उपरान्त निम्नलिखित विशेषताओं को निरूपित किया जा सकता है। आइये इन्हें क्रमबद्ध कर आत्मसात् करने का प्रयास करें-

1. केन्द्रीयकरण के अन्तर्गत संगठन के समस्त अधिकार एक ही व्यक्ति के पास केन्द्रित कर दिये जाते हैं और वह व्यक्ति ही उपक्रम के सम्पूर्ण कार्यों का निर्देशन करता है।
2. केन्द्रीयकरण व्यक्तिगत नेतृत्व में सहयोगी होता है।
3. एकीकरण व समन्वय सुगम व श्रेष्ठतर होता है।
4. नीतियों, व्यवहारों व कार्यवाहियों में एकरूपता रहती है।
5. आपातकालीन परिस्थितियों और संकट का सामना आसानी से हो सकता है।
6. योजनाओं तथा प्रस्तावों की गोपनीयता बनाई रखी जा सकती है।
7. इसके अन्तर्गत निर्णय परिचालन स्तर पर लेने के बजाए शीर्ष प्रबन्धकों के स्तर या उच्चतर बिन्दु पर लिये जाते हैं।

8. अधिकारों का केन्द्रीयकरण केवल उसी सीमा तक किया जाना चाहिए जो कि श्रेष्ठतम निष्पादन के लिए आवश्यक हो। केन्द्रीयकरण की कोटि का निश्चय संगठन की प्रकृति तथा उसके आकार को ध्यान में रखकर किया जाता है। केन्द्रीयकरण से संगठन को निम्नलिखित लाभ प्राप्त होते हैं।

- **एकीकृत व्यवस्था-** संस्था के उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए उच्च अधिकारियों द्वारा अपने अधीनस्थों को केन्द्रीयकृत आदेश एवं निर्देश देना अत्यन्त आवश्यक होता है। चूँकि केन्द्रीकरण के अन्तर्गत निर्णय शीर्ष अधिकारियों द्वारा लिये जाते हैं, जिससे आदेशों एवं निर्देशों में एकता बनी रहती है एक। क्रम में चलते हुए यह एकीकृत व्यवस्था को जन्म देता है।
- **क्रियाओं की एकरूपता-** केन्द्रीकरण के अन्तर्गत संस्था के समस्त विभागों को आदेश एक ही केन्द्र बिन्द से प्राप्त होते हैं, जिससे इन विभागों की क्रियाओं में एकरूपता बनी रहती है। निर्णयों में भी एकरूपता रहती है। इस प्रकार सम्पूर्ण संगठन की क्रियाओं में एकरूपता का प्रदर्शन होता है।
- **संकटकाल में सहायक-** प्रशासन जितना केन्द्रित होगा। आपातकालीन निर्णय उतना ही

6. योजनाओं तथा प्रस्तावों की गोपनीयता बनाई रखी जा सकती है।
7. इसके अन्तर्गत निर्णय परिचालन स्तर पर लेने के बजाए शीर्ष प्रबन्धकों के स्तर या उच्चतर बिन्दु पर लिये जाते हैं।

8. अधिकारों का केन्द्रीयकरण केवल उसी सीमा तक किया जाना चाहिए जो कि श्रेष्ठतम निष्पादन के लिए आवश्यक हो। केन्द्रीयकरण की कोटि का निश्चय संगठन की प्रकृति तथा उसके आकार को ध्यान में रखकर किया जाता है। केन्द्रीयकरण से संगठन को निम्नलिखित लाभ प्राप्त होते हैं।

- **एकीकृत व्यवस्था-** संस्था के उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए उच्च अधिकारियों द्वारा अपने अधीनस्थों को केन्द्रीयकृत आदेश एवं निर्देश देना अत्यन्त आवश्यक होता है। चूँकि केन्द्रीकरण के अन्तर्गत निर्णय शीर्ष अधिकारियों द्वारा लिये जाते हैं, जिससे आदेशों एवं निर्देशों में एकता बनी रहती है एक। क्रम में चलते हुए यह एकीकृत व्यवस्था को जन्म देता है।
- **क्रियाओं की एकरूपता-** केन्द्रीकरण के अन्तर्गत संस्था के समस्त विभागों को आदेश एक ही केन्द्र बिन्द से प्राप्त होते हैं, जिससे इन विभागों की क्रियाओं में एकरूपता बनी रहती है। निर्णयों में भी एकरूपता रहती है। इस प्रकार सम्पूर्ण संगठन की क्रियाओं में एकरूपता का प्रदर्शन होता है।
- **संकटकाल में सहायक-** प्रशासन जितना केन्द्रित होगा। आपातकालीन निर्णय उतना ही शीघ्रता से लिया जा सकेगा। आपातकाल में सोचने-विचारने का समय कम होता है तथा गलत निर्णय लेने पर परिणाम नकारात्मक भी हो सकते हैं। अतैव केन्द्रीकरण के द्वारा संकटकालीन समस्त निर्णय शीर्षस्थ अधिकारी लेते हैं, जिससे अधीनस्थ चिन्तायुक्त रहते हैं।

यूँ तो केन्द्रीकरण से उपरोक्त लाभ एक संगठन के होते हैं, फिर भी प्रत्येक अवधारणा के जहाँ लाभ होते है, वहीं उसकी कुछ हानियों भी होती है। आइये अध्ययन की पूर्णता की दृष्टि से इसके निम्नलिखित दोषों को समझने का प्रयास करें-

- **विकास में बाधक-** उच्च अधिकारियों पर कार्यभार अधिक हो जाने से विलम्ब के साथ-साथ अकुशलता भी बढ़ सकती है।
- **उच्च स्तरीय प्रबन्ध का बोलबाला-** केन्द्रीकरण में शीर्ष प्रबन्ध एवं विभागीय प्रबन्ध के बीच सदैव टकराव की स्थिति बनी रहती है, क्योंकि समस्त अधिकार एवं निर्णय लेने की दक्षता वरिष्ठ अधिकारियों में समाहित कर दी जाती है।
- **संदेशवाहन में अप्रभावी-** अधिकारों और उत्तरदायित्वों के मध्य असंन्तुलन का एक कारण भी होता है, केन्दीकरण यह असन्तुलन अधिकारियों और कर्मचारियों के मध्य सम्प्रेक्षण प्रणाली को भी हानि पहुँचता है।

- **संगठन में निराशा-** केन्द्रीकरण में कर्मचारी प्रेरणा का अभाव रहता है तथा उनका मनोबल बढ़ाने के लिए कोई स्पष्ट युक्ति का प्रयोग नहीं होता, जिससे कर्मचारियों का उत्साह व मनोबल गिरता है, जिससे नियन्त्रण शिथिल हो जाता है।
- **निर्णयों में देरी-** वरिष्ठों एवं कर्मचारयों के बीच संघर्ष की आशंका निरन्तर बनी रहती है तो और निर्णयों में विलम्ब से सामने आता है। कागजी कार्यवाही जटिल हो जाती है।

संक्षेप में केन्द्रीकरण की अवधारणा का लक्ष्य केन्द्रीयकृत कार्य करना है। जिसके लिए अधिकारियों की शक्ति संगठन के शीर्ष स्तर पर केन्द्रीकृत कर ली जाती है। किन्हीं परिस्थितियों में ये अच्छा परिणाम दे सकते हैं और कभी नकारात्मक परिणाम भी दे सकते हैं।

13.3.5 विकेन्द्रीकरण

आज प्रशासनिक संगठन का सम्पूर्ण कार्य एक व्यक्ति द्वारा सम्पादित नहीं किया जा सकता है, अपितु संगठन के विभिन्न व्यक्तियों को सौंप दिये जाते हैं। इस प्रकार संगठन में केन्द्रीकरण के स्थान पर विकेन्द्रीकरण की अवधारणा जन्म लेती है। यह एक ऐसी व्यवस्था होती है, जिसके अन्तर्गत सभी अधिकार किसी विशिष्ट व्यक्ति या पद के पास एकत्रित न कर उन व्यक्तियों को प्रत्यायोजित कर दिये जाते है, जिनसे यह सम्बन्धित होते हैं। संगठन में विकन्द्रीकरण की मात्रा जितनी अधिक होगी उतनी ही अधिक अधीनस्थों की संख्या पर नियंत्रण किया जाना सम्भव हो सकेगा।

1. लुइस ए0 ऐलन के शब्दों में, विकेन्द्रीकरण से आशय केवल केन्द्रीय बिन्दुओं पर ही प्रयोग

- **संगठन में निराशा-** केन्द्रीकरण में कर्मचारी प्रेरणा का अभाव रहता है तथा उनका मनोबल बढ़ाने के लिए कोई स्पष्ट युक्ति का प्रयोग नहीं होता, जिससे कर्मचारियों का उत्साह व मनोबल गिरता है, जिससे नियन्त्रण शिथिल हो जाता है।
- **निर्णयों में देरी-** वरिष्ठों एवं कर्मचारयों के बीच संघर्ष की आशंका निरन्तर बनी रहती है तो और निर्णयों में विलम्ब से सामने आता है। कागजी कार्यवाही जटिल हो जाती है।

संक्षेप में केन्द्रीकरण की अवधारणा का लक्ष्य केन्द्रीयकृत कार्य करना है। जिसके लिए अधिकारियों की शक्ति संगठन के शीर्ष स्तर पर केन्द्रीकृत कर ली जाती है। किन्हीं परिस्थितियों में ये अच्छा परिणाम दे सकते हैं और कभी नकारात्मक परिणाम भी दे सकते हैं।

13.3.5 विकेन्द्रीकरण

आज प्रशासनिक संगठन का सम्पूर्ण कार्य एक व्यक्ति द्वारा सम्पादित नहीं किया जा सकता है, अपितु संगठन के विभिन्न व्यक्तियों को सौंप दिये जाते हैं। इस प्रकार संगठन में केन्द्रीकरण के स्थान पर विकेन्द्रीकरण की अवधारणा जन्म लेती है। यह एक ऐसी व्यवस्था होती है, जिसके अन्तर्गत सभी अधिकार किसी विशिष्ट व्यक्ति या पद के पास एकत्रित न कर उन व्यक्तियों को प्रत्यायोजित कर दिये जाते है, जिनसे यह सम्बन्धित होते हैं। संगठन में विकन्द्रीकरण की मात्रा जितनी अधिक होगी उतनी ही अधिक अधीनस्थों की संख्या पर नियंत्रण किया जाना सम्भव हो सकेगा।

1. लुइस ए0 ऐलन के शब्दों में, विकेन्द्रीकरण से आशय केवल केन्द्रीय बिन्दुओं पर ही प्रयोग किये जाने वाले अधिकारों के अतिरिक्त सभी अधिकारों को व्यवस्थित रूप से निम्न स्तरों को सौंपने से है। विकेन्द्रीकरण का सम्बन्ध उत्तरदायित्व के सन्दर्भ में अधिकार प्रदान करने से है।
2. कुण्ट्ज एवं ओ0 डोनेल के अनुसार, अधिकार सत्ता का विकेन्द्रीयकरण प्रत्यायोजन का प्राथमिक पहलू है तथा जिस सीमा तक अधिकारों का प्रत्यायोजन नहीं होता है वे केन्द्रित हो जाते हैं।
3. हेनरी फेयोल के शब्दों में, अधीनस्थ वर्ग की भूमिका के महत्व को बढ़ाने के लिये जो भी कदम उठाये जाये वे सब विकेन्द्रीयकरण के अन्तर्गत आते हैं।

उपर्युक्त परिभाषाओं के विश्लेषणात्मक अध्ययन के आधार पर कहा जा सकता है कि विकेन्द्रीकरण एक ऐसी व्यवस्था है, जिसमें अधीनस्थों का महत्व बढ़ता है। निर्णयन प्रणाली का महत्वपूर्ण हिस्सा बनते हैं। आइये इसकी कुछ महत्वपूर्ण विशेषताओं को समझने का प्रयास करें-

- उच्च अधिकारी का ध्यान बड़े कार्यों पर केन्द्रित होता है।
- युवा अधिकारियों को स्वतंत्र निर्णय लेने का अवसर मिलता है।
- समन्वय की भावना का प्रसार होता है।
- विकेन्द्रीकरण में विवधीकरण आसान हो जाता है।

- योग्य प्रबन्धक व कर्मचारी संस्था की ओर आकर्षित होते हैं।
- निम्न स्तर के प्रबन्धकों को कार्यभार सुपुर्द किए जाने के कारण उनमें प्रबन्धकीय क्षमता विकसित होती है।
- निर्णय लेने में सुविधा व शीघ्रता होती है।

उपरोक्त विशेषताओं के आलोक में लोक प्रशासन के विचारकों ने विकेन्द्रीकरण के कुछ महत्वपूर्ण उद्देश्यों की स्थापना की है। आइये इन्हें क्रमबद्ध कर विश्लेषित करने का प्रयास करें-

- **उच्च प्रबन्धकों का कार्यभार कम करना-** यदि संगठन में सभी छोटे-बड़े कार्यों पर निर्णय उच्च अधिकारियों को ही करना होगा, तो ऐसी स्थिति में उनका कार्यभार तो बढ़ेगा ही साथ ही ऐसा भी हो सकता है कि महत्वपूर्ण कार्यों या योजनाओं के सम्बन्ध में वे सुव्यवस्थित निर्णय न कर सकें। ऐसी स्थिति में विकेन्द्रीकरण अत्यन्त आवश्यक हो जाता है।
- **अधीनस्थों का विकास करना-** सहायक अधिकारियों की योग्यता कार्यकुशलता, अनुभवों, तकनीकियों आदि को परखने तथा विकसित करने के लिए विकेन्द्रीकरण अत्यन्त आवश्यक है। इस प्रकार इनका सही उपयोग एवं उत्तरदायित्व निर्धारित किया जाता है।
- **प्रतिस्पर्धा का सामना करना-** आज की गलाकाट प्रतिस्पर्धा के युग में जहाँ तुरन्त निर्णय लेने की आवश्यकता होती है, ऐसी स्थिति में केन्द्रीयकरण के ऊपर पूर्णरूपेण निर्भर नहीं रहा जा सकता है। विकेन्द्रीकरण निर्णय को सरल, प्रभावी एवं मितव्ययी बनाता है।
- **विविधीकरण की सुविधा के लिए-** यदि किसी संगठन के पास कार्यों की विविधता है तो उसे विकेन्द्रीकरण के सिद्धांतों पर आधारित विभागीकरण को अपनाना आवश्यक

- योग्य प्रबन्धक व कर्मचारी संस्था की ओर आकर्षित होते हैं।
- निम्न स्तर के प्रबन्धकों को कार्यभार सुपुर्द किए जाने के कारण उनमें प्रबन्धकीय क्षमता विकसित होती है।
- निर्णय लेने में सुविधा व शीघ्रता होती है।

उपरोक्त विशेषताओं के आलोक में लोक प्रशासन के विचारकों ने विकेन्द्रीकरण के कुछ महत्वपूर्ण उद्देश्यों की स्थापना की है। आइये इन्हें क्रमबद्ध कर विश्लेषित करने का प्रयास करें-

- **उच्च प्रबन्धकों का कार्यभार कम करना-** यदि संगठन में सभी छोटे-बड़े कार्यों पर निर्णय उच्च अधिकारियों को ही करना होगा, तो ऐसी स्थिति में उनका कार्यभार तो बढ़ेगा ही साथ ही ऐसा भी हो सकता है कि महत्वपूर्ण कार्यों या योजनाओं के सम्बन्ध में वे सुव्यवस्थित निर्णय न कर सकें। ऐसी स्थिति में विकेन्द्रीकरण अत्यन्त आवश्यक हो जाता है।
- **अधीनस्थों का विकास करना-** सहायक अधिकारियों की योग्यता कार्यकुशलता, अनुभवों, तकनीकियों आदि को परखने तथा विकसित करने के लिए विकेन्द्रीकरण अत्यन्त आवश्यक है। इस प्रकार इनका सही उपयोग एवं उत्तरदायित्व निर्धारित किया जाता है।
- **प्रतिस्पर्धा का सामना करना-** आज की गलाकाट प्रतिस्पर्धा के युग में जहाँ तुरन्त निर्णय लेने की आवश्यकता होती है, ऐसी स्थिति में केन्द्रीयकरण के ऊपर पूर्णरूपेण निर्भर नहीं रहा जा सकता है। विकेन्द्रीकरण निर्णय को सरल, प्रभावी एवं मितव्ययी बनाता है।
- **विविधीकरण की सुविधा के लिए-** यदि किसी संगठन के पास कार्यों की विविधता है तो उसे विकेन्द्रीकरण के सिद्धांतों पर आधारित विभागीकरण को अपनाना आवश्यक होगा। इस प्रकार विभागीकरण विकेन्द्रीकरण अवधारणा के अन्तर्गत ही अस्तित्व में लाया जा सकता है।

भारतीय गणराज्य जहाँ सवैधनिक व्यवस्था का मूल आधार लोक कल्याण है। सभी राज्यों और केन्द्र प्रशासन में विकेन्द्रीकृत व्यवस्था क्रियान्वित है। किन्तु ये व्यवस्था कुछ निश्चित सिद्धान्तों के आधार पर क्रमशः आगे बढ़ती है। लोक प्रशासन में श्री राल्फ जे0 कार्डीनर ने विकेन्द्रीकरण के निम्नलिखित सिद्धन्तों का प्रतिपादन किया है आइये इन्हें समझने का प्रयास करें-

- विकेन्द्रीकरण से सम्बन्धित निर्णय लेने का अधिकार सदैव उच्च-प्रबन्ध को दिया जाना चाहिए।
- अधीनस्थों में निर्णय लेने की क्षमता होनी चाहिए, तभी इसे क्रियान्वित करना चाहिए।
- विकेन्द्रीयकरण व्यवस्था को क्रियान्वित करने के लिए अधिकारों का प्रत्यायोजन किया जाना चाहिए।

- अधीनस्थों को अधिकारों के साथ-साथ उत्तरदायित्व भी उचित माता में सौंपे जाने चाहिए।
- विकेन्द्रीकरण के लिए ऐसी आपसी साझेदारी का होना आवश्यक है, जिसमें स्टाफ का प्रमुख कार्य अनुभवी लोगों के माध्यम से कर्मचारियों को सहायता एवं परामर्श प्रदान करना होता है ताकि कर्मचारी स्वतंत्रता पूर्वक निर्णय ले सकें और यदि आवश्यकता हो तो उसमें सुधार कर सकें।
- विकेन्द्रीकरण इस मान्यता पर आधारित है कि एक व्यक्ति द्वारा लिये गये निर्णय की तुलना में सामूहिक रूप से लिये गये निर्णय व्यवसाय में अधिक श्रेष्ठ होते हैं।
- इसमें निर्णय लेते समय अधिकतम ज्ञान व अनुकूलतम साझेदारी से काम लेना चाहिये अन्यथा विकेन्द्रीकरण की व्यवस्था सफल नहीं होगी।
- इसके लिये सेवीवर्गीय नीतियाँ प्रामाणिक आधार पर हानी चाहिए तथा उनमें समय-समय पर आवश्यक संशोधन किये जाने चाहिए। इसमें श्रेष्ठ कार्य करने वाले व्यक्ति को पुरस्कार तथा खराब कार्य करने वाले व्यक्ति को दण्ड देने का प्रावधान होना चाहिए।
- विकेन्द्रीकरण की व्यवस्था सामान्य व्यावसायिक उद्देश्यों, संगठन, संरचना, उपक्रम की नीतियों की जानने व समझने की आवश्यकता पर निर्भर करती है।

लोक प्रशासन में विचारकों ने विकेन्द्रीकृत व्यवस्था के निम्नलिखित लाभों को रेखांकित किया है। भारतीय प्रशासनिक प्रणाली इस तथ्य की प्रत्यक्ष गवाह है कि विकेन्द्रीकृत व्यवस्था ने सदैव ही अप्रत्याशित परिणाम दिये हैं। आइये इसके कुछ प्रमुख लाभों को आत्मसात करें-

- इस अवधारणा से निर्णय लेने में सुविधा रहती है।

* विकेन्द्रीयकरण व्यवस्था को क्रियान्वित करने के लिए अधिकारों का प्रत्यायोजन किया जाना चाहिए।

* अधीनस्थों को अधिकारों के साथ-साथ उत्तरदायित्व भी उचित माता में सौंपे जाने चाहिए।
* विकेन्द्रीकरण के लिए ऐसी आपसी साझेदारी का होना आवश्यक है, जिसमें स्टाफ का प्रमुख कार्य अनुभवी लोगों के माध्यम से कर्मचारियों को सहायता एवं परामर्श प्रदान करना होता है ताकि कर्मचारी स्वतंत्रता पूर्वक निर्णय ले सकें और यदि आवश्यकता हो तो उसमें सुधार कर सकें।
* विकेन्द्रीकरण इस मान्यता पर आधारित है कि एक व्यक्ति द्वारा लिये गये निर्णय की तुलना में सामूहिक रूप से लिये गये निर्णय व्यवसाय में अधिक श्रेष्ठ होते हैं।
* इसमें निर्णय लेते समय अधिकतम ज्ञान व अनुकूलतम साझेदारी से काम लेना चाहिये अन्यथा विकेन्द्रीकरण की व्यवस्था सफल नहीं होगी।
* इसके लिये सेवीवर्गीय नीतियाँ प्रामाणिक आधार पर हानी चाहिए तथा उनमें समय-समय पर आवश्यक संशोधन किये जाने चाहिए। इसमें श्रेष्ठ कार्य करने वाले व्यक्ति को पुरस्कार तथा खराब कार्य करने वाले व्यक्ति को दण्ड देने का प्रावधान होना चाहिए।
* विकेन्द्रीकरण की व्यवस्था सामान्य व्यावसायिक उद्देश्यों, संगठन, संरचना, उपक्रम की नीतियों की जानने व समझने की आवश्यकता पर निर्भर करती है।

लोक प्रशासन में विचारकों ने विकेन्द्रीकृत व्यवस्था के निम्नलिखित लाभों को रेखांकित किया है। भारतीय प्रशासनिक प्रणाली इस तथ्य की प्रत्यक्ष गवाह है कि विकेन्द्रीकृत व्यवस्था ने सदैव ही अप्रत्याशित परिणाम दिये हैं। आइये इसके कुछ प्रमुख लाभों को आत्मसात करें-

* इस अवधारणा सें निर्णय लेने में सुविधा रहती है।
* इसमें उच्च-प्रबन्ध व अधीनस्थों के मध्य सौहार्दपूर्ण सम्बन्ध होते है।
* इस अवधारणा से संगठन में राजनीति का अभाव रहता है जिससे अधिकारियों एवं कर्मचारियों में टकराहट नहीं होती।
* इससे अनौपचारिकता व लोकतन्त्र को बढ़ावा मिलता है।
* इसमें अधीनस्थों के अच्छे कार्य की प्रशंसा की जाती है।
* इसमें विभागों के मध्य स्वस्थ्य प्रतिस्पर्धा से, उनकी कमजोरियों का ज्ञान प्राप्त होता है, जिसमें उन्हें तुरन्त दूर किया जा सकता है। जिससे निरीक्षण कार्य प्रभावी ढंग से किया जा सकता है।
* इसमें निर्णय लेते समय अधिकारी का सभी बातों का ज्ञान रहता है।

इस प्रकार प्रशासनिक संगठन विकेन्द्रीकरण में कर्मचारियों के मनोबल में वृद्धि होती है और योग्य कर्मचारियों की प्राप्ति होती है। इसमें उच्च अधिकारियों पर कार्य-भार भी कम रहता है।

अभ्यास प्रश्न -

1. समन्वय का शाब्दिक अर्थ क्या है?
   क. सहयोग ख. प्रेम ग. नियोजन घ. प्रोत्साहन
2. किस विद्वान के अनुसार समन्वय संगठन की विभिन्न क्रियाओं में एकरूपता लाता है?
   क. टेलर ख. मेयो ग. उर्विक घ. फेयोल
3. अपने कार्यों को दूसरे कर्मचारियों को सौंपना क्या कहलाता है?
   क. प्रोत्साहन ख. नियोजन ग. निर्णयन घ. प्रत्यायोजन
4. किस विद्वान के अनुसार प्रत्यायोजन एक क्रियात्मक संचालन शक्ति है?
   क. टेलर ख. उर्विक ग. मूरे घ. लुईस एवं ऐलन
5. जब प्रत्यायोजन उच्च अधिकारी से निम्न अधिकारी को होता है तो यह किस प्रकार का प्रत्यायोजन कहलाता है?
   क. अनौपचारिक ख. औपचारिक ग. मौखिक घ. उर्ध्वगामी
6. जब प्रत्यायोजन संगठन की अधिकार रेखा द्वारा रेखा द्वारा निर्धारित सीमाओ के आधार पर होता है तो यह किस प्रकार का प्रत्यायोजन कहलाता है?
   क. औपचारिक ख. अनौपचारिक ग. मौखिक घ. लिखित

13.4 सारांश

अभी तक के समस्त सिद्धान्तों को अभिप्राय केवल संगठन के कार्य को प्रभावी बनाना है। वर्तमान समाज ज्ञान आधारित समाज है, यहाँ संगठन में पारदर्शिता, जवाबदेही और कार्यकुशलता की अपेक्षा प्रत्येक नागरिक की होती है। वस्तुतः संगठन में समन्वय प्रत्यायोजन, पर्यवेक्षक, केन्द्रीकरण,

- इस अवधारणा से संगठन में राजनीति का अभाव रहता है जिससे अधिकारियों एवं कर्मचारियों में टकराहट नहीं होती।
- इससे अनौपचारिकता व लोकतन्त्र को बढ़ावा मिलता है।
- इसमें अधीनस्थों के अच्छे कार्य की प्रशंसा की जाती है।
- इसमें विभागों के मध्य स्वस्थ्य प्रतिस्पर्धा से, उनकी कमजोरियों का ज्ञान प्राप्त होता है, जिसमें उन्हें तुरन्त दूर किया जा सकता है। जिससे निरीक्षण कार्य प्रभावी ढंग से किया जा सकता है।
- इसमें निर्णय लेते समय अधिकारी का सभी बातों का ज्ञान रहता है।

इस प्रकार प्रशासनिक संगठन विकेन्द्रीकरण में कर्मचारियों के मनोबल में वृद्धि होती है और योग्य कर्मचारियों की प्राप्ति होती है। इसमें उच्च अधिकारियों पर कार्य-भार भी कम रहता है।

अभ्यास प्रश्न -

1. समन्वय का शाब्दिक अर्थ क्या है?
   क. सहयोग ख. प्रेम ग. नियोजन घ. प्रोत्साहन
2. किस विद्वान के अनुसार समन्वय संगठन की विभिन्न क्रियाओं में एकरूपता लाता है?
   क. टेलर ख. मेयो ग. उर्विक घ. फेयोल
3. अपने कार्यों को दूसरे कर्मचारियों को सौंपना क्या कहलाता है?
   क. प्रोत्साहन ख. नियोजन ग. निर्णयन घ. प्रत्यायोजन
4. किस विद्वान के अनुसार प्रत्यायोजन एक क्रियात्मक संचालन शक्ति है?
   क. टेलर ख. उर्विक ग. मूरे घ. लुईस एवं ऐलन
5. जब प्रत्यायोजन उच्च अधिकारी से निम्न अधिकारी को होता है तो यह किस प्रकार का प्रत्यायोजन कहलाता है?
   क. अनौपचारिक ख. औपचारिक ग. मौखिक घ. उर्ध्वगामी
6. जब प्रत्यायोजन संगठन की अधिकार रेखा द्वारा रेखा द्वारा निर्धारित सीमाओ के आधार पर होता है तो यह किस प्रकार का प्रत्यायोजन कहलाता है?
   क. औपचारिक ख. अनौपचारिक ग. मौखिक घ. लिखित

13.4 सारांश

अभी तक के समस्त सिद्धान्तों को अभिप्राय केवल संगठन के कार्य को प्रभावी बनाना है। वर्तमान समाज ज्ञान आधारित समाज है, यहाँ संगठन में पारदर्शिता, जवाबदेही और कार्यकुशलता की अपेक्षा प्रत्येक नागरिक की होती है। वस्तुतः संगठन में समन्वय प्रत्यायोजन, पर्यवेक्षक, केन्द्रीकरण, तथा विकेन्द्रीकरण आदि ऐसे सिद्धान्त है जो संगठन को प्रभावी बनाने में सहयोग करते है। इस प्रकार एक संगठन और उसमें कार्यरत कर्मचारी ढंग से पूर्व निर्धारित उद्देश्यों को पूर्ण करने में सफलता प्राप्त करते हैं।

13.5 शब्दावली

नियोजन- किन कार्यों को कहाँ और कैसे करना है का पूर्व निर्णय।

अधिकार का प्रत्यायोजन- निर्धारित कार्यों के निष्पादन के लिए आवश्यक अधिकारों को अन्य व्यक्तियों को सौंपना।

समन्वय- व्यक्ति तथा समूह के प्रयासों में सामूहिक कार्यों तथा उद्देश्यों को पूरा करने के लिए सामंजस्य स्थापित करना।

विकेन्द्रीकरण- उपक्रम के नीचे के स्तरों पर निर्णय लेने की शक्ति को सौंपना।

अधिकार का दायित्व के साथ मेल- अधिकार कार्य निष्पादन करने का विवेकाधिकार है तथा दायित्व अधिकार प्राप्त करने वाले व्यक्ति का कार्य निष्पादन करने का दायित्व है, अतः यह तार्किक ढंग पर निष्कर्ष निकलता है कि कार्य करने का दायित्व हस्तांतरित अधिकार से अधिक नहीं होना चाहिए और न ही यह कम रहना चाहिए। यह सम रहना चाहिए।

केन्द्रीकरण- यह बिंदु अथवा स्तर जहाँ सभी निर्णय लेने वाले अधिकार केन्द्रित रहते हैं।

नियंत्रण- अधीनस्थों के कार्यों का मापन तथा सुधार जिससे यह आश्वस्त हो सके कि कार्य नियोजन के अनुसार किया गया है।

अधिकार- आदेश देने की शक्ति तथा यह निश्चित कर लेना कि इन आदेशों का पालन किया जा रहा है।

13.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1- क, 2- घ, 3- घ, 4- घ, 5- घ, 6- क,

13.7 सन्दर्भ ग्रन्थ-सूची

इकाई- 14 मुख्य कार्यपालिका

इकाई की संरचना

14.1 प्रस्तावना

14.2 उद्देश्य

14.3 अर्थ एवं परिभाषा

    14.3.1 कार्यपालिका के विभिन्न प्रकार

    14.3.2 मुख्य कार्यपालिका के अधिकार व कार्य

    14.3.3 मुख्य कार्यपालिका के प्रशासकीय कार्य

    14.3.4 सफल मुख्य कार्यपालिका के गुण

    14.3.5 कार्यपालिका में प्रशासनिक शक्तियों को निहित करने के लाभ

14.4 सारांश

14.5 शब्दावली

14.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

14.7 संदर्भ ग्रन्थ सूची

14.8 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री

14.9 निबंधात्मक प्रश्न

14.1 प्रस्तावना

मुख्य कार्यपालिका किसी भी संगठनात्मक ढांचे का केन्द्र बिन्दु होता है। मुख्य कार्यपालक संगठन के उद्देश्य, प्रक्रिया एवं नीतियों को पूर्णतया अपने सहयोगियों से विमर्श कर मूर्त रूप देता है। प्राचीन काल में राजतांत्रिक व्यवस्था में सम्राट या साम्राज्ञी के व्यक्तित्व किसी भी राज्य के दिशा एवं दशा को निर्धारित करते थे। वर्तमान में प्रजातांत्रिक परिवेश में राष्ट्रपति या प्रधानमंत्री, मुख्यमंत्री या गवर्नर, महापौर इत्यादि किसी भी संगठन के स्वरूप एवं विकास को तय करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। उनकी सफलता एवं असफलता लोगों के जीवन स्तर या अपेक्षाओं को काफी प्रभावित करते हैं। किसी भी राष्ट्र या संगठन की सफलता का रहस्य मुख्य कार्यपालिका के नीति एवं व्यवहारों पर निर्भर करेगा।

14.2 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के उपरान्त आप-

- मुख्य कार्यपालिका के अर्थ, अवधारणा एवं कार्यों को जान सकेंगे।
- कार्यपालिका के आकार-प्रकार, प्रक्रिया, एवं उनकी भूमिका के संबंध में जान पायेंगे।
- मुख्य कार्यपालिका के उद्देश्यों, अधिकारों के संबंध में जान पायेंगे।

14.3 अर्थ एवं परिभाषा

प्रत्येक देश के शासन के सर्वोच्च शिखर पर जो व्यक्ति अथवा व्यक्ति समूह विराजमान होता है, उसे मुख्य कार्यपालिका कहा जाता है। मुख्य कार्यपालक का स्थान पदसोपान और पिरामिड के सर्वोच्च नुकीले बिन्दु पर होता है। मुख्य कार्यपालक राज्य का राजनीतिक नेतृत्व करता हैं किसी भी देश की मुख्य कार्यपालिका का रूप वहां की संवैधानिक व्यवस्था के अनुरूप निर्धारित होता है। भारत में राष्ट्रपति, इंग्लैंड में सम्राट सम्राज्ञी, अमेरिका में राष्ट्रपति, और स्विटजटलैण्ड में संघीय परिषद प्रमुख कार्यपालिका होता है। राज्यों में राज्यापाल तथा महानगरों में महापौर वहां के मुख्य कार्यपालक होते हैं। इसी प्रकार व्यावसायिक संगठनों के मुख्य प्रशासक को महाप्रबन्धक कहा जाता है। मुख्य कार्यपालिका जिस प्रकार से राज्यों के संगठनों को संचालित, निर्देशित, पर्यवेक्षित एवं नियन्त्रित करता है, उसी प्रकार महाप्रबन्धक भी व्यावसायिक संगठनों में प्रबन्धमण्डल की नीतियों को कार्यान्वित नियन्त्रित एवं निर्देशित करता है। दोनों की स्थितियों की तुलना नीचे दिय गए चार्ट के द्वारा हम कर सकते हैं।

मुख्य कार्यपालक	महाप्रबन्धक
मतदाता	शेयरहोल्डर्स
विद्यायिका	निदेशक मण्डल
पर्यवेक्षण	पर्यवेक्षण
निर्देशन	निर्देशन
पदसोपान के शीर्ष पर	पदसोपान के शीर्ष पर

- मुख्य कार्यपालिका के उद्देश्यों, अधिकारों के संबंध में जान पायेंगे।

14.3 अर्थ एवं परिभाषा

प्रत्येक देश के शासन के सर्वोच्च शिखर पर जो व्यक्ति अथवा व्यक्ति समूह विराजमान होता है, उसे मुख्य कार्यपालिका कहा जाता है। मुख्य कार्यपालक का स्थान पदसोपान और पिरामिड के सर्वोच्च नुकीले बिन्दु पर होता है। मुख्य कार्यपालक राज्य का राजनीतिक नेतृत्व करता हैं किसी भी देश की मुख्य कार्यपालिका का रूप वहां की संवैधानिक व्यवस्था के अनुरूप निर्धारित होता है। भारत में राष्ट्रपति, इंग्लैंड में सम्राट सम्राज्ञी, अमेरिका में राष्ट्रपति, और स्विटजरलैण्ड में संघीय परिषद प्रमुख कार्यपालिका होता है। राज्यों में राज्यापाल तथा महानगरों में महापौर वहां के मुख्य कार्यपालक होते हैं। इसी प्रकार व्यावसायिक संगठनों के मुख्य प्रशासक को महाप्रबन्धक कहा जाता है। मुख्य कार्यपालिका जिस प्रकार से राज्यों के संगठनों को संचालित, निर्देशित, पर्यवेक्षित एवं नियन्त्रित करता है, उसी प्रकार महाप्रबन्धक भी व्यावसायिक संगठनों में प्रबन्धमण्डल की नीतियों को कार्यान्वित नियन्त्रित एवं निर्देशित करता है। दोनों की स्थितियों की तुलना नीचे दिय गए चार्ट के द्वारा हम कर सकते हैं।

मुख्य कार्यपालक	महाप्रबन्धक
मतदाता	शेयरहोल्डर्स
विद्यायिका	निदेशक मण्डल
पर्यवेक्षण	पर्यवेक्षण
निर्देशन	निर्देशन
पदसोपान के शीर्ष पर	पदसोपान के शीर्ष पर

मुख्य कार्यपालक का कार्य सरकारी या निजी संस्थाओं में कार्य समान प्रतीत होता है। अन्तर दोनों के लक्ष्यों एवं प्रक्रियाओं ने भिन्नता की वजह से दिखाई देता है। मुख्य कार्यपालक के लिए जो महत्त्व मतदाताओं का है वहीं महत्त्व महाप्रबन्धक के लिए शेयरहोल्डर्स का है। सरकारी परिप्रेक्ष्य में मुख्य कार्यपालक विधयिका द्वारा पारित नीतियों को लागू करता है, वहीं महाप्रबन्धक निर्देशक मण्डल द्वारा आदेशित नीतियों को क्रियान्वित करता है। POSDCORB का सिद्धान्त भी दोनों पर समान रूप से लागू होता है। हम यह भी देखते हैं की पर्यवेक्षण, निर्देशन और नियन्त्रण की प्रक्रिया भी काफी समान है।

कई कार्य मुख्य कार्यपालिका और महाप्रबन्धक के एक जैसे ही हैं, जो की नीचे इंगित हैं।

1. किसी भी प्रशासकीय संगठन के सम्पूर्ण कार्यों में सामंजस्य तथा समन्वय करना मुख्य कार्यपालिका का महत्वपूर्ण कार्य होता है। उसी प्रकार व्यावसायिक संगठनों के समस्त कार्यों और उपविभागों में समन्वय स्थापित करने का दायित्व महाप्रबन्धक का होता है।
2. आवश्यक आदेश, निर्देश और आज्ञायें मुख्य निष्पादक और महाप्रबन्धक दोनों ही के द्वारा जारी की जाती हैं।

3. योजना, संगठन निर्माण, नियन्त्रण, निर्देशन और पर्यवेक्षण जैसे महत्वपूर्ण कार्य तो मुख्य कार्यपालिका और महाप्रबन्धक दोनों के लिए ही आवश्यक होते हैं।
4. महाप्रबन्धक और मुख्य कार्यपालक दोनों ही पदसोपान के शीर्ष पर होते हैं। इनके ऊपर कोई नहीं होता।

14.3.1 कार्यपालिका के विभिन्न प्रकार

किसी भी देश की मुख्य कार्यपालिका वहाँ के संवैधानिक इतिहास सामाजिक व्यवस्था, दलीय व्यवस्था एवं आर्थिक आधारों पर निर्भर करती है। कार्यपालिका के मुख्य प्रकार निम्नलिखित हैं-

1. राजनीतिक और स्थायी कार्यपालिका,
2. नाममात्र की एवं वास्तविक कार्यपालिका,
3. एकल एवं बहुल कार्यपालिका,
4. वंशानुगत एवं निर्वाचित कार्यपालिका, और
5. संसदात्मक और अध्यक्षयात्मक कार्यपालिका।

भारत में राजनीतिक और स्थायी कार्यपालिका दृष्टिगोचर होता है। राजनीतिक कार्यपालिका का सम्बन्ध नीतिनिर्धारण और निर्देशन से होता है। भारत में प्रधानमत्री और मन्त्रिमण्डल राजनीतिक कार्यपालिका हैं, जबकि स्थाई कार्यपालिका में वे हैं जो सिविल सेवा तथा अधीनस्थ भर्ती से आते हैं। इन्हें अस्थाई और स्थाई कार्यपालिका भी कहा जाता है। राजनैतिक कार्यपालिका का कार्यकाल मतदाता, चुनावों द्वारा निश्चित करते हैं। उनका कार्यकाल निश्चित नहीं है। वहीं पर स्थाई कार्यपालिका के सदस्यों का चयन निश्चित कार्यकाल के लिए होता है। उन्हें हटाने की प्रक्रिया जटिल होती है।

कार्यों और उपविभागों में समन्वय स्थापित करने का दायित्व महाप्रबन्धक का होता है।

2. आवश्यक आदेश, निर्देश और आज्ञायें मुख्य निष्पादक और महाप्रबन्धक दोनों ही के द्वारा जारी की जाती हैं।

3. योजना, संगठन निर्माण, नियन्त्रण, निर्देशन और पर्यवेक्षण जैसे महत्वपूर्ण कार्य तो मुख्य कार्यपालिका और महाप्रबन्धक दोनों के लिए ही आवश्यक होते हैं।
4. महाप्रबन्धक और मुख्य कार्यपालक दोनों ही पदसोपान के शीर्ष पर होते हैं। इनके ऊपर कोई नहीं होता।

14.3.1 कार्यपालिका के विभिन्न प्रकार

किसी भी देश की मुख्य कार्यपालिका वहाँ के संवैधानिक इतिहास सामाजिक व्यवस्था, दलीय व्यवस्था एवं आर्थिक आधारों पर निर्भर करती है। कार्यपालिका के मुख्य प्रकार निम्नलिखित हैं-

1. राजनीतिक और स्थायी कार्यपालिका,
2. नाममात्र की एवं वास्तविक कार्यपालिका,
3. एकल एवं बहुल कार्यपालिका,
4. वंशानुगत एवं निर्वाचित कार्यपालिका, और
5. संसदात्मक और अध्यक्षयात्मक कार्यपालिका।

भारत में राजनीतिक और स्थायी कार्यपालिका दृष्टिगोचर होता है। राजनीतिक कार्यपालिका का सम्बन्ध नीतिनिर्धारण और निर्देशन से होता है। भारत में प्रधानमन्त्री और मन्त्रिमण्डल राजनीतिक कार्यपालिका हैं, जबकि स्थाई कार्यपालिका में वे हैं जो सिविल सेवा तथा अधीनस्थ भर्ती से आते हैं। इन्हें अस्थाई और स्थाई कार्यपालिका भी कहा जाता है। राजनैतिक कार्यपालिका का कार्यकाल मतदाता, चुनावों द्वारा निश्चित करते हैं। उनका कार्यकाल निश्चित नहीं है। वहीं पर स्थाई कार्यपालिका के सदस्यों का चयन निश्चित कार्यकाल के लिए होता है। उन्हें हटाने की प्रक्रिया जटिल होती है।

यदि कार्यपालिका की समस्त शक्ति एक ही व्यक्ति के हाथ में अंतिम रूप से आ जाती है, तो उसे एकल कार्यपालिका कहते हैं। वहीं इसके विपरीत जब ये शक्तियाँ कुछ लोगों की समिति में निहित की जाती है तो उसे बहुल कार्यपालिका कहते हैं।

प्राचीन एथेन्स और स्पार्टा में बहुल कार्यपालिका थी, वर्तमान में स्विट्जरलैण्ड में इसका रूप देखने को मिलता है। अमेरिका का राष्ट्रपति सर्वोपरि रहता है। स्विजटलैंड में कार्यपालिका की सत्ता सदस्यों में निहितार्थ रहती है। इस परिषद का ही एक सदस्य वरिष्ठता के क्रम से एक साल के लिए अध्यक्ष की भूमिका निभाता है। कुछ लोगों का मत है कि इंगलैण्ड व भारत के संसदीय शासनों की कार्यपालिका भी एकल कार्यपालिका के उदाहरण हैं। यद्यपि इन देशों में कार्यपालिका शक्ति मन्त्रिमण्डल के हाथों में होती है, जो बहुत सारे व्यक्तियों की संस्था है। किन्तु यह मन्त्रिपरिषद सामूहिक उत्तर दायित्व के सिद्धान्त के आधार पर एक ईकाई की भाँति कार्य करती है और मन्त्रिपरिषद का प्रधान मन्त्रिमण्डल का अध्यक्ष तथा प्रभावशाली नियन्त्रणकर्ता होता है। अतः प्रधानमंत्री को कार्यपालिका का वास्तविक प्रधान कहा जा सकता है।

राजतन्त्रीय व्यवस्था में प्रायः ऐसी कार्यपालिका पाई जाती थी जो वंश-परंपरा के आधार पर गद्दी प्राप्त करते थे, उन्हें वंशानुगत कार्यपालिका कहा जाता है। जिस कार्यपालिका को प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष ढंग से निर्वाचन द्वारा चुना जाय, वह निर्वाचित कार्यपालिका है। ब्रिटेन की सम्राज्ञी या

सम्राट वंशानुगत कार्यपालक है, जबकि अमेरिका और भारत का राष्ट्रपति निर्वाचित कार्यपालिका है।

नाममात्र की कार्यपालिका का अर्थ उस पदाधिकारी से होता है, जिसे संविधान के द्वारा समस्त प्रशासनिक शक्ति प्रदान की गयी हो लेकिन जिसके द्वारा व्यवहार में इस प्रशासनिक शक्ति का प्रयोग अपने विवेक के अनुसार न किया जा सके। प्रशासन का सम्पूर्ण कार्य उसके नाम पर होता है, परन्तु व्यवहार में इन कार्यों को वास्तविक तौर पर वास्तविक कार्यपालिका द्वारा किया जाता है। भारत का राष्ट्रपति और इंगलैण्ड का सम्राट नाममात्र की कार्यपालिका के उदाहरण है। इंगलैण्ड और भारत की मन्त्रिपरिषद इस प्रकार की वास्तविक कार्यपालिका के उदाहरण है।।

संसदात्मक और अध्याक्षात्मक कार्यपालिका वर्तमान में सबसे लोकप्रिय और व्यावहारिक दृष्टि से कामयाब संगठन के उदाहरण हैं।

संसदीय कार्यपालिका को उत्तरदायी कार्यपालिका कहा गया है, क्योंकि इसमें उसे अपने समस्त कार्यकलापों के लिए वह विधायिका के प्रति जवाबदेह होती है। संसदीय शासन प्रणाली में संसदीय सर्वोच्चता के सिद्धान्त का अनुसंरण किया जाता है। व्यवस्थापिका, कार्यपालिका एवं न्यायपालिका प्रथक्करण के साथ-साथ समन्वयन के सिद्धांत का अनुपालन करते हैं। संसदीय व्यवस्था में राष्ट्रपति या सम्राट संवैधानिक और संवैधानिक रूप से पूर्ण शक्ति-सम्पन्न होता है। लेकिन प्रायः राष्ट्रपति इन शक्तियों का प्रयोग नहीं कर पाता। संसदीय शासन व्यवस्था के अन्तर्गत व्यवस्थापिका और

सम्राट वंशानुगत कार्यपालक है, जबकि अमेरिका और भारत का राष्ट्रपति निर्वाचित कार्यपालिका है।

नाममात्र की कार्यपालिका का अर्थ उस पदाधिकारी से होता है, जिसे संविधान के द्वारा समस्त प्रशासनिक शक्ति प्रदान की गयी हो लेकिन जिसके द्वारा व्यवहार में इस प्रशासनिक शक्ति का प्रयोग अपने विवेक के अनुसार न किया जा सके। प्रशासन का सम्पूर्ण कार्य उसके नाम पर होता है, परन्तु व्यवहार में इन कार्यों को वास्तविक तौर पर वास्तविक कार्यपालिका द्वारा किया जाता है। भारत का राष्ट्रपति और इंगलैण्ड का सम्राट नाममात्र की कार्यपालिका के उदाहरण है। इंगलैण्ड और भारत की मन्त्रिपरिषद इस प्रकार की वास्तविक कार्यपालिका के उदाहरण है।।

संसदात्मक और अध्याक्षात्मक कार्यपालिका वर्तमान में सबसे लोकप्रिय और व्यावहारिक दृष्टि से कामयाब संगठन के उदाहरण हैं।

संसदीय कार्यपालिका को उत्तरदायी कार्यपालिका कहा गया है, क्योंकि इसमें उसे अपने समस्त कार्यकलापों के लिए वह विधायिका के प्रति जवाबदेह होती है। संसदीय शासन प्रणाली में संसदीय सर्वोच्चता के सिद्धान्त का अनुसंरण किया जाता है। व्यवस्थापिका, कार्यपालिका एवं न्यायपालिका प्रथक्करण के साथ-साथ समन्वयन के सिद्धांत का अनुपालन करते हैं। संसदीय व्यवस्था में राष्ट्रपति या सम्राट संवैधानिक और संवैधानिक रूप से पूर्ण शक्ति-सम्पन्न होता है। लेकिन प्रायः राष्ट्रपति इन शक्तियों का प्रयोग नहीं कर पाता। संसदीय शासन व्यवस्था के अन्तर्गत व्यवस्थापिका और कार्यपालिका में कार्य घनिष्ठ सम्बन्ध होता है। मन्त्रिमण्डल के सदस्यों की नियुक्ति व्यवस्थापिका के सदस्यों में से ही अनिवार्य रूप से की जाती है। अगर प्रधानमंत्री या कोई मंत्री विधायिका का सदस्य नहीं है, तो उसे एक समय-सीमा के अन्दर इसकी सदस्यता ग्रहण कर के आना पड़ता है। कार्यपालिका अपने कार्यों व नीतियों के लिए व्यवस्थापिका के प्रति उत्तरदायी होती है। अध्यक्षात्मक कार्यपालिका, इस शासन व्यवस्था में व्यवस्थापिका, कार्यपालिका और न्यायपालिका एक-दूसरे से स्वतन्त्र यह कर कार्य करते हैं। सबकी शक्तियाँ अपने क्षेत्र में पहले से निर्धारित रहती है। मुख्य कार्यपालक इंगित विषयों में विधायिका के प्रति उत्तरदायी नहीं होता है। राष्ट्रपति अपने मंत्रिमंडल में जिसे चाहे उसे शामिल कर सकता है, क्योंकि मंत्रीपरिषद के सदस्यों को विधायिका का सदस्य होने की आवश्यकता नहीं है। इस व्यवस्था में व्यवस्थापिका का कार्यपालिका के ऊपर प्रत्यक्ष नियंत्रण नहीं होता है और न ही कार्यपालिका को अपने कार्यकाल के सम्बन्ध में व्यवस्थापिका से यह भय रहता है कि वह अविश्वास प्रस्ताव के द्वारा अपदस्थ कर देगी। संसदात्मक व्यवस्था में मंत्रिमंडल के सदस्य प्रधानमंत्री के सहयोगी के रूप में कार्य करते हैं, जबकि अध्यक्षात्मक प्रणाली में वे राष्ट्रपति के रहमोकरम पर रहते हैं। दोनों प्रणालियों की प्रासंगिकता देश की एतिहासिक पृष्ठभूमि एवं उद्देश्यों पर आधारित रहती है। अध्यक्षात्मक व्यवस्था के लिए जागरूक नागरिकों का होना अत्यन्त आवश्यक है क्योंकि राष्ट्रपति के तानाशाही प्रवृत्तियों पर वे एक लगाम का काम करते हैं। विकासशील एवं बहुजातीय राष्ट्रों के लिए संसदात्मक व्यवस्था उचित है क्योंकि

सभी की सहभागिता सुनिश्चित की जा सकती है। मंत्रीमंडल पर विधायिका अंकुश लगाती है जिससे तानाशाही प्रवृत्तियों पर लगाम लगाई जा सकती है।

14.3.2 मुख्य कार्यपालिका के अधिकार व कार्य

वर्तमान संगठनात्मक ढाँचे में मुख्य कार्यपालिका, नीतियों के गठन से लेकर निष्पादन में एक केन्द्र बिन्दु की भूमिका निभाता है। मुख्य कार्यपालक देश की शासन-व्यवस्था के लिए अन्तिम रूप से उत्तरदायी होता है। उसे असंख्य जिम्मेदारियों का पालन करना पड़ता है। मुख्यतः उसके कामों की प्रकृति के आधार पर दो भागों में विभाजित किया जा सकता है- पहला, राजनीतिक प्रकृति के कार्य और दूसरा- प्रशासनिक प्रकृति के कार्य

मुख्य कार्यपालिका को अपने अस्तित्व को कायम रखने के लिए सर्वप्रथम राजनीतिक कार्यों की तरफ ध्यान देना पड़ता है। जनादेश के बिना मुख्य कार्यपालक का रहना नामुमकिन है, इसलिए उसे राजनैतिक संगठन की प्रक्रिया एवं उद्देश्यों को निरंतर ध्यान में रखना पड़ता है।

राजनैतिक संगठन एवं पार्टी की प्राथमिकताएँ को उसे वरीयता देना पड़ता है, क्योंकि इसी से उसे प्रशासकीय प्राथमिकताओं को चयनित करना पड़ता है। मुख्य कार्यपालिका को उस राजनीतिक दल की मजबूती के बारे में भी सोचना पड़ता है, जिस दल के बहुमत और नेतृत्व के आधार पर वह मुख्य कार्यपालिका की भूमिका का निर्वाह करता है। उसे शासन की नीतियों एवं कार्यक्रमों के लिए विभिन्न राजनैतिक दलों से सम्पर्क कर उनका विचार जानना तथा समर्थन लेना पड़ता है। देश की जनता को सरकार के प्रमुख कार्यक्रमों के बारे में बताना, राष्ट्र को सफल नेतृत्व प्रदान करना, अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति में प्रभाव स्थापित करना आदि मुख्य कार्यपालिका के राजनीतिक कार्य कहे जाते है। उसे जनता की आवश्यकताओं के अनुरूप लोकसम्पर्क भी स्थापित करना पड़ता है। राजनीतिक दृष्टि से मुख्य कार्यपालक को जनता के राजनैतिक चेतना एवं राजनैतिक शैक्षिकीकरण का उत्तरदायित्व भी होता है। अन्तर्राष्ट्रीय पटल पर राष्ट्र की साख को स्थापित करने का दायित्व भी

नागरिकों का होना अत्यन्त आवश्यक है क्योंकि राष्ट्रपति के तानाशाही प्रवृत्तियों पर वे एक लगाम का काम करते हैं। विकासशील एवं बहुजातीय राष्ट्रों के लिए संसदात्मक व्यवस्था उचित है क्योंकि

174

सभी की सहभागिता सुनिश्चित की जा सकती है। मंत्रीमंडल पर विधायिका अंकुश लगाती है जिससे तानाशाही प्रवृत्तियों पर लगाम लगाई जा सकती है।

14.3.2 मुख्य कार्यपालिका के अधिकार व कार्य

वर्तमान संगठनात्मक ढाँचे में मुख्य कार्यपालिका, नीतियों के गठन से लेकर निष्पादन में एक केन्द्र बिन्दु की भूमिका निभाता है। मुख्य कार्यपालक देश की शासन-व्यवस्था के लिए अन्तिम रूप से उत्तरदायी होता है। उसे असंख्य जिम्मेदारियों का पालन करना पड़ता है। मुख्यतः उसके कामों की प्रकृति के आधार पर दो भागों में विभाजित किया जा सकता है- पहला, राजनीतिक प्रकृति के कार्य और दूसरा- प्रशासनिक प्रकृति के कार्य

मुख्य कार्यपालिका को अपने अस्तित्व को कायम रखने के लिए सर्वप्रथम राजनीतिक कार्यों की तरफ ध्यान देना पड़ता है। जनादेश के बिना मुख्य कार्यपालक का रहना नामुमकिन है, इसलिए उसे राजनैतिक संगठन की प्रक्रिया एवं उद्देश्यों को निरंतर ध्यान में रखना पड़ता है।

राजनैतिक संगठन एवं पार्टी की प्राथमिकताएँ को उसे वरीयता देना पड़ता है, क्योंकि इसी से उसे प्रशासकीय प्राथमिकताओं को चयनित करना पड़ता है। मुख्य कार्यपालिका को उस राजनीतिक दल की मजबूती के बारे में भी सोचना पड़ता है, जिस दल के बहुमत और नेतृत्व के आधार पर वह मुख्य कार्यपालिका की भूमिका का निर्वाह करता है। उसे शासन की नीतियों एवं कार्यक्रमों के लिए विभिन्न राजनैतिक दलों से सम्पर्क कर उनका विचार जानना तथा समर्थन लेना पड़ता है। देश की जनता को सरकार के प्रमुख कार्यक्रमों के बारे में बताना, राष्ट्र को सफल नेतृत्व प्रदान करना, अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति में प्रभाव स्थापित करना आदि मुख्य कार्यपालिका के राजनीतिक कार्य कहे जाते है। उसे जनता की आवश्यकताओं के अनुरूप लोकसम्पर्क भी स्थापित करना पड़ता है। राजनीतिक दृष्टि से मुख्य कार्यपालक को जनता के राजनैतिक चेतना एवं राजनैतिक शैक्षिकीकरण का उत्तरदायित्व भी होता है। अन्तर्राष्ट्रीय पटल पर राष्ट्र की साख को स्थापित करने का दायित्व भी इसी पर रहता है।

14.3.3 मुख्य कार्यपालिका के प्रशासकीय कार्य

मुख्य कार्यपालिका देश का शीर्षतम अधिकारी होता है। देश के सम्पूर्ण प्रशासन का रखरखाव एवं जिम्मेदारी उसकी होती है। लूथर गुलिक के अनुसार मुख्य कार्यपालक के निम्नांकित कार्य है।

1. **योजना बनाना-** इसका मतलब है की उन सभी कार्यों की रूपरेखा तैयार करना, जिससे किया जाना आवश्यक है। योजना सफल क्रियान्वन की कुंजी है।
2. **संगठन बनाना-** इसका अर्थ है, उद्देश्यों की कार्यपूर्ति के लिए के लिए मानवीय एवं भौतिक ढाँचे का निर्माण।
3. **कर्मचारी रखना-** इसके अन्तर्गत कर्मचारी की नियुक्ति, प्रशिक्षण, पदोन्नति, तथा वह सेवा शर्तें शामिल है, जिसके आधार पर कर्मचारी कार्य कर सकें।
4. **निर्देशन देना-** इसका अर्थ है अंगठन का नेतृत्व करना तथा प्रशासन सम्बन्धी निर्णय लेकर आदेश और निर्देश जारी करना है।

175

5. **समन्वय करना-** इसका तात्पर्य है कि प्रशासन के विभिन्न क्षेत्रों को परस्पर सम्बद्ध करना और उसमें सामंजस्य स्थापित करना है।
6. **प्रतिवेदन देना-** इसका अर्थ है कि जिन लोगों के प्रति कार्यपालिका उत्तरदायी है, इनको अपने कार्यों और परिस्थितियों के सन्दर्भ में समय-समय पर अवगत कराते रहना।
7. **बजट बनाना-** इसमें शामिल है, वितीय योजनाएँ एवं आय-व्यय का लेखा-जोखा।

लूथर गुलिक द्वारा बताये गए कार्य अपने आप में सम्पूर्ण और तर्कसंगत नहीं है, अपितु वर्तमान परिदृष्य में मुख्य कार्यपालिका अनेकों दूसरे कार्य को भी सम्पादित करती है, जो निम्नलिखित हैं-

1. **प्रशासकीय नीति का निर्धारण करना-** मुख्य कार्यपालक का प्रशासकीय नीति-निर्धारण में मुख्य भूमिका रहती है। मुख्य कार्यपालक जनता के मध्य अपनी कार्ययोजनाओं का मसौदा देता है, जिस पर उसे जनादेश प्राप्त होता है। व्यवस्थापिका में मसौदों की रूपरेखा का जिन्मा मुख्यतौर पर मुख्य कार्यपालक का होता है। डिमॉक का कहना है की अमेरिका के सन्दर्भ में "नीति से सम्बन्धित सभी विषयों में राष्ट्रपति ही प्राथमिकता निर्धारित करता है।"
2. **प्रशासकीय कार्य का नियोजन-** प्रशासकीय योजनाओं को बनाने में अंतिम अधिकार मुख्य कार्यपालक का होता है। मुख्य कार्यपालक के इच्छा अनुसार सभी योजनाओं का बारीकी से अध्ययन किया जाता है। परामर्श के तौर पर विशेषज्ञों की सेवाओं को योजनाओं को बनाने में लिया जाता है। भारत में स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात नेहरू की छाप सभी

5. **समन्वय करना-** इसका तात्पर्य है कि प्रशासन के विभिन्न क्षेत्रों को परस्पर सम्बद्ध करना और उसमें सामंजस्य स्थापित करना है।
6. **प्रतिवेदन देना-** इसका अर्थ है कि जिन लोगों के प्रति कार्यपालिका उत्तरदायी है, इनको अपने कार्यों और परिस्थितियों के सन्दर्भ में समय-समय पर अवगत कराते रहना।
7. **बजट बनाना-** इसमें शामिल है, वितीय योजनाएँ एवं आय-व्यय का लेखा-जोखा।

लूथर गुलिक द्वारा बताये गए कार्य अपने आप में सम्पूर्ण और तर्कसंगत नहीं है, अपितु वर्तमान परिदृष्य में मुख्य कार्यपालिका अनेकों दूसरे कार्य को भी सम्पादित करती है, जो निम्नलिखित हैं-

1. **प्रशासकीय नीति का निर्धारण करना-** मुख्य कार्यपालक का प्रशासकीय नीति-निर्धारण में मुख्य भूमिका रहती है। मुख्य कार्यपालक जनता के मध्य अपनी कार्ययोजनाओं का मसौदा देता है, जिस पर उसे जनादेश प्राप्त होता है। व्यवस्थापिका में मसौदों की रूपरेखा का जिन्मा मुख्यतौर पर मुख्य कार्यपालक का होता है। डिमॉक का कहना है की अमेरिका के सन्दर्भ में "नीति से सम्बन्धित सभी विषयों में राष्ट्रपति ही प्राथमिकता निर्धारित करता है।"
2. **प्रशासकीय कार्य का नियोजन-** प्रशासकीय योजनाओं को बनाने में अंतिम अधिकार मुख्य कार्यपालक का होता है। मुख्य कार्यपालक के इच्छा अनुसार सभी योजनाओं का बारीकी से अध्ययन किया जाता है। परार्मश के तौर पर विशेषज्ञों की सेवाओं को योजनाओं को बनाने में लिया जाता है। भारत में स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात नेहरू की छाप सभी योजनाओं को बनाने में दिखाई देता है। मिश्रित अर्थव्यवस्था की बात हो या भारी उद्योगों की उनकी दृष्टि की छाप सभी योजनाओं के बनाने में प्रतिबिंबित होती है। प्रस्तावित कार्य को कैसे किया जायेगा, उसे पूरा करने के लिए किस प्रकार के संगठन की आवश्यकता पड़ेगी, कितना व्यय लगेगा, कितने कार्मिकों की आवश्यकता होगी, यह सारी चीजें मुख्य कार्यपालक तय करता है।
3. **संगठन की संरचना को प्राधिकार प्रदान करना-** संगठन के सभी सत्रों एवं भागों की संरचनाओं को प्राधिकार प्रदान किया जाता है, ताकि प्राप्त शक्तियों और सत्ता के आधार पर वे संरचनाओं अपने कर्त्तव्यों एवं अधिकारों का उपयोग कर सकें। सत्ता में प्राधिकार को प्रदत करना, कार्मिकों के अधिकार, क्षेत्र को तय करना, मुख्य कार्यपालक की जिम्मेदारी होती है। किसी भी संगठन की सफलता उसमें वैज्ञानिक प्रबन्धीकरण पर होती है, जिसे मूर्तरूप देने का उत्तरदायित्व मुख्य कार्यपालक का है।
4. **कार्मिकों की नियुक्ति एवं पदच्युत-** मुख्य कार्यपालक को शासन को उच्चपदाधिकारियों की नियुक्ति करने का अधिकार रहता है। भारत में राष्ट्रपति, राज्यापाल उच्चतम न्यायपाल के न्यायधीशों, राजदूतों, संघ लोक सेवा आयोग के सदस्यों, इत्यादि को नियुक्ति करने का अधिकार मुख्यकार्यपालक का है। इन पदाधिकारियों को पदच्युत करने का अधिकार भी

मुख्य प्रशासक का है। लेकिन हटाने का अधिकार, संविधान की सीमाओं में रहकर ही किया जा सकता है।

5. **संगठन में समन्वय स्थापित करना-** प्रशासन के अन्तर्गत अनेक विभाग, उपविभाग, एवं अभिकरण कार्य करते हैं। इनके मध्य अधिकार एवं कार्यक्षेत्र को लेकर अक्सर आपस में मतभेद उत्पन्न होते हैं। इन मतभेदों को दूर कर कार्यों को आगे बढ़ाने की जिम्मेदारी मुख्य कार्यपालक पर है। किसी भी कार्ययोजना के सफलता के लिए आपसी तालमेल एवं समन्वय एक जरूरी आधार है। इसके बिना लक्ष्य प्राप्ति में विलम्ब एवं व्यय सरकार को कटघरे में खड़ा कर सकती है। इन सभी विषम परिस्थितियों से उबारने का दायित्व मुख्य कार्यपालक का है।
6. **आदेश एवं निर्देश देना-** मुख्य कार्यपालक का एक प्रमुख उत्तरदायित्व है, संगठनों एवं विभागों को समय-समय पर आदेश एवं निर्देश जारी करना। विभिन्न विभागों के पदाधिकारियों को उनके जिम्मेदारियों एवं कर्त्तव्यों का बोध कराना, एवं उनके कार्यों की आख्या लेना मुख्य, कार्यपालक के अधीन किया जाता है। स्थितियों में सुधार न आने पर वह समुचित फेरबदल करने का अधिकार रखता है।
7. **प्रशासन पर नियन्त्रण एवं निरीक्षण करना-** प्रशासन के विभिन्न विभागों के कार्यकलापों की जानकारी मुख्य कार्यपालिका को बराबर प्रतिवेदनों और अन्य माध्यमों से प्राप्त होती है। कार्यों के सम्पादन में कहाँ असावधानी बरती जा रही है, कहाँ पर निर्धारित नियमों की अवहेलना की जा रही है, इन सभी बातों के लिए मुख्य कार्यपालक निरंतर निरीक्षण एवं पर्यवेक्षण करता रहता है। भ्रष्टाचार के मामले उजागर होने पर वह कार्यवाही कर सकता है। विभिन्न जाँच आयोगों का गठन, न्यायिक जाँच इसके ईशारे पर होती है। हाल ही में आदर्श घोटाला एवं स्पेक्ट्रम घोटाले की जाँच मुख्य कार्यपालक मनमोहन सिंह द्वारा आदेशित की गई एवं सम्बद्ध विभाग के मन्त्रियों को अपने पद से हटना पड़ा।
8. **वित्तीय अधिकार-** किसी भी प्रशासन की क्रियाओं का आधार वित्त है। वित्त की व्यवस्था करना, आय-व्यय की रूप रेखा तैयार करना, बजट को व्यवस्थापिका के समक्ष

मुख्य प्रशासक का है। लेकिन हटाने का अधिकार, संविधान की सीमाओं में रहकर ही किया जा सकता है।

5. **संगठन में समन्वय स्थापित करना-** प्रशासन के अन्तर्गत अनेक विभाग, उपविभाग, एवं अभिकरण कार्य करते हैं। इनके मध्य अधिकार एवं कार्यक्षेत्र को लेकर अक्सर आपस में मतभेद उत्पन्न होते हैं। इन मतभेदों को दूर कर कार्यों को आगे बढ़ाने की जिम्मेदारी मुख्य कार्यपालक पर है। किसी भी कार्ययोजना के सफलता के लिए आपसी तालमेल एवं समन्वय एक जरूरी आधार है। इसके बिना लक्ष्य प्राप्ति में विलम्ब एवं व्यय सरकार को कटघरे में खड़ा कर सकती है। इन सभी विषम परिस्थितियों से उबारने का दायित्व मुख्य कार्यपालक का है।
6. **आदेश एवं निर्देश देना-** मुख्य कार्यपालक का एक प्रमुख उत्तरदायित्व है, संगठनों एवं विभागों को समय-समय पर आदेश एवं निर्देश जारी करना। विभिन्न विभागों के पदाधिकारियों को उनके जिम्मेदारियों एवं कर्त्तव्यों का बोध कराना, एवं उनके कार्यों की आख्या लेना मुख्य, कार्यपालक के अधीन किया जाता है। स्थितियों में सुधार न आने पर वह समुचित फेरबदल करने का अधिकार रखता है।
7. **प्रशासन पर नियन्त्रण एवं निरीक्षण करना-** प्रशासन के विभिन्न विभागों के कार्यकलापों की जानकारी मुख्य कार्यपालिका को बराबर प्रतिवेदनों और अन्य माध्यमों से प्राप्त होती है। कार्यों के सम्पादन में कहाँ असावधानी बरती जा रही है, कहाँ पर निर्धारित नियमों की अवहेलना की जा रही है, इन सभी बातों के लिए मुख्य कार्यपालक निरंतर निरीक्षण एवं पर्यवेक्षण करता रहता है। भ्रष्टाचार के मामले उजागर होने पर वह कार्यवाही कर सकता है। विभिन्न जाँच आयोगों का गठन, न्यायिक जाँच इसके ईशारे पर होती है। हाल ही में आदर्श घोटाला एवं स्पेक्ट्रम घोटाले की जाँच मुख्य कार्यपालक मनमोहन सिंह द्वारा आदेशित की गई एवं सम्बद्ध विभाग के मन्त्रियों को अपने पद से हटना पड़ा।
8. **वित्तीय अधिकार-** किसी भी प्रशासन की क्रियाओं का आधार वित्त है। वित्त की व्यवस्था करना, आय-व्यय की रूप रेखा तैयार करना, बजट को व्यवस्थापिका के सम्मुख प्रस्तुत करना, राजस्व की इकाइयों को निश्चित करना, अंतर्राष्ट्रीय वित्त संस्थाएं जैसे- अंतर्राट्रीय मुद्राकोष, विश्व बैंक एवं विश्व व्यापार संगठन, के साथ वित्त नीतियों को निर्धारित करना, राष्ट्रीय बैंक की योजनाओं, इत्यादि को नियंत्रित करने का अधिकार है।
9. **जन-सम्पर्क स्थापित करना-** वर्तमान जगत में राष्ट्रों का स्वरूप प्रजातान्त्रिक है। इसकी वजह से तमाम राष्ट्रों का नियोजन जन कल्याणकारी है। शासन को अपनी नीतियों को हमें जनता को केन्द्रित कर बनानी होती है। अपेक्षित जनसहयोग प्राप्त करने के लिए सरकार को जनइच्छा के तहत नीतियाँ बनानी होती हैं, जिससे सरकार लोकप्रिय हो। इन सब कोशिशों का उत्तरदायित्व मुख्य कार्यपालिका का होता है।

10. **विपदाओं में अविलम्ब हस्तक्षेप करना-** यह मुख्य कार्यपालिका का कार्य है कि देश के समक्ष अगर किसी भी प्रकार की प्राकृतिक या मानवीय विपदा आती है, तो वो पूरे प्रशासकीय तन्त्र को क्रियाशील करके लोगों को आपदों में सहयोग दें। अगर कहीं भुकंप, बाढ़, सूखा, या अन्य विपदाऐं आती हैं तो मुख्य कार्यपालिका सम्बन्ध विभाग को तत्काल सेवाओं को पहुँचाने के लिए निर्देशित कर सकता है। इसी तरह वाह्य आक्रमण के तहत वह अध्यादेश जारी कर सकता है, जिससे की विपत्ति का सामना प्रभावशाली पूर्वक किया जा सके।

14.3.4 सफल मुख्य कार्यपालिका के गुण

मुख्य कार्यपालक का कद एवं व्यक्तित्त्व किसी भी राष्ट्र के भविष्य को तय करता है। अमेरिका के राष्ट्रपति जार्ज वाशिंगटन एवं रूसवेल्ट ने जहाँ अमेरिका को विश्वशक्ति बनने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई, वहीं स्टेलिन ने रूस को एक कृषि प्रधान, देश से परिवर्तित कर एक विश्वशक्ति के रूप में उभारने में बहुत कम समय लिया। अगर हम जर्मनी के इतिहास का अध्ययन करें तो ज्ञात होगा की अगर हिंटलर नहीं आता तो शायद जर्मनी भी एक विश्वशक्ति के रूप में उभरता। प्रशासनिक सफलता और असफलता मुख्य प्रशासक की व्यक्तिगत क्षमता, कार्यकुशलता एवं नेत्तृत्व पर निर्भर करती है। एक प्रशासक में किन किन गुणों-का होना आवश्यक है, इस पर विद्वानों में कोई मतैक्य नहीं है, फिर भी हम कुछ आवश्यक गुणों को इंगित कर सकते हैं।

सी0 राजगोपालचारी, जिनका नाम बहुत सम्मान से लिया जाता है और जो की अपने में खुद एक योग्य एवं कुशल प्रशासक थे, ने प्रशासक के छह गुणों का उल्लेख किया है। ये निम्न है-

1. अच्छे प्रशासक को उच्च चरित्र का व्यक्ति होना चाहिए।
2. कार्यपालिका सम्बन्धी समस्याओं का सही ढंग से और शीघ्रता से समाधान करने की

10. **विपदाओं में अविलम्ब हस्तक्षेप करना-** यह मुख्य कार्यपालिका का कार्य है कि देश के समक्ष अगर किसी भी प्रकार की प्राकृतिक या मानवीय विपदा आती है, तो वो पूरे प्रशासकीय तन्त्र को क्रियाशील करके लोगों को आपदों में सहयोग दें। अगर कहीं भुकंप, बाढ़, सूखा, या अन्य विपदाऐं आती हैं तो मुख्य कार्यपालिका सम्बन्ध विभाग को तत्काल सेवाओं को पहुँचाने के लिए निर्देशित कर सकता है। इसी तरह वाह्य आक्रमण के तहत वह अध्यादेश जारी कर सकता है, जिससे की विपत्ति का सामना प्रभावशाली पूर्वक किया जा सके।

14.3.4 सफल मुख्य कार्यपालिका के गुण

मुख्य कार्यपालक का कद एवं व्यक्तित्व किसी भी राष्ट्र के भविष्य को तय करता है। अमेरिका के राष्ट्रपति जार्ज वाशिगंटन एवं रूसवेल्ट ने जहाँ अमेरिका को विश्वशक्ति बनने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई, वहीं स्टेलिन ने रूस को एक कृषि प्रधान, देश से परिवर्तित कर एक विश्वशक्ति के रूप में उभारने में बहुत कम समय लिया। अगर हम जर्मनी के इतिहास का अध्ययन करें तो ज्ञात होगा की अगर हिंटलर नहीं आता तो शायद जर्मनी भी एक विश्वशक्ति के रूप में उभरता। प्रशासनिक सफलता और असफलता मुख्य प्रशासक की व्यक्तिगत क्षमता, कार्यकुशलता एवं नेतृत्व पर निर्भर करती है। एक प्रशासक में किन किन गुणों-का होना आवश्यक है, इस पर विद्वानों में कोई मतैक्य नहीं है, फिर भी हम कुछ आवश्यक गुणों को इंगित कर सकते हैं।

सी0 राजगोपालचारी, जिनका नाम बहुत सम्मान से लिया जाता है और जो की अपने में खुद एक योग्य एवं कुशल प्रशासक थे, नेप्रशासक के छह गुणों का उल्लेख किया है। ये निम्न है-

1. अच्छे प्रशासक को उच्च चरित्र का व्यक्ति होना चाहिए।
2. कार्यपालिका सम्बन्धी समस्याओं का सही ढंग से और शीघ्रता से समाधान करने की क्षमता होनी चाहिए।
3. उसे अपने अधीनस्थ कर्मचारियों में अपने प्रति विश्वास उत्पन्न करने की क्षमता होनी चाहिए।
4. प्रशासक को सोच-मझकर निर्णय लेना चाहिए और निर्णय लेने के बाद विचलित नहीं होना चाहिए।
5. प्रशासक को सन्तुलित मस्तिष्क वाला होना चाहिए।
6. प्रशासक के भीतर यह योग्यता होनी चाहिए कि वह विभिन्न स्तरों पर काम करने वाले अधीनस्थ कर्मचारियों के भीतर सामाजिक उद्देश्य की भावना भर सके।

प्रशासकीय कौशल होना एक कठिन चुनौती है और यह आम आदमियों के बस की बात नहीं है। एक सफल प्रशासक बनने के लिए एक व्यक्ति के पास प्रशासकीय अनुभव के साथ-साथ उसे अच्छा सुनने वाला होना चाहिए। उसकी निर्णयन शक्ति तीव्र एवं स्पष्ट होना चाहिए। जनता से संवाद कायम करने में माहिर होना चाहिए। अच्छे कार्यों का श्रेय लेने के साथ-साथ गलत निर्णयों का उत्तरदायित्व उठाने की ताकत उसके पास होनी चाहिए। इस संदर्भ में अमेरिका के राष्ट्रपति रूसवेल्ट, इंगलैण्ड के

प्रधानमंत्री विनस्टन चर्चिल और भारत के प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू ज्वलंत उदाहरण हैं, जिन्होंने अपने समय में बड़ी जिम्मेदारियों को प्रभावशाली तरीके से निभाया। चर्चिल के नेतृत्व से इंगलैंड ने जर्मनी को परास्त किया, तथा रूसवेल्ट के निर्देशन में अमेरिका ने जापान एवं जर्मनी को निर्णायक रूप से द्वितीय महायुद्ध में परास्त किया। पॉल एपलब्बी ने प्रशासक के गुणों के बारे में बताया है कि प्रशासक शक्ति और अधिकार को सुरक्षित सम्पत्ति मानता है और उनसे सिर्फ भाव उत्पन्न करने का प्रयास करता है। वह अच्छे समाचार सुनकर अधिक प्रसन्न नहीं होता है और बुरे समाचार सुनकर विचलित नहीं होता है। प्रशासक अपने अधीनस्थ व्यक्तियों का सम्मान करता है। प्रशासक अपनी गलतियों को स्वीकार भी करता है।

प्रो0 टीड मानते हैं कि सफल प्रशासक में दस गुण होने चाहिए। उनके अनुसार शारीरिक क्षमता, उद्देश्य की स्पष्टता, ज्ञान एवं निर्देशन, उत्साह, भिन्नता व भावनाएँ, ईमानदारी, तकनीकि विशेषज्ञता, बुद्धि शिक्षा देने की योग्यता, विश्वास एवं निर्णय लेने की क्षमता का होना एक सफल प्रशासक का होना आवश्यक है।

मुख्य कार्यपालक के अन्दर योग्यता एवं क्षमता होनी चाहिए। उसे सबल एवं सन्तुलित व्यक्तित्व का मालिक होना चाहिए।

डिमॉक के अनुसार, नेतृत्त्व वह साधन है जिसके द्वारा व्यक्तियों को सामूहिक लक्ष्य प्राप्त करने के लिए प्रोत्साहित किया जाता है। सफल नेतृत्त्व अपने अनुदायियों में एक ऐसी भावना उत्पन्न करता है जिससे वे उसके आदेशों और आदर्शों को सहर्ष स्वीकार करता है। नेतृत्व के अन्दर ऐसी क्षमता होनी चाहिए कि देश की जनता और शासन के लोग प्रशासक की नीतियों में विश्वास प्रकट करें, ताकि जनहित और राष्ट्रहित में मुख्य प्रशासक सही समय पर फैसला कर सकें।

एक अन्य गुण जिस के बारे में फिफनर ने चर्चा की है, वह है, प्रशासनिक प्रतिभा का होना। एक प्रशासक में दूसरों से कुशलतापूर्वक और मितव्ययतापूर्ण काम कराने की क्षमता होनी चाहिए, अनावश्यक विलंब तथा बिना हिचकिचाहट के निर्णय लेने की सूझबूझ, हँसमुख व्यक्तित्व, लोगों के साथ मिलजुल कर काम करने की कुशलता, योग्य प्रशासक के निर्णायक तत्व हैं।

चाहिए।
5. प्रशासक को सन्तुलित मस्तिष्क वाला होना चाहिए।
6. प्रशासक के भीतर यह योग्यता होनी चाहिए कि वह विभिन्न स्तरों पर काम करने वाले अधीनस्थ कर्मचारियों के भीतर सामाजिक उद्देश्य की भावना भर सके।

प्रशासकीय कौशल होना एक कठिन चुनौती है और यह आम आदमियों के बस की बात नहीं है। एक सफल प्रशासक बनने के लिए एक व्यक्ति के पास प्रशासकीय अनुभव के साथ-साथ उसे अच्छा सुनने वाला होना चाहिए। उसकी निर्णयन शक्ति तीव्र एवं स्पष्ट होना चाहिए। जनता से संवाद कायम करने में माहिर होना चाहिए। अच्छे कार्यों का श्रेय लेने के साथ-साथ गलत निर्णयों का उत्तरदायित्व उठाने की ताकत उसके पास होनी चाहिए। इस संदर्भ में अमेरिका के राष्ट्रपति रूसवेल्ट, इंगलैण्ड के

178

प्रधानमंत्री विनस्टन चर्चिल और भारत के प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू ज्वलंत उदाहरण हैं, जिन्होंने अपने समय में बड़ी जिम्मेदारियों को प्रभावशाली तरीके से निभाया। चर्चिल के नेतृत्व से इंगलैंड ने जर्मनी को परास्त किया, तथा रूसवेल्ट के निर्देशन में अमेरिका ने जापान एवं जर्मनी को निर्णायक रूप से द्वितीय महायुद्ध में परास्त किया। पॉल एपलब्बी ने प्रशासक के गुणों के बारे में बताया है कि प्रशासक शक्ति और अधिकार को सुरक्षित सम्पत्ति मानता है और उनसे सिर्फ भाव उत्पन्न करने का प्रयास करता है। वह अच्छे समाचार सुनकर अधिक प्रसन्न नहीं होता है और बुरे समाचार सुनकर विचलित नहीं होता है। प्रशासक अपने अधीनस्थ व्यक्तियों का सम्मान करता है। प्रशासक अपनी गलतियों को स्वीकार भी करता है।

प्रो0 टीड मानते हैं कि सफल प्रशासक में दस गुण होने चाहिए। उनके अनुसार शारीरिक क्षमता, उद्देश्य की स्पष्टता, ज्ञान एवं निर्देशन, उत्साह, भिन्नता व भावनाएँ, ईमानदारी, तकनीकि विशेषज्ञता, बुद्धि शिक्षा देने की योग्यता, विश्वास एवं निर्णय लेने की क्षमता का होना एक सफल प्रशासक का होना आवश्यक है।

मुख्य कार्यपालक के अन्दर योग्यता एवं क्षमता होनी चाहिए। उसे सबल एवं सन्तुलित व्यक्तित्व का मालिक होना चाहिए।

डिमॉक के अनुसार, नेतृत्त्व वह साधन है जिसके द्वारा व्यक्तियों को सामूहिक लक्ष्य प्राप्त करने के लिए प्रोत्साहित किया जाता है। सफल नेतृत्त्व अपने अनुदायियों में एक ऐसी भावना उत्पन्न करता है जिससे वे उसके आदेशों और आदर्शों को सहर्ष स्वीकार करता है। नेतृत्व के अन्दर ऐसी क्षमता होनी चाहिए कि देश की जनता और शासन के लोग प्रशासक की नीतियों में विश्वास प्रकट करें, ताकि जनहित और राष्ट्रहित में मुख्य प्रशासक सही समय पर फैसला कर सकें।

एक अन्य गुण जिस के बारे में फिफनर ने चर्चा की है, वह है, प्रशासनिक प्रतिभा का होना। एक प्रशासक में दूसरों से कुशलतापूर्वक और मितव्ययतापूर्ण काम कराने की क्षमता होनी चाहिए, अनावश्यक विलंब तथा बिना हिचकिचाहट के निर्णय लेने की सूझबूझ, हँसमुख व्यक्तित्व, लोगों के साथ मिलजुल कर काम करने की कुशलता, योग्य प्रशासक के निर्णायक तत्व हैं।

साथ ही मुख्य प्रशासक को समय एवं परिस्थिति का जानने वाला और दूरदर्शी भी होना चाहिए। किस कार्य के लिए कौन सा समय उपयुक्त होना चाहिए और उसका भविष्य में बुरा प्रभाव पड़ेगा अगर प्रशासक इन बातों का आकलन करने में सफल है तो वह सही सिद्ध होगा। इसके अलावा वह एक अच्छे चरित्र तथा तीक्ष्ण बुद्धि का होना का होना चाहिए। अगर उसका चरित्र अच्छा नहीं है तो वह जनता के बीच में अपने विश्वास को स्थापित नहीं कर पायेगा। उक्त बातों से यह स्पष्ट है कि केवल संवैधानिक अधिकार और पर्याप्त विशेषाधिकार प्राप्त कर लेने मात्र से ही कोई व्यक्ति सफल प्रशासक की कसौटियों पर खरा नहीं उतर सकता अपितु विलक्षण योग्यता और क्षमता वाला व्यक्ति ही सफल प्रशासक बन सकता है।

179

14.3.5 कार्यपालिका में प्रशासनिक शक्तियों को निहित करने के लाभ

प्रशासन को मितव्ययता तथा कार्यकुशलता के साथ चलाने के लिए शक्तियों को मुख्य कार्यकारी में निहित करना आवश्यक है। शासन के मुख्य तीन अंग होते हैं- व्यवस्थापिका, कार्यपालिका और न्यायपालिका। न्यायपालिका एक ऐसी संस्था है, जो कार्यपालिका और व्यवस्थापिका से स्वतंत्र रहकर न्याय से संबंधित मामलों का निपटारा करती है। न्यायपालिका को इस कार्य से हटकर किसी भी प्रकार की शक्ति देने के भयंकर परिणाम हो सकते हैं। इसी प्रकार व्यवस्थापिका को शक्ति प्रदत्त करने से कार्यकुशलता एवं विशेषज्ञता पर प्रतिकूल असर पड़ सकता है। व्यवस्थापिका का पर्यवेक्षण, एवं नियन्त्रण का अधिकार कार्यपालिका की जवाबदेही सुनिश्चित करता है।

कार्यपालिका के हाथों में प्रशासनिक सत्ता को रखने का एक अन्य लाभ यह है, कि उसके द्वारा व्यवस्थापिका को, जो जनता के प्रतिनिधि हैं, प्रशासन के सम्बन्ध में समस्त सूचनाएें प्राप्त होती रहती है, तथा प्रशासनिक कर्मचारी मनमानी नहीं कर पाते। इन पर कार्यपालिका का पूरा नियन्त्रण

प्रशासक की कसौटियों पर खरा नहीं उतर सकता अपितु विलक्षण योग्यता और क्षमता वाला व्यक्ति ही सफल प्रशासक बन सकता है।

14.3.5 कार्यपालिका में प्रशासनिक शक्तियों को निहित करने के लाभ

प्रशासन को मितव्ययता तथा कार्यकुशलता के साथ चलाने के लिए शक्तियों को मुख्य कार्यकारी में निहित करना आवश्यक है। शासन के मुख्य तीन अंग होते हैं- व्यवस्थापिका, कार्यपालिका और न्यायपालिका। न्यायपालिका एक ऐसी संस्था है, जो कार्यपालिका और व्यवस्थापिका से स्वतंत्र रहकर न्याय से संबंधित मामलों का निपटारा करती है। न्यायपालिका को इस कार्य से हटकर किसी भी प्रकार की शक्ति देने के भयंकर परिणाम हो सकते हैं। इसी प्रकार व्यवस्थापिका को शक्ति प्रदत्त करने से कार्यकुशलता एवं विशेषज्ञता पर प्रतिकूल असर पड़ सकता है। व्यवस्थापिका का पर्यवेक्षण, एवं नियन्त्रण का अधिकार कार्यपालिका की जवाबदेही सुनिश्चित करता है।
कार्यपालिका के हाथों में प्रशासनिक सत्ता को रखने का एक अन्य लाभ यह है, कि उसके द्वारा व्यवस्थापिका को, जो जनता के प्रतिनिधि हैं, प्रशासन के सम्बन्ध में समस्त सूचनाऐं प्राप्त होती रहती है, तथा प्रशासनिक कर्मचारी मनमानी नहीं कर पाते। इन पर कार्यपालिका का पूरा नियन्त्रण होता है तथा उनके मन में भय बना रहता है कि गलत काम करने पर वे पकड़े जायेंगे और उन्हें दण्डित किया जायेगा। विभिन्न प्रशासनिक विभागों एवं घटकों में समन्वय एवं एकता बनाए रखने के लिए भी मुख्य कार्यकारी को शक्तियाँ प्रदान करना आवश्यक है। कार्यपालक प्रशासन की विभिन्न इकाइयों में सहयोग, सामंजस्य एवं तालमेल बनाए रखती है और उनमें आपस में संघर्ष नहीं होने देती। इससे प्रशासन के एकीकरण के सिद्धान्त में सहायता मिलती है। संक्षेप में हम कह सकते हैं कि कार्यपालिका में प्रशासनिक शक्तियाँ प्रदत्त करना सार्वजनिक, एवं प्रशासनिक हितों की दृष्टि से सर्वथा उचित एवं तर्कसंगत है।

अभ्यास प्रश्न-

1. इंगलैण्ड में राष्ट्रपति शासन पद्धति है। सत्य/असत्य
2. स्विटजरलैण्ड में बहुल कार्यपालिका पायी जाती है। सत्य/असत्य
3. मुख्य कार्यपालिका जनता और शासन के बीच की मुख्य कड़ी है। सत्य/असत्य
4. अध्यादेश मुख्य कार्यपालक के द्वारा जारी की जाती है। सत्य/असत्य
5. मुख्य कार्यपालक को दूरदर्शी नहीं होना चाहिए। सत्य/असत्य
6. मुख्य कार्यपालक को सबल एवं संतुलित व्यक्तित्व का होना चाहिए। सत्य/असत्य

14.4 सारांश

मुख्य कार्यपालिका वर्तमान में आधुनिक संगठनात्मक ढांचे का मुख्य केन्द्र बिन्दु है। मुख्य कार्यपालिका पदसोपान के सर्वोत्तम शिखर पर होता है। प्रशासन की सम्पूर्ण धुरी उसके इर्द-गिर्द घूमती है। इन्हें कई नामों से पुकारा जाता है, जैसे- राज्याध्यक्ष, राष्ट्राध्यक्ष, मुख्य प्रशासक आदि। भारत में राष्ट्रपति, इंगलैण्ड में सम्राट या सम्राज्ञी और अमेरिका में राष्ट्रपति। राज्यों में राज्यपाल एवं शहरों में महापौर प्रचलित नाम हैं। जिस तरह देश के अध्यक्ष को मुख्य कार्यपालक कहा जाता है उसी प्रकार व्यावसायिक संगठनों में उसे महाप्रबन्धक की संज्ञा दी जाती है।

मुख्य कार्यपालिका प्रमुख रूप से प्रशासनिक संगठन के सम्पूर्ण कार्यों में सामंजस्य एवं समन्वय स्थापित करता है। व्यावसायिक संगठन के समस्त कार्यों और उपविभागों में समन्वय स्थापित करने की अन्तिम जिम्मेदारी महाप्रबन्धक की ही होती है। वह योजना, संगठन निर्माण, नियन्त्रण, निर्देशन और पर्यवेक्षण जैसे महत्वपूर्ण कार्यों को सुनिश्चित करता है। समय-समय पर आवश्यक निर्देश जारी करना उसकी जिम्मेदारी है। चूँकि मुख्य कार्यपालिका जनता और प्रशासन के बीच में एक कड़ी की भूमिका निभाता है, इसलिए प्रशासन की दशा एवं दिशा को वह निर्धारित करता है।
किसी शासन व्यवस्था के तहत किस पदाधिकारी को सर्वोच्च मुख्य कार्यपालिका कहा जायेगा, यह बहुत कुछ उस देश में वर्तमान कार्यपालिका व्यवस्था या शासन व्यवस्था पर निर्भर करता है। अतः यह जरूरी है की कार्यपालिका के विभिन्न प्रकारों के बारे में जानकारी प्राप्त कर ली जाय ताकि उस देश में मौजूद मुख्य कार्यपालिका को पहचाना जा सके और उनका अध्ययन किया जा सके।
कार्यपालिका के मुख्य प्रकार हैं- राजनीतिक और स्थायी कार्यपालिका, नाममात्र एवं वास्तविक कार्यपालिका, एकल और बहुल कार्यपालिका, वंशानुगत एवं निर्वाचित कार्यपालिका एवं संसदात्मक एवं अध्यक्षात्मक कार्यपालिका।
प्रशासनिक सफलता और असफलता मुख्य प्रशासक की योग्यता एवं क्षमता पर निर्भर करता है। एक सफल प्रशासक होने के लिए उसमें शारीरिक क्षमता, ज्ञान एवं निर्देशन, उत्साह, ईमानदारी, तकनीकी विशेषता, बुद्धि, शिक्षा देने की योग्यता, विश्वास एवं निर्णय लेने की क्षमता, का होना एक सफल प्रशासक के लिए आवश्यक है।

मुख्य कार्यपालिका वर्तमान में आधुनिक संगठनात्मक ढांचे का मुख्य केन्द्र बिन्दु है। मुख्य कार्यपालिका पदसोपान के सर्वोत्तम शिखर पर होता है। प्रशासन की सम्पूर्ण धुरी उसके इर्द-गिर्द घूमती है। इन्हें कई नामों से पुकारा जाता है, जैसे- राज्याध्यक्ष, राष्ट्राध्यक्ष, मुख्य प्रशासक आदि। भारत में राष्ट्रपति, इंगलैण्ड में सम्राट या सम्राज्ञी और अमेरिका में राष्ट्रपति। राज्यों में राज्यपाल एवं शहरों में महापौर प्रचलित नाम हैं। जिस तरह देश के अध्यक्ष को मुख्य कार्यपालक कहा जाता है उसी प्रकार व्यावसायिक संगठनों में उसे महाप्रबन्धक की संज्ञा दी जाती है।

मुख्य कार्यपालिका प्रमुख रूप से प्रशासनिक संगठन के सम्पूर्ण कार्यों में सामंजस्य एवं समन्वय स्थापित करता है। व्यावसायिक संगठन के समस्त कार्यों और उपविभागों में समन्वय स्थापित करने की अन्तिम जिम्मेदारी महाप्रबन्धक की ही होती है। वह योजना, संगठन निर्माण, नियन्त्रण, निर्देशन और पर्यवेक्षण जैसे महत्वपूर्ण कार्यों को सुनिश्चित करता है। समय-समय पर आवश्यक निर्देश जारी करना उसकी जिम्मेदारी है। चूँकि मुख्य कार्यपालिका जनता और प्रशासन के बीच में एक कड़ी की भूमिका निभाता है, इसलिए प्रशासन की दशा एवं दिशा को वह निर्धारित करता है।

किसी शासन व्यवस्था के तहत किस पदाधिकारी को सर्वोच्च मुख्य कार्यपालिका कहा जायेगा, यह बहुत कुछ उस देश में वर्तमान कार्यपालिका व्यवस्था या शासन व्यवस्था पर निर्भर करता है। अतः यह जरूरी है की कार्यपालिका के विभिन्न प्रकारों के बारे में जानकारी प्राप्त कर ली जाय ताकि उस देश में मौजूद मुख्य कार्यपालिका को पहचाना जा सके और उनका अध्ययन किया जा सके।

कार्यपालिका के मुख्य प्रकार हैं- राजनीतिक और स्थायी कार्यपालिका, नाममात्र एवं वास्तविक कार्यपालिका, एकल और बहुल कार्यपालिका, वंशानुगत एवं निर्वाचित कार्यपालिका एवं संसदात्मक एवं अध्यक्षात्मक कार्यपालिका।

प्रशासनिक सफलता और असफलता मुख्य प्रशासक की योग्यता एवं क्षमता पर निर्भर करता है। एक सफल प्रशासक होने के लिए उसमें शारीरिक क्षमता, ज्ञान एवं निर्देशन, उत्साह, ईमानदारी, तकनीकी विशेषता, बुद्धि, शिक्षा देने की योग्यता, विश्वास एवं निर्णय लेने की क्षमता, का होना एक सफल प्रशासक के लिए आवश्यक है।

14.5 शब्दावली

पदसोपान- पद की क्रमबद्धता

कार्यपालक- शासन का वह भाग जो संसद द्वारा पारित विधियों को कार्यरूप में बलवत् करना तथा उसका निष्पादन करता हो।

अधीनस्थ- जो किसी की अधीनता में हो। किसी के अधीन या नीचे रहने रहने वाला।

14.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. असत्य, 2. सत्य, 3. सत्य, 4. सत्य 5. असत्य 6. सत्य

14.7 संदर्भ ग्रन्थ-सूची

1. अग्रवाल, एच०एन०, (1988): माडर्न पब्लिक एडमिनिस्ट्रेशन, किताब महल, इलाहाबाद।
2. सिंह, बीरकेश्वर प्रसाद (1989): पब्लिक एडमिनिस्ट्रेशन, स्टूडेन्ट फ्रैन्ड्स, पब्लिशर्स, पटना।
3. फाड़िया, बी०एल० (1999): लोकप्रशासन, साहित्य भवन पब्लिकेशन, आगरा।
4. दुबे आर०के० (1992): आधुनिक लोक प्रशासन, लक्ष्मी नारायण अग्रवाल, आगरा।

14.8 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री

1. त्यागी ए०आर० (1960): पब्लिक एडमिनिस्ट्रेशन, आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली।

2. अरोरा, रमेश (1954): एडमिनिस्ट्रेशन थीयरी, नई दिल्ली।

14.9 निबंधात्मक प्रश्न

1. आधुनिक प्रशासन में मख्य कार्यपालक के कार्यों की समीक्षा कीजिए।
2. किसी देश की प्रशासन व्यवस्था में मुख्य कार्यपालिका की भूमिका का वर्णन कीजिए।
3. सफल मुख्य कार्यपालक के कौन-कौन से गुण होते हैं?
4. मुख्य कार्यपालिका के विभिन्न प्रकारों एवं उनके अधिकारों और कार्यों का वर्णन कीजिए।

इकाई- 15 सूत्र तथा स्टाफ

इकाई की संरचना

15.1 प्रस्तावना
15.2 उद्देश्य
15.3 सूत्र एवं स्टाफ: अर्थ एवं परिभाषा
15.4 स्टाफ अभिकरण
    15.4.1 स्टाफ अभिकरणों के प्रकार
    15.4.2 स्टाफ अभिकरण के कार्य
15.5 सूत्र अभिकरण
    15.5.1 विभाग
    15.5.2 लोक निगम
    15.5.3 स्वतंत्र नियामकीय आयोग
15.6 स्टाफ तथा सूत्र के पारस्परिक संबंध
15.7 स्टाफ अभिकरण के उदाहरण
    15.7.1 भारत में स्टाफ अभिकरण
    15.7.2 ब्रिटेन में स्टाफ अभिकरण
    15.7.3 संयुक्त राज्य अमेरिका में स्टाफ अभिकरण
15.8 सारांश
15.9 शब्दावली
15.10 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
15.11 संदर्भ ग्रन्थ-सूची
15.12 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री
15.13 निबंधात्मक प्रश्न

15.1 प्रस्तावना

सूत्र तथा स्टाफ शब्द सैनिक विज्ञान से लिया गया है, सैनिक प्रशासन में सैनिकों का एक वर्ग युद्ध स्थल पर युद्ध लड़ता है तथा दूसरा वर्ग लड़ने वाले सैनिकों को भोजन कपड़ा, चिकित्सा, यातायात व अन्य युद्ध सामग्री उपलब्ध कराता है। दोनों वर्ग के सैनिकों का अपना महत्व है। एक वर्ग दूसरे वर्ग के बिना कार्य नहीं कर सकता। युद्ध स्थल पर लड़ने वाले सैनिक युद्ध सामग्री व अन्य आवश्यक वस्तुएं उपलब्ध कराने वाले सैनिक की सहायता के बिना नहीं लड़ सकते। इस प्रकार सैनिकों का एक वर्ग वास्तविक युद्ध लड़ने में कार्यरत रहता है और दूसरा वर्ग इसको सहायता पहुँचाता है। क्रियाशील वर्ग को सैनिक प्रशासन की शब्दावली में सूत्र कहते हैं तथा सहायक वर्ग को स्टाफ की संज्ञा दी जाती है। इन अर्थों, को लोक प्रशासन में भी प्रयोग किया जाने लगा। प्रशासन में

पदाधिकारियों का वह वर्ग जो अधिकारी को इसके निर्णय लेने में सहायता करता है, स्टाफ कहलाता है तथा वह वर्ग जो उसके निर्णयों को कार्यरूप देता है सूत्र कहलाता है।

15.2 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के उपरान्त आप-

- सूत्र एवं स्टाफ की परिभाषा, अवधारणा एवं विकास के संबंध में जान पायेंगे।
- लोक प्रशासन में इनके प्रकार एवं प्रक्रिया के संबंध में जान पायेंगे।
- सूत्र तथा स्टाफ में भेद के संबंध में जान पायेंगे।

15.3 सूत्र एवं स्टाफ: अर्थ एवं परिभाषा

लोक प्रशासन में कार्यों को क्रियान्वित करने के लिए सूत्र एवं स्टाफ की समानान्तर सेवाओं की आवश्यकता होती है। प्रशासन चाहे कितना भी सरल व साधारण क्यों न हो प्रशासक के पास निर्णय लेने के अतिरिक्त निर्देशन, निरीक्षण व नियन्त्रण का कार्य रहता है। उसको सदैव सहायता की आवश्यकता रहती है। उसके पास कार्य की अधिकता के कारण इतना समय नहीं होता कि वह निर्माण से सम्बन्धित सामग्री का विस्तार में विश्लेषणात्मक अध्ययन कर सके। वह कार्यों की हर शाखा का विशेषज्ञ भी नहीं हो सकता। वह तो केवल अपने सामान्य ज्ञान के आधार पर अधीनस्थ पदाधिकारियों का नेतृत्व करके प्रशासन को एक निश्चित दिशा प्रदान करता है। यहीं कारण है कि हम देखते हैं कि प्रशासन में अधिकारियों की सहायता देने के लिए व्यक्तिगत सहायक, गोपनीय सहायक, आशुलिपिक आदि की व्यवस्था होती है। इन सभी के कार्यों को हम स्टाफ अभिकरण की संज्ञा देते हैं। स्टाफ लाइन (सूत्र) को सहायता दे सकता है, परामर्श दे सकता है, पर आदेश नहीं दे सकता है। डा0 एम0पी0 शर्मा के अनुसार " स्टाफ का अर्थ है वह छड़ी जो सहायता तो दे सकती

के बिना कार्य नहीं कर सकते। युद्ध स्थल पर लड़ने वाले सैनिक युद्ध सामग्री व अन्य आवश्यक वस्तुएं उपलब्ध कराने वाले सैनिक की सहायता के बिना नहीं लड़ सकते। इस प्रकार सैनिकों का एक वर्ग वास्तविक युद्ध लड़ने में कार्यरत रहता है और दूसरा वर्ग इसको सहायता पहुँचाता है। क्रियाशील वर्ग को सैनिक प्रशासन की शब्दावली में सूत्र कहते हैं तथा सहायक वर्ग को स्टाफ की संज्ञा दी जाती है। इन अर्थों, को लोक प्रशासन में भी प्रयोग किया जाने लगा। प्रशासन में

पदाधिकारियों का वह वर्ग जो अधिकारी को इसके निर्णय लेने में सहायता करता है, स्टाफ कहलाता है तथा वह वर्ग जो उसके निर्णयों को कार्यरूप देता है सूत्र कहलाता है।

15.2 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के उपरान्त आप-

- सूत्र एवं स्टाफ की परिभाषा, अवधारणा एवं विकास के संबंध में जान पायेंगे।
- लोक प्रशासन में इनके प्रकार एवं प्रक्रिया के संबंध में जान पायेंगे।
- सूत्र तथा स्टाफ में भेद के संबंध में जान पायेंगे।

15.3 सूत्र एवं स्टाफ: अर्थ एवं परिभाषा

लोक प्रशासन में कार्यों को क्रियान्वित करने के लिए सूत्र एवं स्टाफ की समानान्तर सेवाओं की आवश्यकता होती है। प्रशासन चाहे कितना भी सरल व साधारण क्यों न हो प्रशासक के पास निर्णय लेने के अतिरिक्त निर्देशन, निरीक्षण व नियन्त्रण का कार्य रहता है। उसको सदैव सहायता की आवश्यकता रहती है। उसके पास कार्य की अधिकता के कारण इतना समय नहीं होता कि वह निर्माण से सम्बन्धित सामग्री का विस्तार में विश्लेषणात्मक अध्ययन कर सके। वह कार्यों की हर शाखा का विशेषज्ञ भी नहीं हो सकता। वह तो केवल अपने सामान्य ज्ञान के आधार पर अधीनस्थ पदाधिकारियों का नेतृत्व करके प्रशासन को एक निश्चित दिशा प्रदान करता है। यहीं कारण है कि हम देखते हैं कि प्रशासन में अधिकारियों की सहायता देने के लिए व्यक्तिगत सहायक, गोपनीय सहायक, आशुलिपिक आदि की व्यवस्था होती है। इन सभी के कार्यों को हम स्टाफ अभिकरण की संज्ञा देते हैं। स्टाफ लाइन (सूत्र) को सहायता दे सकता है, परामर्श दे सकता है, पर आदेश नहीं दे सकता है। डा0 एम0पी0 शर्मा के अनुसार " स्टाफ का अर्थ है वह छड़ी जो सहायता तो दे सकती है, लेकिन दिशाओं को निर्धारित नहीं कर सकती है।"

चार्ल्सवर्थ का कथन है कि ''स्टाफ वह अधिकारी है जो अनुसन्धान निरीक्षण तथा अध्ययन में विशेषज्ञ हो तथा जो अपने से सम्बन्धित मुख्य कार्यकारी अधिकारी के अनुमोदन के लिए योजनाऐं तथा प्रस्ताव तैयार करता है।''

मूने के अनुसार ''स्टाफ कार्यपालिका के व्यक्तित्व का ही विस्तार है। इसका अर्थ है अधिक आँखें, अधिक कान और अधिक हाथ, जो योजना बनाने तथा लागू करने में सहायता दे सके।''

उपयुक्त परिभाषाओं से यह स्पष्ट हो जाता है कि स्टाफ संस्थागत एवं परामर्शदायी कार्यों से सम्बन्धित होता है। स्टाफ, लाइन के उद्देशों और योजनाओं, को सम्पन्न करने में मदद पहुँचाता है। योजना, आदेश, निर्देश, नियन्त्रण और समन्वय जैसे कार्यों में यह उच्च अधिकारियों की सहायता करता है।

डॉ0 बी0एल0 फाड़िया के अनुसार सूत्र तथा स्टाफ अभिकरण में अन्तर निम्न है-

1. स्टाफ का सम्बन्ध सूत्र के प्रतिकूल परामर्श देने तथा नियोजन से है और सूत्र का सम्बन्ध कार्यों को करने से है।

2. स्टाफ अधिकारियों तथा स्टाफ इकाइयों एवं सूत्र अधिकारियों और सूत्र इकाइयों के मध्य दूसरा भेद यह है कि स्टाफ अधिकारी और स्टाफ इकाइयाँ सत्ता अथवा आदेश देने की शक्ति का प्रयोग नहीं करते। ये केवल परामर्श देते हैं तथा सहायता करते हैं। इसके विपरीत, सूत्र अधिकारी और सूत्र इकाइयाँ आदेश देने का कार्य करती हैं।
3. सूत्र क्रियात्मक है और स्टाफ संस्थागत है।
4. सूत्र का कर्त्तव्य लक्ष्य को प्राप्त करने से है तथा स्टाफ का कर्त्तव्य सूत्र को लक्ष्य प्राप्त करने योग्य बनाने से है।
5. स्टाफ सदा पृष्ठभूमि में रहता है। वह निर्णयों के लिए भूमिका तैयार करता है, परन्तु स्वयं निर्णय नहीं करता। निर्णय करने की समूची शक्ति सूत्र अधिकारियों के हाथों में ही होती है। सूत्र अभिकरण के व्यक्ति सामने से कार्य करते हैं।
6. सूत्र के कार्य प्राथमिक रूप से होते हैं, जिसके लिए सरकार का अस्तित्त्व होता है तथा स्टाफ का कार्य विभागों की सार्थकता को बनाए रखने से है।
7. सूत्र के कार्य साध्य हैं और स्टाफ का कार्य साधन। स्टाफ का मुख्य सम्बन्ध अनुसंधान करने, तथा मालूम करने, उनका संग्रह करने, योजना बनाने तथा सूत्र अधिकारियों को मदद देने से है।

1. स्टाफ का सम्बन्ध सूत्र के प्रतिकूल परामर्श देने तथा नियोजन से है और सूत्र का सम्बन्ध कार्यों को करने से है।

2. स्टाफ अधिकारियों तथा स्टाफ इकाइयों एवं सूत्र अधिकारियों और सूत्र इकाइयों के मध्य दूसरा भेद यह है कि स्टाफ अधिकारी और स्टाफ इकाइयाँ सत्ता अथवा आदेश देने की शक्ति का प्रयोग नहीं करते। ये केवल परामर्श देते हैं तथा सहायता करते हैं। इसके विपरीत, सूत्र अधिकारी और सूत्र इकाइयाँ आदेश देने का कार्य करती हैं।
3. सूत्र क्रियात्मक है और स्टाफ संस्थागत है।
4. सूत्र का कर्त्तव्य लक्ष्य को प्राप्त करने से है तथा स्टाफ का कर्त्तव्य सूत्र को लक्ष्य प्राप्त करने योग्य बनाने से है।
5. स्टाफ सदा पृष्ठभूमि में रहता है। वह निर्णयों के लिए भूमिका तैयार करता है, परन्तु स्वयं निर्णय नहीं करता। निर्णय करने की समूची शक्ति सूत्र अधिकारियों के हाथों में ही होती है। सूत्र अभिकरण के व्यक्ति सामने से कार्य करते हैं।
6. सूत्र के कार्य प्राथमिक रूप से होते हैं, जिसके लिए सरकार का अस्तित्त्व होता है तथा स्टाफ का कार्य विभागों की सार्थकता को बनाए रखने से है।
7. सूत्र के कार्य साध्य हैं और स्टाफ का कार्य साधन। स्टाफ का मुख्य सम्बन्ध अनुसंधान करने, तथा मालूम करने, उनका संग्रह करने, योजना बनाने तथा सूत्र अधिकारियों को मदद देने से है।
8. सूत्र का कार्य नीतियों का क्रियान्वन करना है, जबकि स्टाफ का कार्य नीतियों के निर्माण में केवल सहायता देना है।

15.4 स्टाफ अभिकरण

असैनिक सेवाओं में स्टाफ अभिकरण से तात्पर्य उन अधिकारियों और कर्मचारियों के समूह से है, जो मुख्य कार्यपालिका या उच्च पदाधिकारियों को योजना निर्माण, निर्देशन, नियन्त्रण इत्यादि प्रमुख कार्यों में सहायता प्रदान करते हैं। मूने का कहना है कि मुख्य रूप से स्टाफ तीन प्रकार के कार्य करती है। पहला- सूचना सम्बन्धी, दूसरा- परामर्श सम्बन्धी और तीसरा- पर्यवेक्षण सम्बन्धी।

सूचना सम्बन्धी कार्य का अभिप्राय है कि स्टाफ सूत्र अधिकारी को आवश्यक सूचनाऐं प्रदान करता रहता है, इससे संगठन को प्राथमिकता के आधार पर कार्य करने में सुविधा रहती है। इससे प्रशासकीय निरंतरता बनाए रखने में आसानी होती है।

परामर्श सम्बन्धी कार्य का अभिप्राय है कि स्टाफ सूत्र अभिकरण को आवश्यकतानुसार प्रत्येक कार्य के सम्बन्ध में अपनी राय से अवगत कराता है। स्टाफ की सलाह को मानना या न मानना सूत्र के विवेक पर निर्भर करता है।

पर्यवेक्षण सम्बन्धी कार्य का अभिप्राय है कि स्टाफ अभिकरण द्वारा लिए गए निर्णयों को उसके उद्देश्यो तक पहुँचाए एवं उसमें उत्पन्न कठिनाइयों को दूर करें। कार्यों के शिथिलता से सम्बन्धित प्रतिमानों को सूत्र तक पहुँचाये। फिफनर ने स्टाफ के सात कार्यों का उल्लेख किया है। ये निम्न हैं- 1. सूत्र अभिकरण को परामर्श देना, 2. प्रशासन में समन्वय स्थापित करना, 3. खोज तथा अन्वेषण करना, 4. योजनाएं बनाना, 5. लोकसम्पर्क स्थापित करना तथा सूचनाएँ एकत्रित करना, 6. विभागों

की सहायता करना और 7. विभागीय अध्यक्ष से प्राप्त शक्तियों को उनकी सीमाओं के अन्तर्गत क्रियान्वित करना।

15. 4.1 स्टाफ अभिकरणों के प्रकार

फिफनर और प्रेस्थस ने स्टाफ को तीन प्रकारों में विभाजित किया है- सामान्य स्टाफ, तकनीकी स्टाफ और सहायक स्टाफ।

1. **सामान्य स्टाफ-** लोक प्रशासन में सामान्य स्टाफ पदाधिकारियों का वह वर्ग है, जो अधिकारियों को प्रशासन की प्रत्येक समस्या का समाधान निकालने में सहायता पहुँचाता है। कोई भी समस्या जिस पर अधिकरी को निर्णय लेना है, सामान्य स्टाफ के माध्यम से अधिकारी के सामने निर्णय के लिए जायेगी। सामान्य स्टाफ अधिकारी को उस समस्या से सम्बन्धित अपेक्षित सामग्री, सूचना, सुझाव तथा परामर्श आदि उपलब्ध करता है। अधिकारी इस सामग्री के आधार पर ही समस्या पर निर्णय लेता है। हर अधिकारी अपने कार्यभार के अनुपात में स्टाफ पदाधिकारी रखता है। साधारणतः सामान्य कर्मचारी को उसके कार्य में सहायता देने के लिए एक व्यक्ति सहायक की आवश्यकता होती है। परन्तु यदि कर्मचारी के पास अधिक कार्य है तथा कार्य की प्रगति जटिल है तो उसके लिए एक से अधिक पदाधिकारियों की आवश्यकता की जाती है। जब यह संख्या अधिक हो जाती है तो इसको एक स्वतन्त्र विभाग में विकसित कर दिया जाता है। यही कारण है कि प्रत्येक मन्त्रालय के साथ एक सचिवालय होता है। भारत में सुख्य कार्यपालिका का सामान्य स्टाफ इस प्रकार है- 1. मन्त्रिमण्डल सचिवालय, 2. प्रधानमंत्री कार्यालय, 3. योजना आयोग, 4. केन्द्रीय सचिवालय संगठन और 5. लोकसेवा आयोग इत्यादि। अमेरिका में व्हाइट हाउस,

उद्देश्यो तक पहुँचाऐ एवं उसमें उत्पन्न कठिनाइयों को दूर करें। कार्यों के शिथिलता से सम्बन्धित प्रतिमानों को सूत्र तक पहुँचाये। फिफनर ने स्टाफ के सात कार्यों का उल्लेख किया है। ये निम्न हैं- 1. सूत्र अभिकरण को परामर्श देना, 2. प्रशासन में समन्वय स्थापित करना, 3. खोज तथा अन्वेषण करना, 4. योजनाएं बनाना, 5. लोकसम्पर्क स्थापित करना तथा सूचनाएँ एकत्रित करना, 6. विभागों

की सहायता करना और 7. विभागीय अध्यक्ष से प्राप्त शक्तियों को उनकी सीमाओं के अन्तर्गत क्रियान्वित करना।

15. 4.1 स्टाफ अभिकरणों के प्रकार

फिफनर और प्रेस्थस ने स्टाफ को तीन प्रकारों में विभाजित किया है- सामान्य स्टाफ, तकनीकी स्टाफ और सहायक स्टाफ।

1. **सामान्य स्टाफ-** लोक प्रशासन में सामान्य स्टाफ पदाधिकारियों का वह वर्ग है, जो अधिकारियों को प्रशासन की प्रत्येक समस्या का समाधान निकालने में सहायता पहुँचाता है। कोई भी समस्या जिस पर अधिकरी को निर्णय लेना है, सामान्य स्टाफ के माध्यम से अधिकारी के सामने निर्णय के लिए जायेगी। सामान्य स्टाफ अधिकारी को उस समस्या से सम्बन्धित अपेक्षित सामग्री, सूचना, सुझाव तथा परामर्श आदि उपलब्ध करता है। अधिकारी इस सामग्री के आधार पर ही समस्या पर निर्णय लेता है। हर अधिकारी अपने कार्यभार के अनुपात में स्टाफ पदाधिकारी रखता है। साधारणतः सामान्य कर्मचारी को उसके कार्य में सहायता देने के लिए एक व्यक्ति सहायक की आवश्यकता होती है। परन्तु यदि कर्मचारी के पास अधिक कार्य है तथा कार्य की प्रगति जटिल है तो उसके लिए एक से अधिक पदाधिकारियों की आवश्यकता की जाती है। जब यह संख्या अधिक हो जाती है तो इसको एक स्वतन्त्र विभाग में विकसित कर दिया जाता है। यही कारण है कि प्रत्येक मन्त्रालय के साथ एक सचिवालय होता है। भारत में सुख्य कार्यपालिका का सामान्य स्टाफ इस प्रकार है- 1. मन्त्रिमण्डल सचिवालय, 2. प्रधानमंत्री कार्यालय, 3. योजना आयोग, 4. केन्द्रीय सचिवालय संगठन और 5. लोकसेवा आयोग इत्यादि। अमेरिका में व्हाइट हाउस, सचिवालय तथा ब्यूरो आफ द बजट इसके प्रमुख उदाहरण हैं।
2. **तकनीकी स्टाफ-** विशिष्ट तकनीकी ज्ञान प्राप्त, कर्मचारियों को तकनीकी स्टाफ की श्रेणी में रखा जाता है। विशेषज्ञ व्यक्ति ही तकनीकी और प्राविधिक मामलों में परामर्श दे सकते हैं। इस प्रकार चिकित्सक, इन्जीनियर, वैज्ञानिक, लेखांकन लेखापरीक्षण, वित्त, प्रतिरक्षा आदि विशेषज्ञ कार्यकारी की सहायता के लिए उपलब्ध कराए जाते हैं। आज के वर्तमान परिप्रेक्ष्य में तकनीकी कर्मचारियों की आवश्यकता और उपयोगिता हर मुख्य कार्यपालक के लिए अनिवार्य बन गई है।
3. **सहायक स्टाफ-** इसके अन्तर्गत वे इकाइयाँ आती हैं, जो विभागों की सामान्य समस्याओं से जुड़ी हुई सामान्य सेवाएं प्रदान करती हैं। इनका सम्बन्ध विभागों के मुख्य कार्य एवं उद्देश्यों से नहीं होता है। प्रत्येक विभाग को कार्य चलाने के लिए फर्नीचर, लेखन सामग्री, टाइपमशीन, लेटरपैड़, फार्म, रबर स्टाम्प बनबाना तथा प्रलेखों को छपवाना होता है। अपने-अपने विभागीय कार्य के संचालन के लिये कर्मचारियों की नियुक्ति करनी पड़ती है। सहायक क्रियाओं को सम्पन्न करने वाली इन इकाइयों को सहायक स्टाफ की श्रेणी में रखा

जाता है। जैसे- भारत सरकार का प्रेस, संघ लोक सेवा आयोग जो विभिन्न विभागों के लिए कार्मिकों की नियुक्ति का कार्य करता है, इत्यादि।

15.4.2 स्टाफ अभिकरण के कार्य

विभाग में स्टाफ अभिकरण की भूमिका अत्यन्त महत्वपूर्ण होती है। इनकी कार्यकुशलता एवं आवश्यकतानुरूप संगठनात्मक संरचना विभाग के उद्देश्य की पूर्ति में निर्णायक भूमिका होती है। अतः इनके मुख्य कार्यों पर हम दृष्टिपात करेंगे।

जे0डी0 मूने, के अनुसार स्टाफ के कार्यों को तीन भागों में बाँटा जा सकता है- 1.सूचनात्मक, 2. परामर्शदात्री तथा 3. निरीक्षणात्मक।

फिफनर ने स्टाफ के सात प्रकार के कार्यों का उल्लेख किया है- 1.मुख्य कार्यपालक को परामर्श देना, 2. सूत्र की सहायता करना, 3. मानवीय सम्पर्कों और योजनाओं के द्वारा प्रशासन में समन्वय स्थापित करना, 4. किसी भी मामले के सम्बन्ध में खोज तथा अन्वेषण करना, 5. योजनाओं का निर्माण करना, 6. अन्य दूसरे संगठनों तथा व्यक्तियों के साथ सम्पर्क करना तथा उनसे सम्बन्धित सूचनाओं को प्राप्त करना, 7. कभी-कभी विभागीय अध्यक्ष से प्राप्त शक्तियों को उनकी सीमाओं के अन्तर्गत क्रियान्वित करना।

प्रो0 व्हाइट ने स्टाफ के निम्न कार्य बतलाए हैं- 1. स्टाफ अधिकारी का कर्त्तव्य है कि आवश्यक निर्णय लेने योग्य प्रश्नों का अध्ययन करना, 2. प्रलेखों एवं रचनाओं को एकत्रित करना, 3. कार्यविधि के सम्बन्ध में योजना बनाना एवं इस सम्बन्ध में अपने प्रमुख

टाइपमशीन, लेटरपैड़, फार्म, रबर स्टाम्प बनबाना तथा प्रलेखों को छपवाना होता है। अपने-अपने विभागीय कार्य के संचालन के लिये कर्मचारियों की नियुक्ति करनी पड़ती है। सहायक क्रियाओं को सम्पन्न करने वाली इन इकाइयों को सहायक स्टाफ की श्रेणी में रखा

जाता है। जैसे- भारत सरकार का प्रेस, संघ लोक सेवा आयोग जो विभिन्न विभागों के लिए कार्मिकों की नियुक्ति का कार्य करता है, इत्यादि।

15.4.2 स्टाफ अभिकरण के कार्य

विभाग में स्टाफ अभिकरण की भूमिका अत्यन्त महत्वपूर्ण होती है। इनकी कार्यकुशलता एवं आवश्यकतानुरूप संगठनात्मक संरचना विभाग के उद्देश्य की पूर्ति में निर्णायक भूमिका होती है। अतः इनके मुख्य कार्यों पर हम दृष्टिपात करेंगे।

जे0डी0 मूने, के अनुसार स्टाफ के कार्यों को तीन भागों में बाँटा जा सकता है- 1.सूचनात्मक, 2. परामर्शदात्री तथा 3. निरीक्षणात्मक।

फिफनर ने स्टाफ के सात प्रकार के कार्यों का उल्लेख किया है- 1.मुख्य कार्यपालक को परामर्श देना, 2. सूत्र की सहायता करना, 3. मानवीय सम्पर्कों और योजनाओं के द्वारा प्रशासन में समन्वय स्थापित करना, 4. किसी भी मामले के सम्बन्ध में खोज तथा अन्वेषण करना, 5. योजनाओं का निर्माण करना, 6. अन्य दूसरे संगठनों तथा व्यक्तियों के साथ सम्पर्क करना तथा उनसे सम्बन्धित सूचनाओं को प्राप्त करना, 7. कभी-कभी विभागीय अध्यक्ष से प्राप्त शक्तियों को उनकी सीमाओं के अन्तर्गत क्रियान्वित करना।

प्रो0 व्हाइट ने स्टाफ के निम्न कार्य बतलाए हैं- 1. स्टाफ अधिकारी का कर्त्तव्य है कि आवश्यक निर्णय लेने योग्य प्रश्नों का अध्ययन करना, 2. प्रलेखों एवं रचनाओं को एकत्रित करना, 3. कार्यविधि के सम्बन्ध में योजना बनाना एवं इस सम्बन्ध में अपने प्रमुख अधिकारी को सलाह देना और जब कार्यपालक अधिकारी द्वारा निर्णय हो जाय तो उस निर्णय को दूसरे तक पहुँचाना, 4. आदेशों की व्याख्या करना तथा परिणामों का अवलोकन करना और रिपोर्ट देना। सिद्धान्ततः उसकी अपनी कोई स्वतन्त्र शक्तियाँ सत्ता प्रमुख अधिकारी से हटकर नहीं है।

15.5 सूत्र अभिकरण

संगठन के कार्यात्मक एवं प्राथमिक कार्य सूत्र अभिकरण सम्पन्न किये जाते हैं। संगठन के उद्देश्यों को प्राप्त करने एवं प्राथमिकताओं को तय करने की मुख्य उत्तरदायित्व सूत्र के ऊपर होती है। संगठन का प्राथमिक कार्य सूत्र अभिकरण द्वारा सम्पन्न किया जाता है। प्रत्येक बड़ा प्रशासनिक संगठन इकाईयों या खण्डों में बँटा होता है। सूत्र इकाईयों का सम्बन्ध नीति के निर्माण से होता है। इनके हाथों में शक्ति होती है जिसके आधार पर ये निर्णय ले सकती है तथा आज्ञायें प्रसारित कर सकते हैं।

सूत्र अभिकरणों के प्रमुख उदाहरण हैं-

15.5.1 विभाग

विभाग इकाइयों का प्रयोग सबसे अधिक किया जाता है। अधिकतर सरकारी कार्य विभाग द्वारा किया जाता है। विभाग का शाब्दिक अर्थ है, वृहद् वस्तु का लघु अंग। यह शब्द अनेक प्रकार से प्रयोग किया जाता है। प्रशासनिक ढाँचे का निर्माण, विभाग के निर्माण से आरम्भ होता है। विभाग प्रशासनिक संगठन की पहली इकाई होने के नाते यह राजनीतिक कार्यपालिका के तुरन्त नीचे होता

है तथा उसके पूरे नियन्त्रण में कार्य करता है। विभाग व विभाग के भीतर अन्य इकाइयाँ राजनीतिक कार्यपालिका के निर्देशन में कार्य करती हैं, तथा उसी के प्रति उत्तरदायी होती है। विभाग राजनीतिक कार्यपालिका द्वारा प्रदत्त सत्ता के आधार पर कार्य सम्पन्न करता है। इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि विभाग राज्य के लक्ष्य तथा कार्यपालिका के दायित्वों को सम्पन्न करने वाला महत्वपूर्ण अंग है। सामान्यतः विभाग चार प्रकार के होते है, विभागों के मध्य आकार, ढाँचा, कार्य की प्रकृति अथवा आन्तरिक सम्बन्ध के आधार पर भेद किया जा सकता है। इसी प्रकार विभागों को हम कृत्य, प्रक्रिया, व्यक्ति या स्थान के आधार पर वर्गीकरण कर सकते हैं। विलोबी के अनुसार "यह एक स्वीकृत तथ्य है कि विभागीय प्रणाली लगभग हर दृष्टि से अधिक श्रेष्ठ है।" इनकी श्रेष्ठता निम्न गुणों पर आधारित है-

1. इस प्रणाली द्वारा विभिन्न सरकारी विभाग अपने कार्यक्रमों को अधिक अच्छी तरह तैयार कर सकते हैं, तथा उन्हें सुचारू रूप से पूरा कर सकते हैं।
2. यह प्रणाली अधिकार तथा उत्तरदायित्व को पूरी तरह निश्चित करती है।
3. इस प्रणाली में संगठन, सामग्री, संयन्त्र, कर्मचारी व कार्यों के दोहरेपन को रोकने का पर्याप्त उपाय रहता है।
4. चूंकि सारा संगठन इस प्रणाली में एक ही व्यक्ति की अधीनता में काम करता है, अतः प्रशासकीय इकाइयों के आपसी झगड़े आसानी से सुलझाये जा सकते हैं।

15.5.2 लोक विभाग

प्रयोग किया जाता है। प्रशासनिक ढांचे का निर्माण, विभाग के निर्माण से आरम्भ होता है। विभाग प्रशासनिक संगठन की पहली इकाई होने के नाते यह राजनीतिक कार्यपालिका के तुरन्त नीचे होता

है तथा उसके पूरे नियन्त्रण में कार्य करता है। विभाग व विभाग के भीतर अन्य इकाइयाँ राजनीतिक कार्यपालिका के निर्देशन में कार्य करती हैं, तथा उसी के प्रति उत्तरदायी होती है। विभाग राजनीतिक कार्यपालिका द्वारा प्रदत्त सत्ता के आधार पर कार्य सम्पन्न करता है। इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि विभाग राज्य के लक्ष्य तथा कार्यपालिका के दायित्वों को सम्पन्न करने वाला महत्वपूर्ण अंग है। सामान्यतः विभाग चार प्रकार के होते है, विभागों के मध्य आकार, ढाँचा, कार्य की प्रकृति अथवा आन्तरिक सम्बन्ध के आधार पर भेद किया जा सकता है। इसी प्रकार विभागों को हम कृत्य, प्रक्रिया, व्यक्ति या स्थान के आधार पर वर्गीकरण कर सकते हैं। विलोबी के अनुसार ''यह एक स्वीकृत तथ्य है कि विभागीय प्रणाली लगभग हर दृष्टि से अधिक श्रेष्ठ है।'' इनकी श्रेष्ठता निम्न गुणों पर आधारित है-

1. इस प्रणाली द्वारा विभिन्न सरकारी विभाग अपने कार्यक्रमों को अधिक अच्छी तरह तैयार कर सकते हैं, तथा उन्हें सुचारू रूप से पूरा कर सकते हैं।
2. यह प्रणाली अधिकार तथा उत्तरदायित्व को पूरी तरह निश्चित करती है।
3. इस प्रणाली में संगठन, सामग्री, संयन्त्र, कर्मचारी व कार्यों के दोहरेपन को रोकने का पर्याप्त उपाय रहता है।
4. चूंकि सारा संगठन इस प्रणाली में एक ही व्यक्ति की अधीनता में काम करता है, अतः प्रशासकीय इकाइयों के आपसी झगड़े आसानी से सुलझाये जा सकते हैं।

15.5.2 लोक निगम

सार्वजनिक निगम अथवा लोक निगम का उदय इस शताब्दी की प्रशासनिक स्रोत की एक महत्वपूर्ण उपलब्धि है। लोक निगम सूत्र अभिकरण होते हुए भी विभागों तथा स्वतन्त्र नियामकीय आयोगों से भिन्न होता है। इसमें सार्वजनिक प्रशासन तथा व्यक्तिगत प्रशासन दोनों के गुण पाये जाते हैं तथा यह दोनों प्रशासनों के अन्तर को कम करने में पुल का काम करता है। डिमॉक, के अनुसार ''लोकनिगम वह सरकारी उद्यम है, जिसकी स्थापना किसी निश्चित व्यापार को चलाने अथवा वित्तीय उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए किसी संघीय, राज्य अथवा स्थानीय कानून के द्वारा की गई हो। अर्नेस्ट डेवीज के अनुसार ''सरकारी निगम सत्ता द्वारा निर्मित एक संयुक्त निकाय है, जिसकी शक्तियों और कार्य परिभाषित होते हैं और जो आर्थिक रूप से स्वतन्त्र होते है।''

लोक निगम की विशिष्टताऐं निम्नलिखित हैं-

1. **लोक उद्देश्य-** इनका मुख्य उद्देश्य पैसा या मुनाफा कमाना नहीं, अपितु लोक सेवा करना है। व्यापारिक पद्धति पर चलते हुए भी लोक-निगम सार्वजनिक सेवा को अपना उद्देश्य मानता है।
2. **कानून द्वारा स्थापित-** इन्हें संसद द्वारा विशेष अधिनियम के अन्तर्गत पारित किया जाता है। इससे लोक निगम का अपना अलग से वैधानिक अस्तित्व होता है।

3. **सरकारी स्वामित्व-** लोक निगम सरकारी स्वामित्व के अधीन होता है। इसमें अधिकांश या सम्पूर्ण पूंजी सरकार की लगी होती है, लेकिन औद्योगिक वित्त निगम और राज्य वित्तनिगम आदि मिश्रित स्वामित्व वाले निगम भी है।
4. **सरकारी नियंत्रण से मुक्त-** लोक निगम सरकारी विभागों की तरह सरकार के नियन्त्रण में नहीं होते हैं।
5. **वित्तीय स्वायत्तता-** लोक निगम को वित्तीय स्वायत्तता प्राप्त रहती है। राष्ट्रीय वित्त एवं बजट से पृथक वित्तीय व्यवस्था का होना इसकी स्वायत्तता को सिद्ध करता है।
6. **बोर्ड द्वारा प्रबन्धन-** लोक निगम के प्रबन्ध के लिए एक बोर्ड अथवा निकाय का गठन किया जाता है, जिसमें सरकारी व्यक्तियों के अलावा निजी क्षेत्र के भी व्यक्ति सदस्य रहते हैं।

15.5.3 स्वतंत्र नियामकीय आयोग

स्वंतंत्र नियामकीय आयोग का जन्म अमेरिका में विशिष्ट परिस्थितियों में निर्मित किया गया। बीसवीं शाताब्दी के प्रथम दशक में औद्योगिकीकरण तथा समाजवादी विचारधारा के प्रगति के फलस्वरूप राज्य के कार्यक्षेत्र का निरन्तर विस्तार होने लगा। परन्तु अमरीका का संविधान शक्तिपृथक्करण सिद्धान्त पर आधारित है, जिसमें कार्यपालिका और व्यवस्थापिका के बीच अविश्वास एवं स्पर्द्धा की भावना रहती है। इस स्थिति में वहाँ की विधायिका ने एक नया रास्ता निकाला, जिसके अन्तर्गत स्वतंत्र नियामकीय आयोग की स्थापना की गई। इन आयोगों को स्वतन्त्र इसलिए कहा जाता है, क्योंकि ये वहाँ कार्यपालिका से अपने प्रदत्त अधिकारों के क्षेत्र में पूर्णतया स्वतंत्र होते है। डिमॉक के अनुसार, स्वतन्त्र नियामक आयोग के दो प्रमुख लक्षण होते है। पहला कि वे प्रमुख कार्यकारी के

है। इससे लोक निगम का अपना अलग से वैधानिक अस्तित्व होता है।

3. **सरकारी स्वामित्व-** लोक निगम सरकारी स्वामित्व के अधीन होता है। इसमें अधिकांश या सम्पूर्ण पूंजी सरकार की लगी होती है, लेकिन औद्योगिक वित्त निगम और राज्य वित्तनिगम आदि मिश्रित स्वामित्व वाले निगम भी है।
4. **सरकारी नियंत्रण से मुक्त-** लोक निगम सरकारी विभागों की तरह सरकार के नियन्त्रण में नहीं होते हैं।
5. **वित्तीय स्वायत्तता-** लोक निगम को वित्तीय स्वायत्तता प्राप्त रहती है। राष्ट्रीय वित्त एवं बजट से पृथक वित्तीय व्यवस्था का होना इसकी स्वायत्तता को सिद्ध करता है।
6. **बोर्ड द्वारा प्रबन्धन-** लोक निगम के प्रबन्ध के लिए एक बोर्ड अथवा निकाय का गठन किया जाता है, जिसमें सरकारी व्यक्तियों के अलावा निजी क्षेत्र के भी व्यक्ति सदस्य रहते हैं।

15.5.3 स्वतंत्र नियामकीय आयोग

स्वंतत्र नियामकीय आयोग का जन्म अमेरिका में विशिष्ट परिस्थितियों में निर्मित किया गया। बीसवीं शाताब्दी के प्रथम दशक में औद्योगिकीकरण तथा समाजवादी विचारधारा के प्रगति के फलस्वरूप राज्य के कार्यक्षेत्र का निरन्तर विस्तार होने लगा। परन्तु अमरीका का संविधान शक्तिपृथक्करण सिद्धान्त पर आधारित है, जिसमें कार्यपालिका और व्यवस्थापिका के बीच अविश्वास एवं स्पर्द्धा की भावना रहती है। इस स्थिति में वहाँ की विधायिका ने एक नया रास्ता निकाला, जिसके अन्तर्गत स्वतंत्र नियामकीय आयोग की स्थापना की गई। इन आयोगों को स्वतन्त्र इसलिए कहा जाता है, क्योंकि ये वहाँ कार्यपालिका से अपने प्रदत्त अधिकारों के क्षेत्र में पूर्णतया स्वतंत्र होते है। डिमॉक के अनुसार, स्वतन्त्र नियामक आयोग के दो प्रमुख लक्षण होते है। पहला कि वे प्रमुख कार्यकारी के नियन्त्रण से मुक्त रहते हैं। ये अपने कार्यों के लिए राष्ट्रपति के प्रति उत्तरदायी नहीं होते तथा उन्हें कभी प्रतिवेदन भी नहीं भेजते। दूसरा इनके कार्य, प्रशासनिक, अर्ध-विधायी एवं अर्धन्यायिक हैं। इनको शासन की ''चौथी शाखा'' भी कहा जाता है।

15.6 स्टाफ तथा सूत्र के पारस्परिक संबंध

औपचारिक एवं पारम्परागत दृष्टि से निर्णयन एवं प्राथमिकता तय करना सूत्र का एकाधिकार माना जाता है, परन्तु व्यावहारिक रूप से यह देखने को मिलता है, कि स्टाफ सूत्र के क्षेत्रों में हस्तक्षेप करने लगे हैं। प्रायः हम देख रहे हैं कि सम्बन्धों में सुधार की जगह आपसी वैमनस्य एवं कटुता बढ़ती जा रही है। इनमें आपस में प्रतिद्वंदता चलती रहती है। इसलिए डिमॉक तथा कोईंग ने कहा है कि सूत्र तथा स्टाफ में समायोजन करना आज कठिनतम समस्या बनती जा रही है। कई ऐसी स्थितियाँ उत्पन्न होती हैं, जब स्टाफ सूत्र को आवश्यक जानकारी समय से उपलब्ध नहीं करते तथा तथ्यों के संग्रह में जानबूझ कर लापरवाही बरतते हैं, जिसका खामियाजा सूत्र अभिकरण चलाने वाले अधिकारियों को भरना पड़ता है। कई परिस्थितियाँ ऐसी भी उत्पन्न होती हैं जब सूत्र अधिकारी अपने अधिकार क्षेत्र से बाहर जा कर स्टाफ अधिकरियों को नीचा दिखाने का प्रयत्न करते हैं। इन प्रवृत्तियों से संगठन में सामंजस्य स्थापित करने की नई चुनौतियों उत्पन्न हो जाती हैं, जिससे संगठन की कार्यकुशलता पर

प्रतिकूल असर पड़ता है। इन समस्याओं के समाधान के लिए दो उपाय बताए जाते हैं प्रथम, दोनों प्रकार के अधिकारियों द्वारा अपने कार्यक्षेत्र में मर्यादा को समझना और सामूहिक हित की भावना को सर्वोपरि स्थान देना। द्वितीय सूत्र एवं स्टाफ अधिकारियों के पदों का परस्परिक विनिमय और स्थानान्तरण है, जिससे उन्हें एक दूसरे की समस्याएं और कठिनाइयां मालूम होती रहें। यह पद्धति अमेरिका के कई बड़े निगमों में विशेषतः अमेरिकी टेलीफोन कम्पनियों में बरती जाती है।

15.7 स्टाफ अभिकरण के उदाहरण

स्टाफ अभिकरण के उदाहरणों को निम्न बिन्दुओं के माध्यम से समझने का प्रयास करते हैं।

15.7.1 भारत में स्टाफ अभिकरण

1. **प्रधानमंत्री कार्यालय-** प्रधानमंत्री कार्यालय की स्थापना 15 अगस्त, 1947 को स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद की गई। इस सचिवालय का निर्माण उन समस्त कार्यों का सम्पादन करने के उद्देश्य से किया गया, जिन्हें 15 अगस्त 1947 से पूर्व गवर्नर जनरल के सचिव द्वारा किया जाता था। इस सचिवालय का प्रधान कार्य प्रधानमंत्री को सब मामलों में आवश्यक सचिवीय सहायता और परामर्श देना है और इसके साथ ही-
    - संसद के कार्य संचालन के नियमों के अन्तर्गत प्रधानमंत्री के सम्मुख प्रस्तुत किये जाने वाले सभी प्रश्नों पर आवश्यक सामग्री और परामर्श उपलब्ध कराना।
    - शासन के कार्यकारी अध्यक्ष के रूप में विभिन्न मन्त्रालयों और राज्य सरकारों के साथ सम्बन्ध स्थापित करने और अपना उत्तरदायित्व पूरा करने में सहयोग देना।

प्रतिकूल असर पड़ता है। इन समस्याओं के समाधान के लिए दो उपाय बताए जाते हैं प्रथम, दोनों प्रकार के अधिकारियों द्वारा अपने कार्यक्षेत्र में मर्यादा को समझना और सामूहिक हित की भावना को सर्वोपरि स्थान देना। द्वितीय सूत्र एवं स्टाफ अधिकारियों के पदों का परस्परिक विनिमय और स्थानान्तरण है, जिससे उन्हें एक दूसरे की समस्याएं और कठिनाइयां मालूम होती रहें। यह पद्धति अमेरिका के कई बड़े निगमों में विशेषतः अमेरिकी टेलीफोन कम्पनियों में बरती जाती है।

15.7 स्टाफ अभिकरण के उदाहरण

स्टाफ अभिकरण के उदाहरणों को निम्न बिन्दुओं के माध्यम से समझने का प्रयास करते हैं।

15.7.1 भारत में स्टाफ अभिकरण

1. **प्रधानमंत्री कार्यालय-** प्रधानमंत्री कार्यालय की स्थापना 15 अगस्त, 1947 को स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद की गई। इस सचिवालय का निर्माण उन समस्त कार्यों का सम्पादन करने के उद्देश्य से किया गया, जिन्हें 15 अगस्त 1947 से पूर्व गवर्नर जनरल के सचिव द्वारा किया जाता था। इस सचिवालय का प्रधान कार्य प्रधानमंत्री को सब मामलों में आवश्यक सचिवीय सहायता और परामर्श देना है और इसके साथ ही-
    - संसद के कार्य संचालन के नियमों के अन्तर्गत प्रधानमंत्री के सम्मुख प्रस्तुत किये जाने वाले सभी प्रश्नों पर आवश्यक सामग्री और परामर्श उपलब्ध कराना।
    - शासन के कार्यकारी अध्यक्ष के रूप में विभिन्न मन्त्रालयों और राज्य सरकारों के साथ सम्बन्ध स्थापित करने और अपना उत्तरदायित्व पूरा करने में सहयोग देना।
    - प्रेस और जनता के प्रतिवेदनों को प्रधानमंत्री के संज्ञान में ले जाना।
2. **मन्त्रिमण्डल सचिवालय-** इसकी स्थापना अगस्त 1947 में गवर्नर जनरल की कार्यकारिणी परिषद के स्थान पर की गई थी। यह मन्त्रिमण्डल और साथ ही मन्त्रिमण्डल की लगभग एक दर्जन स्थायी समितियों के कार्यों की देखभाल करता है। यह मन्त्रिमंडल की बैठकों का एजेंट एवं ब्यौरा तैयार करता है। मन्त्रिमण्डल सचिवालय का अध्यक्ष कैबिनेट सचिव होता है। उसकी सलाह के लिए एक सलाहकारों की पूरी श्रखला होती है, जिनमें विज्ञान सलाहकार, ऊर्जा, सलाहकार, संस्कृति और विरासत सलाहकार, सुरक्षा सलाहकार तकनीकि मिशन सलाहकार जैसे उच्च स्तरीय पदाधिकारी है। प्रधानमंत्री को विशिष्ट सलाह देने के अलावा इस सचिवालय के अधिकारी मन्त्रिमण्डल द्वारा गठित विभिन्न स्थायी समितियों की भी मदद करते हैं। फिलहाल इस प्रकार की छः समितियां है- राजनीतिक आर्थिक, व्यय, निर्यात, समायोजन एवं संचरना से सम्बन्धित। एक प्रकार से ये सचिवालय मुख्य कार्यपालिका का केन्द्रबिन्दु है, जिसके अन्तर्गत सम्पूर्ण भारत की प्रशासनिक प्रक्रिया इससे होकर गुजरती है।
3. **योजना आयोग-** इसे 1950 में भारत सरकार के एक प्रस्ताव द्वारा स्थापित किया गया। यह देश की वर्तमान एवं दीर्घकालीन उद्देश्यों हेतु योजनाओं को मूर्तरूप देता है। यह प्रणाली

रूस में स्टैलिन द्वारा बनाई गई प्रणाली एवं तद्पश्चात रूस के विकास को देखते हुए रचित की गई। इस आयोग का अध्यक्ष प्रधानमंत्री होता है। इसके उपाध्यक्ष को कैबिनेट स्तर मंत्री का दर्जा प्राप्त होता है। यह आयोग देश के लिए पंचवर्षीय योजनाएँ तैयार करता है। समय-समय पर विकास के प्रतिमानों को निर्धारित करना इस विभाग का कार्य है। यह विभाग राज्यों की वार्षिक योजनाऐं तथा उनके लिए आवश्यक पूँजी पर भी विचार करता है।

4. **राष्ट्रीय विकास परिषद-** भारत में संविधान द्वारा संघ प्रणाली की स्थापना की गयी है। अतः केन्द्र सरकारों को सरकारों पर पंचवर्षीय योजनाओं को बिना उनकी इच्छा के लादने का अधिकार नहीं है, अगर राज्यों को यह प्रतीत होता है कि पंचवर्षीय योजनाएँ उनकी आवश्यकता के अनुकूल नहीं है तो वे उसे अस्वीकार्य कर सकते हैं। ऐसी स्थिति में राज्यों का सहयोग हासिल करने के लिए राष्ट्रीय विकास परिषद की स्थापना की गई है। प्रधानमंत्री इसका अध्यक्ष एवं राज्य के मुख्यमंत्री इसके सदस्य होते हैं। इस व्यवस्था के अंतर्गत राज्य एवं केन्द्र सरकार में योजनाओं के उद्देश्यों एवं क्रियान्वियन पर आम सहमति बनाने में सहायता मिलती है।
5. **संघ लोक सेवा आयोग-** संघ लोक सेवा आयोग केन्द्र की सेवाओं में नियुक्ति के लिए परीक्षाओं का संचालन करता है। वह भारतीय संविधान की धारा 320 के अनुपालन में बनाया गया है। यह प्रधानमंत्री और सरकार को सरकारी कर्मचारियों की भर्ती तथा नियुक्ति के सम्बन्ध में सभी प्रकार के विषयों में आवश्यक परामर्श देता है।

15.7.2 ब्रिटेन में स्टाफ अभिकरण

ब्रिटेन में प्रधानमंत्री की सहायता के लिए निम्न स्टाफ अभिकरण विशेष रूप से उल्लेखनीय है।

1. **मन्त्रिमण्डलीय सचिवालय-** ब्रिटेन में मन्त्रिमण्डलीय सचिवालय की स्थापना प्रथम

सचिव होता है। उसकी सलाह के लिए एक सलाहकारों की पूरी श्रखला होती है, जिनमें विज्ञान सलाहकार, ऊर्जा, सलाहकार, संस्कृति और विरासत सलाहकार, सुरक्षा सलाहकार तकनीकि मिशन सलाहकार जैसे उच्च स्तरीय पदाधिकारी है। प्रधानमंत्री को विशिष्ट सलाह देने के अलावा इस सचिवालय के अधिकारी मन्त्रिमण्डल द्वारा गठित विभिन्न स्थायी समितियों की भी मदद करते हैं। फिलहाल इस प्रकार की छः समितियां है- राजनीतिक आर्थिक, व्यय, निर्यात, समायोजन एवं संचरना से सम्बन्धित। एक प्रकार से ये सचिवालय मुख्य कार्यपालिका का केन्द्रबिन्दु है, जिसके अन्तर्गत सम्पूर्ण भारत की प्रशासनिक प्रक्रिया इससे होकर गुजरती है।

3. **योजना आयोग-** इसे 1950 में भारत सरकार के एक प्रस्ताव द्वारा स्थापित किया गया। यह देश की वर्तमान एवं दीर्घकालीन उद्देश्यों हेतु योजनाओं को मूर्तरूप देता है। यह प्रणाली

रूस में स्टैलिन द्वारा बनाई गई प्रणाली एवं तद्पश्चात रूस के विकास को देखते हुए रचित की गई। इस आयोग का अध्यक्ष प्रधानमंत्री होता है। इसके उपाध्यक्ष को कैबिनेट स्तर मंत्री का दर्जा प्राप्त होता है। यह आयोग देश के लिए पंचवर्षीय योजनाएँ तैयार करता है। समय-समय पर विकास के प्रतिमानों को निर्धारित करना इस विभाग का कार्य है। यह विभाग राज्यों की वार्षिक योजनाऐं तथा उनके लिए आवश्यक पूँजी पर भी विचार करता है।

4. **राष्ट्रीय विकास परिषद-** भारत में संविधान द्वारा संघ प्रणाली की स्थापना की गयी है। अतः केन्द्र सरकारों को सरकारों पर पंचवर्षीय योजनाओं को बिना उनकी इच्छा के लादने का अधिकार नहीं है, अगर राज्यों को यह प्रतीत होता है कि पंचवर्षीय योजनाएँ उनकी आवश्यकता के अनुकूल नहीं है तो वे उसे अस्वीकार्य कर सकते हैं। ऐसी स्थिति में राज्यों का सहयोग हासिल करने के लिए राष्ट्रीय विकास परिषद की स्थापना की गई है। प्रधानमंत्री इसका अध्यक्ष एवं राज्य के मुख्यमंत्री इसके सदस्य होते हैं। इस व्यवस्था के अंतर्गत राज्य एवं केन्द्र सरकार में योजनाओं के उद्देश्यों एवं क्रियान्वियन पर आम सहमति बनाने में सहायता मिलती है।
5. **संघ लोक सेवा आयोग-** संघ लोक सेवा आयोग केन्द्र की सेवाओं में नियुक्ति के लिए परीक्षाओं का संचालन करता है। वह भारतीय संविधान की धारा 320 के अनुपालन में बनाया गया है। यह प्रधानमंत्री और सरकार को सरकारी कर्मचारियों की भर्ती तथा नियुक्ति के सम्बन्ध में सभी प्रकार के विषयों में आवश्यक परामर्श देता है।

15.7.2 ब्रिटेन में स्टाफ अभिकरण

ब्रिटेन में प्रधानमंत्री की सहायता के लिए निम्न स्टाफ अभिकरण विशेष रूप से उल्लेखनीय है।

1. **मन्त्रिमण्डलीय सचिवालय-** ब्रिटेन में मन्त्रिमण्डलीय सचिवालय की स्थापना प्रथम विश्वयुद्ध (1916) के कारण उत्पन्न कार्यभार के लिए की गयी थी। इसका महत्व बढ़ता गया और यह शासन का अपरिहार्य अंग बन गया।

   यह सचिवालय मन्त्रिमण्डल तथा मन्त्रिमण्डलीय समितियों के लिए आवश्यक सचिवीय कार्य करने के अतिरिक्त मन्त्रिमण्डल के सम्मुख विचारणीय विषयों के लिए आवश्यक सामग्री के एकत्रित और उसकी खोजबीन करने तथा विभागों में समन्वय तथा ताल-मेल बैठाने का कार्य करता है। यह मन्त्रिमण्डल में होने वाली सभी बैठकों का पूरा विवरण और लिए गए निर्णयों का रिकार्ड रखता है। इस प्रकार यह मन्त्रिमण्डल के पिछले अनुभव के आधार पर प्रशासन की समस्याओं पर व्यापक तथा विशाल दृष्टि से देखने में तथा इसका समाधान करने में सहायता करता है। अंत में यह कह सकते हैं कि यह अभिलेख रखने का निकाय है और मन्त्रिमण्डल की स्मृति के रूप में काम करता है।
2. **कोष विभाग-** ब्रिटिश कोष विभाग भी एक स्टाफ अभिकरण है। पूर्व में यह राजस्व एवं राजकीय करों के संग्रह करने, कर लगाने और वित्तीय नियन्त्रण करने के साथ सभी राजकीय कर्मचारियों की नियुक्ति नियन्त्रण और देखभाल का भी पूरा कार्य किया करता था।

उन दिनों कोष विभाग का स्थायी सचिव सिविल सर्विस का अध्यक्ष हुआ करता था। सन 1968 के बाद सरकारी कर्मचारियों की नियुक्ति से सम्बन्धित कार्य सिविल सर्विस विभाग को दे दिए गए है। वर्तमान में सरकारी कर्मचारियों के वेतन तथा उनके कार्य के मूल्यांकन आदि कार्य कोष विभाग के पास है।

3. **मन्त्रिपरिषद समितियाँ-** मन्त्रियों के कार्यभार को कुछ कम करने के लिए मन्त्रिमण्डलीय समितियों का विकास हुआ। इन समितियों के मन्त्री ही सदस्य होते हैं, लेकिन इनमें से कुछ समितियों में गैर-मन्त्रिमण्डलीय मन्त्री, लोक सेवा के सदस्य, विभागाध्यक्ष आदि भी शामिल होते है। ये समितियाँ मन्त्रिपरिषद को नीतियों के निर्माण में सहायक होती हैं, विभाग के मतभेदों तथा परेशानियों को दूर करती हैं तथा मन्त्रिपरिषद के कार्यों का एकीकरण करती हैं।

निकाय है और मन्त्रिमण्डल की स्मृति के रूप में काम करता है।

2. **कोष विभाग-** ब्रिटिश कोष विभाग भी एक स्टाफ अभिकरण है। पूर्व में यह राजस्व एवं राजकीय करों के संग्रह करने, कर लगाने और वित्तीय नियन्त्रण करने के साथ सभी राजकीय कर्मचारियों की नियुक्ति नियन्त्रण और देखभाल का भी पूरा कार्य किया करता था।

उन दिनों कोष विभाग का स्थायी सचिव सिविल सर्विस का अध्यक्ष हुआ करता था। सन 1968 के बाद सरकारी कर्मचारियों की नियुक्ति से सम्बन्धित कार्य सिविल सर्विस विभाग को दे दिए गए है। वर्तमान में सरकारी कर्मचारियों के वेतन तथा उनके कार्य के मूल्यांकन आदि कार्य कोष विभाग के पास है।

3. **मन्त्रिपरिषद समितियाँ-** मन्त्रियों के कार्यभार को कुछ कम करने के लिए मन्त्रिमण्डलीय समितियों का विकास हुआ। इन समितियों के मन्त्री ही सदस्य होते हैं, लेकिन इनमें से कुछ समितियों में गैर-मन्त्रिमण्डलीय मन्त्री, लोक सेवा के सदस्य, विभागाध्यक्ष आदि भी शामिल होते है। ये समितियाँ मन्त्रिपरिषद को नीतियों के निर्माण में सहायक होती हैं, विभाग के मतभेदों तथा परेशानियों को दूर करती हैं तथा मन्त्रिपरिषद के कार्यों का एकीकरण करती हैं।

   मन्त्रीपरिषद समितियां दो प्रकार की होती हैं- स्थायी समितियां तथा तदर्थ समितियां। इनके कारण मन्त्रिमण्डल का कार्य बहुत हल्का हो जाता है। अब छोटी-छोटी समस्याओं पर विभिन्न समितियों की बैठको में पूरा विचार हो जाता है।

15.7.3 संयुक्त राज्य अमेरिका में स्टाफ अभिकरण

सन 1857 से पहले संयुक्त राज्य अमेरिका के राष्ट्रपति को अपना कार्य स्वयं ही करना पड़ता था। 1857 में उसके लिए एक निजी सचिव, एक भण्डारी तथा एक सन्देशवाहक की नियुक्ति की गयी थी। 1937 में नियुक्त राष्ट्रपति की प्रशासनिक प्रबन्ध की समिति ने सिफारिश की कि राष्ट्रपति के स्टाफ में ऐसे लोगों को होना चाहिए जो उसके सामने प्रस्तुत की जाने वाली समस्याओं में उसे आवश्यक सामग्री को संकलन करके उसको समुचित परामर्श दे सके।

1959 के पुर्नव्यवस्था के कानून में कांग्रेस ने राष्ट्रपति के कार्यकारी कार्यालय की व्यवस्था की जो निम्न प्रकार है-

1. **व्हाइट हाउस कार्यालय-** व्हाइट हाउस कार्यालय में राष्ट्रपति का सम्पूर्ण क्षेत्र आ जाता है। इसमें अनेक सहायक और सचिव कार्य करते है। इनकी नियुक्ति स्वयं राष्ट्रपति करता है। व्हाइट हाउस में राष्ट्रपति का सचिव, वैयक्तिक सचिव, कानूनी परामर्शदाता, आर्थिक परामर्शदाता आदि जो प्रशासनिक कार्यों के विशेषज्ञ होते हैं। ये राष्ट्रपति के सामने आने वाली समस्याओं पर विचार कर उसे तत्सम्बन्धी सलाह देते हैं। राष्ट्रपति तथा अन्य विभागों के बीच यह कार्यालय आवश्यक कड़ी का कार्य करता है।
2. **ऑफिस ऑफ मनैजमेंट एण्ड बजट-** 1921 में स्थापित बजट ब्यूरो का स्थान अब ऑफिस ऑफ मनैजमेंट एण्ड बजट ने ले लिया। बार्षिक बजट तैयार करने तथा उसके निष्पादन में राष्ट्रपति को सहायता देना इस कार्यालय का प्रमुख कर्त्तव्य है। इसके अन्य कार्य हैं, सरकार के वित्तीय कार्यों में राष्ट्रपति की सहायता करना, निष्पादक अभिकरणों को परामर्श देना, सरकारी सेवाओं के संचालन में क्षमता तथा मितव्ययिता लाने के सुझाव देना, विभिन्न निष्पादक विभागों में समन्वय स्थापित करना।

3. **अन्य संगठन-** राष्ट्रपति को मन्त्रणां एवं सहायता देने के लिए कुछ अन्य कार्यालय अभिकरण भी है- जैसे ऑफिस ऑफ पालिसी डेवलपमेंट, ऑफिस एण्ड एडमिनिस्ट्रेशन, ऑफिस ऑफ साइंस एण्ड टेक्नोलॉजी पॉलिसी आदि। संक्षेप में यह संगठन राष्ट्रपति की कार्यकारी भुजाओं के रूप में कार्य करते हैं।

अभ्यास प्रश्न-

1. व्हाइट हाउस किस देश में है?
2. स्टाफ और सूत्र में प्रतिद्वन्दिता बिल्कुल नहीं रहती है। सत्य/असत्य

15.8 सारांश

सूत्र एवं स्टाफ शब्द सैनिक संगठन में प्रयुक्त शब्दावली से लिए गए है। ये दोनों संगठन की कार्यकारी रचना एवं संगठनात्मक उद्देश्यों के आधार पर प्रयुक्त होते हैं। किसी अभिकरण के अनेक सम्भागों अथवा इकाइयों द्वारा सम्पादित क्रियाओं का लक्ष्य विभाग के उद्देश्यों को प्राप्त करना होता है। इस प्रकार की सभी सेवाओं को सूत्र सेवाओं के नाम से जाना जाता है।

उनके अतिरिक्त प्रत्येक बड़े आकार के विभाग अथवा अभिकरण में कुछ सेवाएं ऐसी भी होती हैं, जिनका सम्बन्ध संस्था मूलक अथवा गृहसम्बन्धी क्रियाओं के साथ होता है। इस प्रकार को क्रियाओं के अन्तर्गत वे समस्त कार्य आते हैं जो विभाग के अस्तित्व के अनुरक्षण के लिए आवश्यक माने जाते हैं। संगठन के क्षेत्र में प्रयुक्त प्राविधिक शब्दावली में सूत्र अभिकरणों को

192

3. **अन्य संगठन-** राष्ट्रपति को मन्त्रणां एवं सहायता देने के लिए कुछ अन्य कार्यालय अभिकरण भी है- जैसे ऑफिस ऑफ पालिसी डेवलपमेंट, ऑफिस एण्ड एडमिनिस्ट्रेशन, ऑफिस ऑफ साइंस एण्ड टेक्नोलॉजी पॉलिसी आदि। संक्षेप में यह संगठन राष्ट्रपति की कार्यकारी भुजाओं के रूप में कार्य करते हैं।

अभ्यास प्रश्न-

1. व्हाइट हाउस किस देश में है?
2. स्टाफ और सूत्र में प्रतिद्वन्दिता बिल्कुल नहीं रहती है। सत्य/असत्य

15.8 सारांश

सूत्र एवं स्टाफ शब्द सैनिक संगठन में प्रयुक्त शब्दावली से लिए गए है। ये दोनों संगठन की कार्यकारी रचना एवं संगठनात्मक उद्देश्यों के आधार पर प्रयुक्त होते हैं। किसी अभिकरण के अनेक सम्भागों अथवा इकाइयों द्वारा सम्पादित क्रियाओं का लक्ष्य विभाग के उद्देश्यों को प्राप्त करना होता है। इस प्रकार की सभी सेवाओं को सूत्र सेवाओं के नाम से जाना जाता है।

उनके अतिरिक्त प्रत्येक बड़े आकार के विभाग अथवा अभिकरण में कुछ सेवाएं ऐसी भी होती हैं, जिनका सम्बन्ध संस्था मूलक अथवा गृहसम्बन्धी क्रियाओं के साथ होता है। इस प्रकार को क्रियाओं के अन्तर्गत वे समस्त कार्य आते हैं जो विभाग के अस्तित्व के अनुरक्षण के लिए आवश्यक माने जाते हैं। संगठन के क्षेत्र में प्रयुक्त प्राविधिक शब्दावली में सूत्र अभिकरणों को परिभाषित करते हुए यह कहा जा सकता है कि उनका मुख्य उद्देश्य उन कार्यों को सम्पादित करना हैं जिनकी अपेक्षा संगठन से की जाती है, जबकि स्टाफ अभिकरणों का मुख्य कार्य प्रबन्धकीय अथवा गृह सम्बन्धी क्रियाओं को निष्पादित करना है, जिनके माध्यम से संगठन अपनी लक्ष्य की प्राप्ति के लिये क्षमता विकसित करता है। सूत्र का मुख्य कार्य, उद्देश्यों को तय करना एवं निर्णयन हैं। उदाहरण के लिए विभाग, लोक निगम एवं स्वतंत्र नियामकीय आयोग। स्टाफ का उद्देश्य नियोजन में मदद करना, परामर्श देना एवं फाइलों का संकलन करना है।

15.12 शब्दावली

शक्ति प्रथक्करण- शक्ति का बंटवारा।

व्यवस्थापिका- विधान सभा या व्यवस्था देने वाली संस्था।

पर्यवेक्षण- बराबर यह देखते रहना कि कोई काम ठीक तरह से चल रहा है या नहीं।

15.13 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1.संयुक्त राज्य अमेरिका, 2. असत्य

15.14 संदर्भ ग्रन्थ-सूची

1. फड़िया, बी०एल० (1999): लोकप्रशासन, साहित्य भवन पब्लिकेशन, आगरा।
2. दुबे आर०के० (1992): आधुनिक लोक प्रशासन, लक्ष्मी नारायण अग्रवाल, आगरा।
3. सिंहल, एस०सी० (2002): लोकप्रशासन के तत्व, लक्ष्मी नारायण अग्रवाल, आगरा।

193

15.15 सहायक /उपयोगी पाठ्य सामग्री

1. बासु, रूम्की, पब्लिक एडमिनिस्ट्रेशन (1990): कान्सेप्ट एण्ड थीयरी, स्टर्लिंग पब्लिशर्स।
2. अवस्थी, ए० एवं महेश्वरी, एस० (1991): पब्लिक एडमिनिस्ट्रेशन, लक्ष्मी नारायण अग्रवाल, आगरा।

15.16 निबंधात्मक प्रश्न

1. लाइन और स्टाफ से आप क्या समझते हैं? उदाहरण के साथ प्रकाश डालिए।
2. स्टाफ अभिकरण का अर्थ स्पष्ट कीजिए? संगठन के कार्यों की दृष्टि से इनका क्या महत्व है।
3. सूत्र अभिकरण से क्या अभिप्राय है? इनके कार्यों की समीक्षा कीजिए।
4. भारत में स्टाफ अभिकरणों के स्वरूप पर निबंध लिखिए।

इकाई- 19 नेतृत्व तथा निर्णयन

इकाई की संरचना

19.1 प्रस्तावना
19.2 उद्देश्य
19.3 नेतृत्व की अवधारणा
    19.3.1 प्राचीन अवधारणा
    19.3.2 विशेषक अवधारणा
    19.3.3 समूह अवधारणा
    19.4.4 परिस्थितिकी अवधारणा
19.4 नेतृत्व की शैलियां
    19.4.1 एकतंत्रीय शैली
    19.4.2 सहभागिता नेतृत्व
    19.4.3 हस्तक्षेप रहित नेतृत्व
19.5 नीति निर्धारण
19.6 निर्णयन
19.7 सारांश
19.8 शब्दावली
19.9 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
19.10 सदर्भ ग्रन्थ-सूची
19.11 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री
19.12 निबंधात्मक प्रश्न

19.1 प्रस्तावना

किसी भी प्रशासनिक संगठन की सफलता उसके अन्तिम कार्य निष्पादन पर पूर्ण रूप से निर्भर करती है। अन्तिम निष्पादन प्रभावी एवं सुव्यवस्थित हो इसे हेतु, एक प्रशासनिक संगठन को कुशल नेतृत्व, प्रभावी नीति एवं समयबद्ध निर्णयन की आवश्यक होती है। राज्य की लोक कल्याणकारी अवधारणा के निरूपण के पश्चात् उपरोक्त तीनों ही अवधारणाओं का विस्तृत अध्ययन लोक प्रशासन के छात्रों के लिये महत्वपूर्ण हो गया है। प्रस्तुत इकाई में हम इन तीनों ही अवधारणाओं को प्रभावी एवं क्रमबद्ध ढंग से विश्लेषित करने का प्रयास करेंगे।

19.2 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के उपरान्त आप-

- नेतृत्व की अवधारणा को विस्तार से समझ पायेंगे।
- नीति निर्धारण सम्बन्धी अवधारणा को स्पष्ट कर पायेंगे।

- निर्णयन के विभिन्न दृष्टिकोणों को आत्मसात कर पायेंगे।

19.3 नेतृत्व की अवधारणा

लोक सेवा के क्षेत्र में सबसे महत्वपूर्ण कार्य, किसी समूह, संगठन या संस्था के समूचे कार्य को वांछित उद्देश्यों की ओर संचालित और निर्देशित करने के लिए नेतृत्व प्रदान करना है। सरकारी तंत्र के अंतर्गत संगठनों के फैलाव, दिनों-दिन बढ़ती संख्या के कारण नेतृत्व और भी अधिक महत्वपूर्ण हो गया है। नेतृत्व का तात्पर्य प्रबन्धकों के उस व्यावहारिक गुण से है, जिसके द्वारा वें अपने अधीनस्थों को प्रभावित करके उनके विश्वास को जीतने का प्रयास करते हैं, उनका स्वाभिमान जागृत करते हैं, उनका सहयोग प्राप्त करते हैं तथा अपने अधीनस्थ-समुदाय को संगठित करके पूर्व निर्धारित उद्देश्यों के प्रति उनका मार्ग-दर्शन करते हैं। सामान्य अर्थ में नेतृत्व से अभिप्राय किसी व्यक्ति विशेष के उस चातुर्य या कौशल से है, जिसके द्वारा वह अन्य व्यक्तियों को अपना अनुयायी बना लेता है तथा उनसे अपनी इच्छा के अनुरूप सहर्ष कार्य भी सम्पन्न कराने में सफल हो जाता है।

भारत में अधिकांश, सामाजिक तथा प्रशासनिक संगठनों में कुशल नेतृत्व की समस्या निरन्तर विद्यमान रही है। यही करण है कि सैद्धान्तिक दृष्टि से श्रेष्ठतम नीतियों एवं कार्यक्रम निरूपित करने के उपरान्त भी हमारे प्रशासनिक संगठन क्रियान्वयन के स्तर पर प्रायः असफलत सिद्ध हुए है, क्योकि प्रभावी नेतृत्व का अभाव रहा है। राज्य की लोक कल्याणकारी अवधारणा के प्रचार-प्रसार के बाद तो नेतृत्व की आवश्यकता निरन्तर बढ़ती जा रही है। यदि आज किसी संगठन को प्रभावी एवं सफल बनाना है, तो कुशल एवं योग्य नेतृत्व की आवश्यकता अनिवार्य है। नेतृत्व की अनिवार्यता के

19.2 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के उपरान्त आप-

- नेतृत्व की अवधारणा को विस्तार से समझ पायेंगे।
- नीति निर्धारण सम्बन्धी अवधारणा को स्पष्ट कर पायेंगे।

- निर्णयन के विभिन्न दृष्टिकोणों को आत्मसात कर पायेंगे।

19.3 नेतृत्व की अवधारणा

लोक सेवा के क्षेत्र में सबसे महत्वपूर्ण कार्य, किसी समूह, संगठन या संस्था के समूचे कार्य को वांछित उद्देश्यों की ओर संचालित और निर्देशित करने के लिए नेतृत्व प्रदान करना है। सरकारी तंत्र के अंतर्गत संगठनों के फैलाव, दिनों-दिन बढ़ती संख्या के कारण नेतृत्व और भी अधिक महत्वपूर्ण हो गया है। नेतृत्व का तात्पर्य प्रबन्धकों के उस व्यावहारिक गुण से है, जिसके द्वारा वें अपने अधीनस्थों को प्रभावित करके उनके विश्वास को जीतने का प्रयास करते हैं, उनका स्वाभिमान जागृत करते हैं, उनका सहयोग प्राप्त करते हैं तथा अपने अधीनस्थ-समुदाय को संगठित करके पूर्व निर्धारित उद्देश्यों के प्रति उनका मार्ग-दर्शन करते हैं। सामान्य अर्थ में नेतृत्व से अभिप्राय किसी व्यक्ति विशेष के उस चातुर्य या कौशल से है, जिसके द्वारा वह अन्य व्यक्तियों को अपना अनुयायी बना लेता है तथा उनसे अपनी इच्छा के अनुरूप सहर्ष कार्य भी सम्पन्न कराने में सफल हो जाता है।

भारत में अधिकांश, सामाजिक तथा प्रशासनिक संगठनों में कुशल नेतृत्व की समस्या निरन्तर विद्यमान रही है। यही करण है कि सैद्धान्तिक दृष्टि से श्रेष्ठतम नीतियों एवं कार्यक्रम निरूपित करने के उपरान्त भी हमारे प्रशासनिक संगठन क्रियान्वयन के स्तर पर प्रायः असफलत सिद्ध हुए है, क्योकि प्रभावी नेतृत्व का अभाव रहा है। राज्य की लोक कल्याणकारी अवधारणा के प्रचार-प्रसार के बाद तो नेतृत्व की आवश्यकता निरन्तर बढ़ती जा रही है। यदि आज किसी संगठन को प्रभावी एवं सफल बनाना है, तो कुशल एवं योग्य नेतृत्व की आवश्यकता अनिवार्य है। नेतृत्व की अनिवार्यता के सम्बन्ध में सैक्लर हडसन ने ठीक ही कहा है, नेतागिरी की समस्याओं का असाधारण महत्व आकार, जटिलता, विशेषीकरण संगठनात्मक तकनीकी विकास तत्वों की वृद्धि के साथ बढ़ गया है। विद्वानों के अनुसार नेतृत्व की निम्नलिखित अवधारणाओं का विश्लेषण छात्रों के लिये अत्यन्त उपयोगी होगा। आइये इसे क्रमशः समझने का प्रयास करें-

19.3.1 प्राचीन अवधारणा

नेतृत्व की प्राचीन अब धारणा के अनुसार नेता अपने प्रभावशाली व्यक्तित्व द्वारा अपने अनुययियों से अपनी इच्छा के अनुसार काम कराने में समर्थ होता है। वह अन्य लोगों पर स्वचालित विधि के द्वारा अधिकार रखता है।

19.3.2 विशेषक अवधारणा

नेतृत्व की इस अवधारणा के अनुसार प्राय नेतृत्व संबंधी अध्ययन नेताओं के गुणों पर ही केन्द्रित रहे। किन्तु एक प्रश्न सदैव से ही अनुउत्तरित रहा है कि कौन से स्थायी गुण व्यक्ति को नेता बनाते हैं। विद्वानों के अनुसार, नेताओं के पास कुछ जन्मजात विशेष अनुवंशिक गुण, चारित्रिक विशेषताएँ, और कुछ प्राकृतिक योग्यताएँ होती हैं, जिनके कारण वे नेता बन पाते है। अतः एक सफल नेता के प्रमुख विशेषक हैं, प्रतिभा, सामजिक परिपक्वता, आंतरिक अभिप्रेरणा उपलब्धि की तीव्र इच्छा और मानव सम्पर्क की प्रवृति। इस अवधारणा की मूल मान्यवर है कि नेता जन्म लेते हैं, बनाये नहीं

जाते हैं। प्रायः इस सिद्धान्त की सर्वस्वीकृति है, किन्तु निम्नलिखित कारणों से इसकी आलोचना भी होती है-

- नेता के गुणों के सम्बन्ध में अलग-अलग विद्वानों ने अलग-अलग सूची दी है जो न तो पूर्ण है और न ही अधिकृत मानी जा सकती है। गुणों के चयन का कोई वैज्ञानिक आधार भी आज तक तैयार नहीं किया जा सका है।
- इस अवधारणा में सफल नेतृत्व के गुणों की मात्रा के बारे में कुछ भी नहीं कहा गया है।
- परिस्थिति सम्बन्धी कारकों की पूर्ण उपेक्षा की गई है।
- यह मानना भ्रामक है कि नेता जन्मजात होते हैं। वर्तमान प्रतिस्पर्धात्मक समाज में प्रायः देखा गया है कि कुछ लोग शिक्षा के माध्यम से भी नेता के गुण आर्जित कर सफल नेता बन जाते है।
- इस अवधारणा से नेता का आचरण स्पष्ट होता है, किन्तु विभिन्न आधारों पर इसका विश्लेषण नहीं किया जा सकता है।
- इस अवधारणा से यह भी स्पष्ट नहीं होता कि एक नेता में पद के अनुरूप कौन-कौन से गुणों का सम्मिश्रण होना चाहिए।

रहा। किन्तु एक प्रश्न सदैव से ही अनुत्तरित रहा है कि कौन से स्थायी गुण व्यक्ति को नेता बनाते हैं। विद्वानों के अनुसार, नेताओं के पास कुछ जन्मजात विशेष अनुवंशिक गुण, चारित्रिक विशेषताएँ, और कुछ प्राकृतिक योग्यताएँ होती हैं, जिनके कारण वे नेता बन पाते है। अतः एक सफल नेता के प्रमुख विशेषक हैं, प्रतिभा, सामजिक परिपक्वता, आंतरिक अभिप्रेरणा उपलब्धि की तीव्र इच्छा और मानव सम्पर्क की प्रवृति। इस अवधारणा की मूल मान्यवर है कि नेता जन्म लेते हैं, बनाये नहीं

जाते हैं। प्रायः इस सिद्धान्त की सर्वस्वीकृति है, किन्तु निम्नलिखित कारणों से इसकी आलोचना भी होती है-

- नेता के गुणों के सम्बन्ध में अलग-अलग विद्वानों ने अलग-अलग सूची दी है जो न तो पूर्ण है और न ही अधिकृत मानी जा सकती है। गुणों के चयन का कोई वैज्ञानिक आधार भी आज तक तैयार नहीं किया जा सका है।
- इस अवधारणा में सफल नेतृत्व के गुणों की मात्रा के बारे में कुछ भी नहीं कहा गया है।
- परिस्थिति सम्बन्धी कारकों की पूर्ण उपेक्षा की गई है।
- यह मानना भ्रामक है कि नेता जन्मजात होते हैं। वर्तमान प्रतिस्पर्धात्मक समाज में प्रायः देखा गया है कि कुछ लोग शिक्षा के माध्यम से भी नेता के गुण आर्जित कर सफल नेता बन जाते है।
- इस अवधारणा से नेता का आचरण स्पष्ट होता है, किन्तु विभिन्न आधारों पर इसका विश्लेषण नहीं किया जा सकता है।
- इस अवधारणा से यह भी स्पष्ट नहीं होता कि एक नेता में पद के अनुरूप कौन-कौन से गुणों का सम्मिश्रण होना चाहिए।

उपरोक्त बिन्दुओं के निर्वचन के पश्चात् हम कह सकते हैं कि इस अवधारणा की अनेक आलोचनाऐं हुई हैं, फिर भी यह स्वीकार करना ही पड़ेगा कि एक सफल नेता में कुछ विशेष गुण अवश्य ही विद्यमान होते हैं जो उसे समूह से अलग कर सैकड़ों-लाखों लोगों के नेतृत्व का अधिकार प्रदान करते हैं।

19.3.3 समूह अवधारणा

इस अवधारणा को मनोवैज्ञानिक की अवधारणा के रूप में पहचाना जाता है। यह अवधारणा इस बात पर जोर देती है कि एक नेता अपने अनुयायिओं को लाभ पहुँचाता है। अनुयाई उन नेताओं पर निर्भर करते हैं, जो उनकी जरूरतों को पूरा कर पाते हैं। वे अपना समर्थन और सहयोग, नेताओं को उस समय तक देते रहते हैं, जब तक कि यह नेता प्रत्यक्ष तथा अप्रत्यक्ष रूप से उन्हें लाभ प्रदान करते रहतें हैं।

19.3.4 पारिस्थितिक अवधारणा

इस अवधारणा के समर्थकों के अनुसार अब तक की समस्त अवधारणाओं को अपर्याप्त पारिस्थितिजन्य कारकों की खोज शुरू की, जो नेतृत्व की भूमिकाओं, कुशलताओं और व्यवहार को प्रभावित करते हैं। इस अवधारणा के अनुसार नेतृत्व परिस्थिति जन्य है और इसी से प्रभावित भी होता है। उपरोक्त विचार का विश्लेषण करने से ज्ञात होता है कि नेतृत्व एक ऐसी कला है जिसे परिस्थितियों के अनुरूप उपयोग में लाया जाता है। नेता द्वारा परिवर्तनों को क्रियान्वित करने के लिए अपने अनुयायियों को विश्वास में लेना होता है। नेतृत्व की विभिन्न तकनीकों, विधियों तथा शैलियों

को सदैव समान रूप में लागू करके परिस्थितियों के अनुरूप लागू किया जाता है। इसीलिए नेतृत्व की परिस्थित्यात्मक से सम्बद्ध किया जाता है।

इस प्रकार नेतृत्व उन दशाओं पर आधारित होता है, जिनमें नेता कार्य करता है। नेतृत्व की समस्त शैलियाँ परिस्थितियों से प्रभावित होती हैं। परिस्थितियों एवं नेतृत्व शैली के परस्पर सामजस्य से ही नेतृत्व प्रभावशाली होता है। इतिहास में बहुत से उदाहरण मिलते हैं, जिसमें मनुष्य या व्यक्ति परिस्थितिवश नेता बन जाता है और सफल भी रहता है। इस प्रकार एक व्यक्ति को नेता बनाने में परिस्थितिजन्य कारकों की प्रभावी भूमिका होती है। नेतृत्व से सम्बन्धित परिस्थितिजन्य कारकों का वर्गीकरण कुछ इस प्रकार से किया जा सकता हैं आइये इसे समझने का प्रयास करें-

1. सांस्कृति तत्व, जैसे- सामाजिक मूल्य, विश्वास परम्परा आदि।
2. वैयाक्तिक दृष्टिकोण, जैसे- आयु, शिक्षा, अभिरूचि, प्रेरणायें आदि।
3. कार्य में अन्तर, जैसे- भूमिका, प्रशिक्षण, योग्यता आदि।
4. संगठनात्मक अन्तर, जैसे- स्वामित्व, आकार, उद्देश्य प्रेणा अदि।
5. नवीन धारणा- नेतृत्व की इस अवधारणा के अनुसार नेता अपने अनुयायियों को अपने साथ नेतृत्व में सहभागिता लेने का प्रशिक्षण देकर वांछित उद्देश्यों को पूर्ति के लिए कार्य करा सकता है। इसके लिए वह सबके अनुभवों को एककृति और समन्वित करता है। इस प्रकार

पारिस्थितिजन्य कारकों की खोज शुरू की, जो नेतृत्व की भूमिकाओं, कुशलताओं और व्यवहार को प्रभावित करते हैं। इस अवधारणा के अनुसार नेतृत्व परिस्थिति जन्य है और इसी से प्रभावित भी होता है। उपरोक्त विचार का विश्लेषण करने से ज्ञात होता है कि नेतृत्व एक ऐसी कला है जिसे परिस्थितियों के अनुरूप उपयोग में लाया जाता है। नेता द्वारा परिवर्तनों को क्रियान्वित करने के लिए अपने अनुयायियों को विश्वास में लेना होता है। नेतृत्व की विभिन्न तकनीकों, विधियों तथा शैलियों

को सदैव समान रूप में लागू करके परिस्थितियों के अनुरूप लागू किया जाता है। इसीलिए नेतृत्व की परिस्थित्यात्मक से सम्बद्ध किया जाता है।

इस प्रकार नेतृत्व उन दशाओं पर आधारित होता है, जिनमें नेता कार्य करता है। नेतृत्व की समस्त शैलियाँ परिस्थितियों से प्रभावित होती हैं। परिस्थितियों एवं नेतृत्व शैली के परस्पर सामजस्य से ही नेतृत्व प्रभावशाली होता है। इतिहास में बहुत से उदाहरण मिलते हैं, जिसमें मनुष्य या व्यक्ति परिस्थितिवश नेता बन जाता है और सफल भी रहता है। इस प्रकार एक व्यक्ति को नेता बनाने में परिस्थितिजन्य कारकों की प्रभावी भूमिका होती है। नेतृत्व से सम्बन्धित परिस्थितिजन्य कारकों का वर्गीकरण कुछ इस प्रकार से किया जा सकता हैं आइये इसे समझने का प्रयास करें-

1. सांस्कृति तत्व, जैसे- सामाजिक मूल्य, विश्वास परम्परा आदि।
2. वैयाक्तिक दृष्टिकोण, जैसे- आयु, शिक्षा, अभिरूचि, प्रेरणायें आदि।
3. कार्य में अन्तर, जैसे- भूमिका, प्रशिक्षण, योग्यता आदि।
4. संगठनात्मक अन्तर, जैसे- स्वामित्व, आकार, उद्देश्य प्रेरणा अदि।
5. नवीन धारणा- नेतृत्व की इस अवधारणा के अनुसार नेता अपने अनुयायियों को अपने साथ नेतृत्व में सहभागिता लेने का प्रशिक्षण देकर वांछित उद्देश्यों को पूर्ति के लिए कार्य करा सकता है। इसके लिए वह सबके अनुभवों को एककृति और समन्वित करता है। इस प्रकार पूर्व निर्धारित उद्देश्यों के लिए ये सभी को मान्य होतें हैं।

उपरोक्त अवधारणाओं के पश्चात आइये नेतृत्व सम्बन्धी कुछ प्रमुख परिभाषाओं को आत्मसात् करें-

- बरनाई के अनुसार- नेतृत्व किसी व्यक्ति का वह व्यावहारिक गुण है, जिसके द्वारा वह अन्य व्यक्तियों को प्रभावित व संगठित करके अभीष्ट कार्य कराने में सफल हो जाता है।
- कीथ डेविस के अनुसार- दूसरे व्यक्तियों को निश्चित उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए उत्सुक व उनकी सहर्ष सहमति की स्वीकृति प्राप्त करने की योग्यता को नेतृत्व कहते हैं।
- जॉर्ज आर0 टैरी के अनुसार- नेतृत्व वह क्रिया है, जिसके माध्यम से कोई व्यक्ति उद्देश्यों के लिए व्यक्तियों को स्वेच्छा से कार्य करने हेतु उन्हें प्रभावित करता है।
- लिविंगस्टोन के शब्दों में- नेतृत्व अन्य लोगों में किसी सामान्य उद्देश्य का अनुकरण करने की इच्छा को जागृत करने की योग्यता है।
- कूंट्स एवं ओ डोनेल के अनुसार- किसी लक्ष्य की प्राप्ति हेतु संदेशवाहक के माध्यम द्वारा व्यक्तियों को प्रभावित करने की योग्यता नेतृत्व कहलाती है।
- आर्डवे टीड के अनुसार- नेतृत्व गुणों का वह संयोजन है, जिनके होने से ही नेता, अनुयायियों से कुछ करवाने के योग्य होता है, क्योंकि नेता के प्रभाव से ही अनुयायी कुछ करने को तत्पर होते हैं।

- सेक्टर हडसर के अनुसार- किसी उद्यम के उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु समान प्रयत्न द्वारा व्यक्तियों को प्रेरित तथा प्रभावित करने के रूप में नेतृत्व को परिभाषित किया है।
- चेस्टर बनोर्ड के अनुसार- नेतृत्व व्यक्तियों के व्यवहार को उद्यमता की ओर निर्देशित करता है, जिसके द्वारा वे किसी संगठित प्रयत्न में संलग्न लोगों का उनकी क्रियाओं का मार्गदर्शन करते है।

नेतृत्व की उपरोक्त परिभाषाओं विश्लेषण के आधार पर, नेतृत्व की निम्नलिखित विशेषताओं का निरूपण किया जा सकता है। आइये इन विशेषताओं को क्रमबद्ध कर समझने का प्रयास करें-

1. नेतृत्व सामूहिक रूप से व्यक्तियों को प्रभावित करने की एक सुव्यवस्थित प्रक्रिया है।
2. नेतृत्व एक प्रकार का चातुर्य या कौशल है जिसके द्वारा अन्य व्यक्तियों को अपना अनुयायी बना लेना एवं उनसे अपनी इच्छा के अनुरूप कार्य सम्पन्न कराने की उनकी सहर्ष सहमति प्राप्त कर लेना सम्भव होता है।
3. व्यक्तियों को एक समूह में बाँधना तथा उन्हें निर्धारित लक्ष्यों की ओर सहर्ष बढ़ने के लिए प्रेरित करना एवं जिस मानवीय गुण के द्वारा सम्भव बनाना होता है, नेतृत्व कहलाता है।
4. नेतृत्व में अनुयायियों का होना प्रमुखतः आवश्यक है, क्योंकि नेतृत्व अनुयायियों या

अनुयायियों से कुछ करवाने के योग्य होता है, क्योंकि नेता के प्रभाव से ही अनुयायी कुछ करने को तत्पर होते हैं।

- सेक्टर हडसर के अनुसार- किसी उद्यम के उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु समान प्रयत्न द्वारा व्यक्तियों को प्रेरित तथा प्रभावित करने के रूप में नेतृत्व को परिभाषित किया है।
- चेस्टर बनोर्ड के अनुसार- नेतृत्व व्यक्तियों के व्यवहार को उद्यमता की ओर निर्देशित करता है, जिसके द्वारा वे किसी संगठित प्रयत्न में संलग्न लोगों का उनकी क्रियाओं का मार्गदर्शन करते है।

नेतृत्व की उपरोक्त परिभाषाओं विश्लेषण के आधार पर, नेतृत्व की निम्नलिखित विशेषताओं का निरूपण किया जा सकता है। आइये इन विशेषताओं को क्रमबद्ध कर समझने का प्रयास करें-

1. नेतृत्व सामूहिक रूप से व्यक्तियों को प्रभावित करने की एक सुव्यवस्थित प्रक्रिया है।
2. नेतृत्व एक प्रकार का चातुर्य या कौशल है जिसके द्वारा अन्य व्यक्तियों को अपना अनुयायी बना लेना एवं उनसे अपनी इच्छा के अनुरूप कार्य सम्पन्न कराने की उनकी सहर्ष सहमति प्राप्त कर लेना सम्भव होता है।
3. व्यक्तियों को एक समूह में बाँधना तथा उन्हें निर्धारित लक्ष्यों की ओर सहर्ष बढ़ने के लिए प्रेरित करना एवं जिस मानवीय गुण के द्वारा सम्भव बनाना होता है, नेतृत्व कहलाता है।
4. नेतृत्व में अनुयायियों का होना प्रमुखतः आवश्यक है, क्योंकि नेतृत्व अनुयायियों या समर्थकों या अधनीनस्थों का ही किया जाता है। बिना समूह के नेता की कल्पना पूर्णं नहीं होती है।
5. नेतृत्व किसी सामान्य लक्ष्य या उद्देश्य की प्राप्ति के लिए संगठित लोगों का किया जाता है। बिना लक्ष्य या उद्देश्य न तो कोई संगठन बनता है और न ही उसमें नेतृत्व हो सकता है।
6. नेतृत्व में अनुयायियों के आचरण एवं व्यवहार को प्रस्तावित किया जाता है। इसके माध्यम से अनुयायियों पर नेता का एक प्रभाव पड़ता है। नेता का व्यवहार एवं आचरण अपने आप में एक आदर्श होता है।
7. यह एक सुव्यवस्थित रूप से गतिशील प्रक्रिया है, अर्थात् संगठन में नेतृत्व सदैव विद्यमान रहता है।
8. नेतृत्व के लिए परिस्थितियों को महत्वपूर्ण माना जाता है, क्योंकि परिस्थितियां ही आवश्यकताओं, हितों, दबावों तथा परिवर्तनों को जन्म देती हैं, तथा परिस्थितियों में ही नेतृत्व का परीक्षण होता है।
9. नेतृत्व समान्य उद्देश्य की प्राप्ति या हित पूर्ति के लिए नेता प्रेरणा तथा समूह के प्रयत्नों का सामूहिक या एकीकृत परिणाम है।
10. यदि प्रशासनिक संगठनों में पदसोपानात्मक दृष्टि से उच्चतम प्रबंधक ही नेता की भूमिका निभाता है। तथापि यह भी सत्य है कि सभी उच्चतम प्रबन्धक नेता नहीं कहला सकते हैं। बल्कि नेतृत्व से सम्बन्धित आवश्यक योग्यताओं तथा नेतृत्व का आत्मबोध का होना

आवश्यक है, क्योकि संगठन में अधीनस्थों की स्वीकृति तथा सहयोग भी नेतृत्व का आवश्यक भाग है।

नेतृत्व की उपरोक्त परिभाषाजन्य विशेषताओं के आधार पर कहा जा सकता है कि नेतृत्व प्रबन्ध का आन्तरिक भाग है, जो कि प्रबन्धकीय कार्यों में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। प्रबन्धकीय सफलता का रहस्य कुशल नेतृत्व में ही समाहित हैं। कोई भी प्रशासनिक संगठन कितना ही अधिक सम्पूर्ण क्यों न हो नेतृत्व को प्रतिस्थापित नहीं कर सकता है।

आज की निरंतर परिवर्तित होती परिस्थितियों में प्रशासनिक संगठनों में नेतृत्व का काफी महत्व है। किसी भी प्रशासनिक संगठन की सफलता या असफलता नेतृत्व की प्रकृति पर निर्भर करती है। इस प्रकार निम्नलिखित कारणों से एक प्रशासनिक संगठन को नेतृत्व की आवश्यकता होती है-

- कर्मचारियों में सन्तोष विश्वास एवं सुरक्षा की भावना का विकास एवं स्थायित्व प्रदान करने हेतु।
- कर्मचारियों को उनके कार्य के प्रति मानोबल प्रदान करने एवं प्रोत्साहित करने हेतु।
- संगठन एवं जनता के प्रति कर्तव्यपरायणता की भावना उत्पन्न करने के लिए।
- कर्मचारियों में समूह-भावना उत्पन्न करने हेतु।
- कर्मचारियों में कार्य करने के लिए आन्तरिक दुष्टि उत्पन्न करने हेतु।
- संगठन के पूर्ण निर्धारित उद्देश्यों की पूर्ति के लिए प्रयत्न एवं सफलता प्राप्त करने हेतु।

9. नेतृत्व समान्य उद्देश्य की प्राप्ति या हित पूर्ति के लिए नेता प्रेरणा तथा समूह के प्रयत्नों का सामूहिक या एकीकृत परिणाम है।
10. यदि प्रशासनिक संगठनों में पदसोपानात्मक दृष्टि से उच्चतम प्रबंधक ही नेता की भूमिका निभाता है। तथापि यह भी सत्य है कि सभी उच्चतम प्रबन्धक नेता नहीं कहला सकते हैं। बल्कि नेतृत्व से सम्बन्धित आवश्यक योग्यताओं तथा नेतृत्व का आत्मबोध का होना

आवश्यक है, क्योकि संगठन में अधीनस्थों की स्वीकृति तथा सहयोग भी नेतृत्व का आवश्यक भाग है।

नेतृत्व की उपरोक्त परिभाषाजन्य विशेषताओं के आधार पर कहा जा सकता है कि नेतृत्व प्रबन्ध का आन्तरिक भाग है, जो कि प्रबन्धकीय कार्यों में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। प्रबन्धकीय सफलता का रहस्य कुशल नेतृत्व में ही समाहित हैं। कोई भी प्रशासनिक संगठन कितना ही अधिक सम्पूर्ण क्यों न हो नेतृत्व को प्रतिस्थापित नहीं कर सकता है।

आज की निरंतर परिवर्तित होती परिस्थितियों में प्रशासनिक संगठनों में नेतृत्व का काफी महत्व है। किसी भी प्रशासनिक संगठन की सफलता या असफलता नेतृत्व की प्रकृति पर निर्भर करती है। इस प्रकार निम्नलिखित कारणों से एक प्रशासनिक संगठन को नेतृत्व की आवश्यकता होती है-

- कर्मचारियों में सन्तोष विश्वास एवं सुरक्षा की भावना का विकास एवं स्थायित्व प्रदान करने हेतु।
- कर्मचारियों को उनके कार्य के प्रति मानोबल प्रदान करने एवं प्रोत्साहित करने हेतु।
- संगठन एवं जनता के प्रति कर्तव्यपरायणता की भावना उत्पन्न करने के लिए।
- कर्मचारियों में समूह-भावना उत्पन्न करने हेतु।
- कर्मचारियों में कार्य करने के लिए आन्तरिक दुष्टि उत्पन्न करने हेतु।
- संगठन के पूर्ण निर्धारित उद्देश्यों की पूर्ति के लिए प्रयत्न एवं सफलता प्राप्त करने हेतु।
- कर्मचारियों में कार्य के प्रति लगाव में वृद्धि हेतु।
- संगठन की नीतियों के सफल क्रियान्वयन एवं निस्पादन हेतु।
- सामूहिक गति-विधियों के लिए कर्मचारियों में रूचि उत्पन्न करने के लिए।
- अपेक्षित कार्य निस्पादन प्राप्त करने तथा अनुशासन बनाये रखने हेतु।

प्रशासनिक संगठन के शीर्ष पर नेता में स्वाभाविक रूप से कतिपय ऐसे विशिष्ट गुण होने चाहिए, जो सहयोगी सदस्यों को प्रभावित कर सकें। वास्तव में नेतृत्व में ''प्रभाव'' शब्द बहुत महत्वपूर्ण है, क्योंकि प्रभाव के द्वारा ही अनुयायियों को संगठन के लक्ष्य की ओर प्रेरित किया जा सकता है। किसी भी नेता में कुछ विशेष गुण आवश्यक होते हैं। लेकिन गुणों को अभ्यास से पैदा नहीं किया जा सकता, क्योंकि कुछ गुण अन्य की तुलना में अधिक जन्मजात होते हैं। आइये कुछ विशिष्ट और सहजता से पहचाने जाने वाले नेतृत्व सम्बन्धी गुणों को सूचिबद्ध करने का प्रयास करें। ध्यान रहे ये गुण परिवर्तशील है। समय काल, परिस्थिति के अनुसार नेता गुणों में थोडा बहुत परिवर्तन करता है, यह एक वास्तविकता है। आइये इन गुणों को समझने का प्रयास करें- 1. निष्ठा, 2. भावनात्मक स्थायित्व एवं मानव भावनाओं की समझ,, 3. व्यक्तिगत उत्प्रेरणा एवं सुव्यवस्थित संचार प्रबन्ध, 4. शिक्षा देने की योग्यता- सामाजिक दृष्टि के साथ, 5. विधिक दक्षता एवं अन्य बाहय पर्यायवरणीय कारकों की समझ, 6. शारीरिक एवं मानसिक ऊर्जा, 7. उद्देश्य एवं निर्देशन की की समझ, 8. उत्साह

मैत्रीभाव एवं स्नेह का भाव, 9. तकनीकी दृष्टि से निपुणता के साथ-साथ बौद्धिक चतुर्थ और 10. चारित्रिक बल एवं कुशल निर्णयन क्षमता।

उपरोक्त गुणों के आलोक में यह कहा जाता है कि नेता को एक आदर्श व्यक्ति जैसे गुणों से युक्त होना चाहिए। यद्यपि सर्वगुणा सम्पत्र व्यक्ति का मिलना प्रायः असम्भव होता है। इस प्रकार कोई व्यक्ति समस्त उत्कृष्ट गुणों का अपने अन्दर विकास नहीं कर सकता है, तथापि नेता को आम आदमी या संगठन के अधीनस्थ व्यक्तियों की तुलना में अधिक परिपक्व, परिश्रमी, साहसी तथा मानवीय होना चाहिए। हालांकि इनमें से बहुत से विशेषक मनोवैज्ञानिक शब्दवली के अंतर्गत आते हैं, लेकिन ये सारे के सारे गुण नेतृत्व की हर परिस्थिति में अनिवार्यतः प्रकट नहीं होते और न प्रत्येक नेता इनके अंतर्गत आते हैं।

श्रेष्ठ नेतृत्व के द्वारा ही उपक्रम के समस्त अधीनस्थों में प्रबल शक्ति, उत्साह एवं क्रियाशीलता का प्रादुर्भाव किया जा सकता है। साथ ही चमत्कारिक परिणाम प्राप्त करने हेतु आशातीत सफलता प्राप्त हो सकती है। अतः सफल नेतृत्व ही है, जो कि व्यक्तियों के कार्य करने के स्तर को उच्चतर बना देता है तथा उनके व्यक्तित्व को उनकी सीमाओं और क्षमताओं से अधिक प्रभावशाली बनाने में सहयोग

भी नेता में कुछ विशेष गुण आवश्यक होते हैं। लेकिन गुणों को अभ्यास से पैदा नहीं किया जा सकता, क्योंकि कुछ गुण अन्य की तुलना में अधिक जन्मजात होते हैं। आइये कुछ विशिष्ट और सहजता से पहचाने जाने वाले नेतृत्व सम्बन्धी गुणों को सूचिबद्ध करने का प्रयास करें। ध्यान रहे ये गुण परिवर्तशील है। समय काल, परिस्थिति के अनुसार नेता गुणों में थोडा बहुत परिवर्तन करता है, यह एक वास्तविकता है। आइये इन गुणों को समझने का प्रयास करें- 1. निष्ठा, 2. भावनात्मक स्थायित्व एवं मानव भावनाओं की समझ,, 3. व्यक्तिगत उत्प्रेरणा एवं सुव्यवस्थित संचार प्रबन्ध, 4. शिक्षा देने की योग्यता- सामाजिक दृष्टि के साथ, 5. विधिक दक्षता एवं अन्य बाहय पर्यायवरणीय कारकों की समझ, 6. शारीरिक एवं मानसिक ऊर्जा, 7. उद्देश्य एवं निर्देशन की की समझ, 8. उत्साह

मैत्रीभाव एवं स्नेह का भाव, 9. तकनीकी दृष्टि से निपुणता के साथ-साथ बौद्धिक चतुर्थ और 10. चारित्रिक बल एवं कुशल निर्णयन क्षमता।

उपरोक्त गुणों के आलोक में यह कहा जाता है कि नेता को एक आदर्श व्यक्ति जैसे गुणों से युक्त होना चाहिए। यद्यपि सर्वगुणा सम्पत्र व्यक्ति का मिलना प्रायः असम्भव होता है। इस प्रकार कोई व्यक्ति समस्त उत्कृष्ट गुणों का अपने अन्दर विकास नहीं कर सकता है, तथापि नेता को आम आदमी या संगठन के अधीनस्थ व्यक्तियों की तुलना में अधिक परिपक्व, परिश्रमी, साहसी तथा मानवीय होना चाहिए। हालांकि इनमें से बहुत से विशेषक मनोवैज्ञानिक शब्दवली के अंतर्गत आते हैं, लेकिन ये सारे के सारे गुण नेतृत्व की हर परिस्थिति में अनिवार्यतः प्रकट नहीं होते और न प्रत्येक नेता इनके अंतर्गत आते हैं।

श्रेष्ठ नेतृत्व के द्वारा ही उपक्रम के समस्त अधीनस्थों में प्रबल शक्ति, उत्साह एवं क्रियाशीलता का प्रादुर्भाव किया जा सकता है। साथ ही चमत्कारिक परिणाम प्राप्त करने हेतु आशातीत सफलता प्राप्त हो सकती है। अतः सफल नेतृत्व ही है, जो कि व्यक्तियों के कार्य करने के स्तर को उच्चतर बना देता है तथा उनके व्यक्तित्व को उनकी सीमाओं और क्षमताओं से अधिक प्रभावशाली बनाने में सहयोग प्रदान करता है।

इस प्रकार एक नेता द्वारा नेतृत्व द्वारा नेतृत्व के लिये चयनित शैली उसकी क्षमता को बहुत अधिक प्रभावित करती हैं। नेतृत्व की शैली संस्थागत लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए प्रेरणा देती है। अनुचित शैलियाँ कर्मचारियों में अंसतोष और विरोध की भावना पैदा करती हैं। नेतृत्व की तीन शैलियाँ मानी गई है। प्रायः नेतृत्व कर स्थितियों को नजर में रखते हुए विभिन्न अवसरों पर विभिन्न शैलियों को अपनाते है-

19.4 नेतृत्व शौलियाँ

नेतृत्व की शैलियों का अध्ययन हम निम्नलिखित बिन्दुओं के आधार पर कर सकते हैं-

19.4.1 एकतंत्रीय शैली

यद्यपि एकतंत्रीय नेतृत्व प्राचीन काल में प्रचलित होने के कारण काफी पुरानी अविकसित तकनीक है, किन्तु कई परिस्थितियों में यह आज भी क्रियान्वित हो सकती है। इसमें नीति संबंधी और निर्णयात्मक अधिकार पूर्णतः नेता के हाथों में केन्द्रित रहते हैं। नेता ही अपनी मर्जी के अनुसार नीतियों को तय करता है और उनमें परिवर्तन करता है तथा सभी निर्णय स्वयं ही लेता है, फिर चाहे वो सही हो या गलत। इसमें एकतरफा संचार होता है।

इस प्रकार के नेता अपने मातहतों से बिना सलाह-मशवरा किये नीतियों को स्वीकारने की अपेक्षा करते हैं। ऐसे नेताओं को इस शैली के फलस्वरूप उनके व्यवहार का पूर्वानुमान करना अत्यन्त कठिन होता है। इस प्रकार ये नेता एकाकी रहते हैं और समूह से अलग-थलग बने रहते हैं।

सभी अधीनस्थों को कार्य की विभिन्न गतिविधियों व तकनीकों का प्रत्येक चरण भली-भाँति वह स्वयं समझाता है। ये स्वयं को श्रेष्ठ और अपने मातहतों की हीन, अनुभवरहित और अयोग्य समझते हैं। इस प्रकार के नेतृत्व का सबसे बड़ा लाभ शीघ्र निर्णय ले पाने का होता है। लेकिन यह शैली

कर्मचारियों के लिए कष्टकर होती है और उनके अंसतोष का कारण बनती है। इस प्रक्रिया में कर्मचारी संस्थागत लक्ष्यों के प्रति उदासीन हो जाते हैं, क्योंकि किस कर्मचारी का कार्य प्रशंसा के लायक है अथवा आलोचना के लायक है, इस बात का निर्णय भी समूह द्वारा न होकर नेता द्वारा स्वयं ही लिया जाता है। नेता अधीनस्थों को केवल निर्देश देता है और स्वयं कार्य में सक्रिय भाग नहीं लेता।

वस्तुतः इस शैली का भाव नकारात्मक होता है, क्योंकि इसमें कर्मचारियों को अन्धकार में रखा जाता है। वे अपने को स्वयं असुरक्षित अनुभव करते हैं तथा नेता की भावनाओं को समझे बिना उससे भयभीत रहते हैं। नेता स्वयं इस बात का भी निर्णय लेता है कि अमुक कार्य किस व्यक्ति के द्वारा कराया जाए और उस व्यक्ति को सहयोगी भी दिया जाए या नहीं। नेतृत्व की यह शैली केवल उन्हीं व्यक्तियों पर लागू होता है जो कि कार्य से जी चुराते हैं, किन्तु अपनी नौकरी की पूर्ण सुरक्षा चाहते हैं तथा किसी भी कार्य में स्वयं पहल नहीं करते।

इस प्रकार एकतंत्रीय शैली का सबसे बड़ा लाभ यह है कि जो कर्मचारी व्यक्ति जो दण्डित होने के भय से ही कार्य करते हैं, वे दण्डित होने के भय से अनुशासित रहते हैं और समर्पित भाव से कार्य

इस प्रकार के नेता अपने मातहतों से बिना सलाह-मशवरा किये नीतियों को स्वीकारने की अपेक्षा करते हैं। ऐसे नेताओं को इस शैली के फलस्वरूप उनके व्यवहार का पूर्वानुमान करना अत्यन्त कठिन होता है। इस प्रकार ये नेता एकाकी रहते हैं और समूह से अलग-थलग बने रहते हैं।
सभी अधीनस्थों को कार्य की विभिन्न गतिविधियों व तकनीकों का प्रत्येक चरण भली-भाँति वह स्वयं समझाता है। ये स्वयं को श्रेष्ठ और अपने मातहतों की हीन, अनुभवरहित और अयोग्य समझते हैं। इस प्रकार के नेतृत्व का सबसे बड़ा लाभ शीघ्र निर्णय ले पाने का होता है। लेकिन यह शैली

कर्मचारियों के लिए कष्टकर होती है और उनके अंसतोष का कारण बनती है। इस प्रक्रिया में कर्मचारी संस्थागत लक्ष्यों के प्रति उदासीन हो जाते हैं, क्योंकि किस कर्मचारी का कार्य प्रशंसा के लायक है अथवा आलोचना के लायक है, इस बात का निर्णय भी समूह द्वारा न होकर नेता द्वारा स्वयं ही लिया जाता है। नेता अधीनस्थों को केवल निर्देश देता है और स्वयं कार्य में सक्रिय भाग नहीं लेता।

वस्तुतः इस शैली का भाव नकारात्मक होता है, क्योंकि इसमें कर्मचारियों को अन्धकार में रखा जाता है। वे अपने को स्वयं असुरक्षित अनुभव करते हैं तथा नेता की भावनाओं को समझे बिना उससे भयभीत रहते हैं। नेता स्वयं इस बात का भी निर्णय लेता है कि अमुक कार्य किस व्यक्ति के द्वारा कराया जाए और उस व्यक्ति को सहयोगी भी दिया जाए या नहीं। नेतृत्व की यह शैली केवल उन्हीं व्यक्तियों पर लागू होता है जो कि कार्य से जी चुराते हैं, किन्तु अपनी नौकरी की पूर्ण सुरक्षा चाहते हैं तथा किसी भी कार्य में स्वयं पहल नहीं करते।

इस प्रकार एकतंत्रीय शैली का सबसे बड़ा लाभ यह है कि जो कर्मचारी व्यक्ति जो दण्डित होने के भय से ही कार्य करते हैं, वे दण्डित होने के भय से अनुशासित रहते हैं और समर्पित भाव से कार्य करते है। जिससे उद्देश्यों को प्राप्ति सरलता से हो पाती है।

19.4.2 सहभागिता नेतृत्व

नेतृत्व की इस शैली को लोकतांत्रिक शैली भी कहते है। इस शैली के अंतर्गत संस्था के लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए नेता अपने कर्मचारियों का सहयोग प्राप्त करते हैं तथा उनके विचारों व सुझावों को आमंत्रित करके, उनसे नीतियाँ तैयार करने में सहयोग प्राप्त करते हैं। इस प्रकार नेतृत्व की इस प्रणाली में कार्य करने वाला नेता अपने अधीनस्थों की सहभागित एवं परामर्श को बढ़ाता है, जिससे उनमें एक सशक्त समूह-भावना का संचार होता हैं। वर्तमान में नेतृत्व की यह शैली अधिक प्रचालित है। इस प्रणाली में सामूहिक-चर्चा करके नीतियों का निर्धारण किया जाता है।

संगठन में पारदर्शिता को अपनाया जाता है। किसी भी निर्णय पर पहुँचने से पूर्व मुखिया अपने अधीनस्थों से उचित सलाह लेता है। प्रत्येक व्यक्ति अपना अभीष्ट कार्य एवं अपना सहयोगी साथी चुनने के लिए पूर्ण स्वतन्त्र होता है।

इस पद्धति में नेतृत्व अपनी प्रशंसा से अपनी कार्य प्रणाली में परिवर्तन करता है। वह स्वयं अधिक कार्य न करते हुए भी समूह के सदस्य रूप में स्वयं को प्रस्तुत करने की ही चेष्टा करता है। वह मानकर चलता है कि मातहतों में निर्णय लेने की क्षमता है, जिससे वो उन्हें विकेन्द्रीकृत अधिकार प्रदान करता है। कर्मचारियों का मनोबल बढ़ता है और उनमें अपने कार्य के प्रति संतुष्टि पैदा होती है। इस शैली की निम्नलिखित विशेषताओं को सूचिबद्ध किया जा सकता है-

- सहभागी शैली में नेतृत्व अपने कर्मचारियों का मनोबल बढ़ता है,
- नेतृत्व, कर्मचारियों की शिकायतों को यथासम्भव न्यूनतम करने का प्रयास करता है,

- वह उच्च प्रबन्ध तथा कर्मचारियों के मध्य मधुर सम्बन्ध स्थापित करने का प्रयास करता है, तथा
- अधीनस्थों को काम करने के लिए प्रोत्साहित करता है तथा कार्य के प्रति उनका रूख सुधारता है।

उपरोक्त निर्वचन के आलोक में यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि सहभागिता शैली से मनोबल एवं संतुष्टि बढ़ती है, किन्तु इस प्रकार के नेतृत्व में निर्णय में विलम्ब होता है तथा गुणवत्ता भी एक प्रश्न होती है। यदि अधीनस्थ कर्मचारी सहभगिता नेतृत्व का दुरूपयोग न करें एवं कर्तव्यों व दायित्वों का निर्वहन सूझ-बूझ के साथ करते रहें तो निःसन्देह सहभागिता नेतृत्व किसी भी प्रशासनिक संगठन को सफलता के द्वारा तक पहुँचा कर जनता के प्रति जवाबदेही में सफल सिद्ध कर सकती है।

19.4.3 हस्तक्षेप रहित नेतृत्व

नेतृत्व की इस शैली में नेता कोई हस्तक्षेप नहीं करता है। निर्णय लेने में नेता की सहभागिता बहुत कम होती है। अधीनस्थ स्वयं की प्रेरणा से ही निर्णय करते इस प्रकार के नेतृत्व प्रेरणा प्रदान करने के लिए संस्था किसी नेता पर निर्भर नहीं रहती। कर्मचारी ही स्वयं की प्रेरित करते हैं। उन्हें अपेक्षाकृत

चुनने के लिए पूर्ण स्वतन्त्र होता है।

इस पद्धति में नेतृत्व अपनी प्रशंसा से अपनी कार्य प्रणाली में परिवर्तन करता है। वह स्वयं अधिक कार्य न करते हुए भी समूह के सदस्य रूप में स्वयं को प्रस्तुत करने की ही चेष्टा करता है। वह मानकर चलता है कि मातहतों में निर्णय लेने की क्षमता है, जिससे वो उन्हें विकेन्द्रीकृत अधिकार प्रदान करता है। कर्मचारियों का मनोबल बढ़ता है और उनमें अपने कार्य के प्रति संतुष्टि पैदा होती है। इस शैली की निम्नलिखित विशेषताओं को सूचिबद्ध किया जा सकता है-

- सहभागी शैली में नेतृत्व अपने कर्मचारियों का मनोबल बढ़ता है,
- नेतृत्व, कर्मचारियों की शिकायतों को यथासम्भव न्यूनतम करने का प्रयास करता है,

- वह उच्च प्रबन्ध तथा कर्मचारियों के मध्य मधुर सम्बन्ध स्थापित करने का प्रयास करता है, तथा
- अधीनस्थों को काम करने के लिए प्रोत्साहित करता है तथा कार्य के प्रति उनका रूख सुधारता है।

उपरोक्त निर्वचन के आलोक में यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि सहभागिता शैली से मनोबल एवं संतुष्टि बढ़ती है, किन्तु इस प्रकार के नेतृत्व में निर्णय में विलम्ब होता है तथा गुणवत्ता भी एक प्रश्न होती है। यदि अधीनस्थ कर्मचारी सहभगिता नेतृत्व का दुरूपयोग न करें एवं कर्तव्यों व दायित्वों का निर्वहन सूझ-बूझ के साथ करते रहें तो निःसन्देह सहभागिता नेतृत्व किसी भी प्रशासनिक संगठन को सफलता के द्वारा तक पहुँचा कर जनता के प्रति जवाबदेही में सफल सिद्ध कर सकती है।

19.4.3 हस्तक्षेप रहित नेतृत्व

नेतृत्व की इस शैली में नेता कोई हस्तक्षेप नहीं करता है। निर्णय लेने में नेता की सहभागिता बहुत कम होती है। अधीनस्थ स्वयं की प्रेरणा से ही निर्णय करते इस प्रकार के नेतृत्व प्रेरणा प्रदान करने के लिए संस्था किसी नेता पर निर्भर नहीं रहती। कर्मचारी ही स्वयं की प्रेरित करते हैं। उन्हें अपेक्षाकृत अधिक स्वतंत्रता प्राप्त रहती है और निर्णय लेने में नेता की सहभागिता कम से कम होती है। संस्था की कार्यप्रणाली में घटना क्रम को नियमित करने के प्रयास नहीं किए जाते। नेता सिर्फ संस्था में एक सदस्य की भूमिका निभाता है। नेतृत्व की यह शैली कर्मचारियों को अधिक स्वतंत्रता, प्रदान करती है।

प्रायः विद्वानों की मान्यता है कि नेतृत्व की यह शैली प्रयोग करने में कठिन है। इसमें नेता एक सूचना केन्द्र की भाँति कार्य करता है किन्तु उसका नियन्त्रण कार्य एकदम नगण्य होता है। इसमें नेता को कार्य सम्पन्न कराने के लिए अपने अधीनस्थों पर ही आश्रित रहना पड़ता है। कार्य करने की भावना और दायित्वों के प्रति उनकी संवेदशीलता ही नेता को कार्य सम्पन्न कराने में सहायक होती है।

वस्तुतः स्वतन्त्र बागडोर सम्भालने वाला नेता अपने कामगारों के समूह का मार्ग-दर्शन नहीं करता, बल्कि उन्हें कार्य करने के लिए पूर्णतः स्वतंन्त्र रखता है। इस प्रकार कार्य पूर्ण करने का दायित्व पूर्णरूपेण अधीनस्थों पर ही रहता है, जो स्वयं ही लक्ष्य निर्धारित करते हैं और स्वयं ही अपनी समस्याओं का निराकरण करते हैं। मुखिया तो केवल सम्पर्क रखता है वह न तो नेता के रूप में अपना योगदान करता है और न ही वह अपने अधिकार व शक्ति का ही प्रयोग करता है, वह केवल एक सम्पर्क सूत्र की भाँति कार्य करता है। इस प्रकार की नेतृत्व शैली की उपयोगिता तभी सिद्ध होती है, जबकि अधीनस्थ कर्मचारी कुशल प्रशिक्षित व प्रतिभाशाली हों।

19.5 नीति निर्धारण

नीतियाँ एक प्रकार का विस्तृत विवरण होती हैं, जो कि प्रशासनिक संगठन के पूर्व-निर्धारित लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिये संगठन के निर्णयों के लिये मार्गदर्शन करने का कार्य करती हैं। यह स्पष्ट करती

हैं कि किसी विशिष्ट परिस्थिति में संगठन के सदस्य किस प्रकार व्यवहार करेंगे तथा निर्णय लेगें। दूसरे शब्दों में एक कुशल प्रशासक सदैव अपने संगठन के उद्देश्यों को निर्धारित करता है।

प्रशासन की सभी क्रियायें उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिये ही निर्देषित होती हैं। संगठन की क्रियायें कुछ निर्धारित सिद्धान्तें के आधार पर निर्देशित की जाती है, जिन्हें नीतियों के नाम से सम्बोधित किया जाता है। इस प्रकार नीतियों को उन सिद्धान्तों के रूप में समझा जा सकता है, जो संगठन की क्रियाओं को करती हैं। इस सम्बन्ध में आइये विद्वानों द्वारा प्रदत्त परिभाषाओं को समझने का प्रयास करें -

- डेल ग्रोडर के अनुसार- एक नीति, विचार एवं क्रिया का एक पूर्व-निर्धारित मार्ग है, जिसे स्वीकृत लक्ष्यों एवं उद्श्यों की ओर मार्ग-दर्शक की भाँति सुस्थापित किया जाता है।
- एडविन बी0 फिलिप्पो के अनुसार- नीति एक मानवकृत नियम या कार्यवाही का पूर्व-

नीतियाँ एक प्रकार का विस्तृत विवरण होती हैं, जो कि प्रशासनिक संगठन के पूर्व-निर्धारित लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिये संगठन के निर्णयों के लिये मार्गदर्शन करने का कार्य करती हैं। यह स्पष्ट करती

हैं कि किसी विशिष्ट परिस्थिति में संगठन के सदस्य किस प्रकार व्यवहार करेंगे तथा निर्णय लेंगें। दूसरे शब्दों में एक कुशल प्रशासक सदैव अपने संगठन के उद्देश्यों को निर्धारित करता है।

प्रशासन की सभी क्रियायें उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिये ही निर्देषित होती हैं। संगठन की क्रियायें कुछ निर्धारित सिद्धान्तें के आधार पर निर्देशित की जाती है, जिन्हें नीतियों के नाम से सम्बोधित किया जाता है। इस प्रकार नीतियों को उन सिद्धान्तों के रूप में समझा जा सकता है, जो संगठन की क्रियाओं को करती हैं। इस सम्बन्ध में आइये विद्वानों द्वारा प्रदत्त परिभाषाओं को समझने का प्रयास करें -

- डेल ग्रोडर के अनुसार- एक नीति, विचार एवं क्रिया का एक पूर्व-निर्धारित मार्ग है, जिसे स्वीकृत लक्ष्यों एवं उद्श्यों की ओर मार्ग-दर्शक की भाँति सुस्थापित किया जाता है।
- एडविन बी0 फिलिप्पो के अनुसार- नीति एक मानवकृत नियम या कार्यवाही का पूर्व-निर्धारित मार्ग है, जिसकी स्थापना संगठन के उद्देश्यों की ओर कार्य निष्पादन के मार्गदर्शन हेतु की जाती है।

उपर्युक्त परिभाषाओं के आलोक में यह कहा जा सकता है कि नीतियाँ पूर्व-निर्धारित उद्देश्यों को प्राप्त करने का मार्ग निर्धारित करती हैं। नीतियाँ उन क्षेत्रों एवं सीमाओं को परिभाषित करती हैं, जिनके अन्तर्गत निर्णय लिये जाते हैं, ये प्रबन्ध की क्रियाओं का निर्धारण करती है। नीतियों के आधार पर नेतृत्व अपने अधीनस्थों को अधिकारों का भारार्पण कर और उनकी क्रियाओं पर नियन्त्रण रखते हैं।

आज की जटिल सामाजिक संरचना में, एक प्रशासानिक संगठन को निम्नलिखित कारणों से सुव्यवस्थित नीतियों की आवश्यकता होती है-

1. संगठन के पूर्व-निर्धारित लक्ष्यों एवं उद्देश्यों को सुव्यवस्थित ढंग से प्राप्त करने हेतु,
2. संगठन की क्रियाओं पर प्रभावी नियन्त्रण स्थापित करने हेतु,
3. निर्णयों के लिये ठोस एवं वास्तविक आधारों के निर्धारण हेतु,
4. निर्णयों में एकरूपता एवं मितव्ययिता प्राप्त करने हेतु,
5. उच्च प्रबन्धक एवं कर्मचारियों के मध्य स्वस्थ सम्बन्धों की स्थापना करने हेतु,
6. कर्मचारियों का मनोबल एवं कार्य स्थल संतुष्टि बढ़ाने हेतु,
7. विकेन्द्रीकरण की प्रक्रिया सरल बनाते हेतु,
8. अनावश्यक कार्य एवं समूह दबाव से मुक्ति पाने हेतु,

प्रायः प्रशासनिक संगठनों में नीतियों सरकारी नियमों को ध्यान में रखकर निर्मित की जाती है। इसमें कुछ नीतियां संगठन के लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिये जनहित के लिये बनायी जाती है और कुछ नीतियाँ कर्मचारियों की प्रार्थना पर कर्मचारी कल्याण हेतु बनाई जाती है। प्रायः नीतियों के निम्नलिखित रूपों को क्रमबद्ध किया जाता है-

- **परियोजना नीति-** परियोजना नीति किसी कार्य विशेष के लिये नीति निर्माण होता है। जैसे ही कार्य सम्पन्न होता है, इनका समापन हो जाता है। यह प्रायः नवीन कार्यों के लिये बनायी जाती हैं तथा इस पर बहुत अधिक विनियोग की आवश्यकता होती है।
- **संचालन नीति-** इस प्रकार की नीति का सम्बन्ध संस्था की वास्तविक एवं दैनिक क्रियाओं से होता है। ये मुख्य योजनाओं के आधार पर कर्मचारी प्रबन्ध द्वारा बनायी जाती है। संस्था की पूर्ण सफलता इन्हीं नीतियों पर निर्भर करती है।
- **प्रशासकीय नीति-** प्रशासकीय नीतियों से आशय ऐसे नीतियों से है, जो उच्च प्रबन्ध द्वारा दीर्घकालीन उद्देश्यों के निर्धारण के लिए किया जाता है। वास्तव में प्रशासनिक नीति संस्था के उद्देश्यों, प्रशासकीय दृष्टिकोण एवं आर्थिक मजबूती का दर्पण होता है। ये सर्वाधिक महत्वपूर्ण, व्यापक एवं दीर्घकालीन नीति होती है।
- **दीर्घकालीन नीति-** इस प्रकार की नीति लम्बे समय के लिए बनायी जाती है। इससे संस्था के दीर्घकालीन उद्देश्यों की पूर्ति की जाती है। यह प्रायः पाँच से दस वर्षों के लिये होती हैं।
- **मध्यकालीन नीति-** मध्यकालीन नीति 1 वर्ष से 5 वर्ष के लिए बनायी जाती है। इससे दीर्घकालीन उद्देश्यों की पूर्ति की जाती है।
- **अल्पकालीन नीति-** अल्पकालीन नीति का आशय छोटी अवधि की योजनाओं से होता

नीतियाँ कर्मचारियों की प्रार्थना पर कर्मचारी कल्याण हेतु बनाई जाती है। प्रायः नीतियों के निम्नलिखित रूपों को क्रमबद्ध किया जाता है-

- **परियोजना नीति-** परियोजना नीति किसी कार्य विशेष के लिये नीति निर्माण होता है। जैसे ही कार्य सम्पन्न होता है, इनका समापन हो जाता है। यह प्रायः नवीन कार्यों के लिये बनायी जाती हैं तथा इस पर बहुत अधिक विनियोग की आवश्यकता होती है।
- **संचालन नीति-** इस प्रकार की नीति का सम्बन्ध संस्था की वास्तविक एवं दैनिक क्रियाओं से होता है। ये मुख्य योजनाओं के आधार पर कर्मचारी प्रबन्ध द्वारा बनायी जाती है। संस्था की पूर्ण सफलता इन्हीं नीतियों पर निर्भर करती है।
- **प्रशासकीय नीति-** प्रशासकीय नीतियों से आशय ऐसे नीतियों से है, जो उच्च प्रबन्ध द्वारा दीर्घकालीन उद्देश्यों के निर्धारण के लिए किया जाता है। वास्तव में प्रशासनिक नीति संस्था के उद्देश्यों, प्रशासकीय दृष्टिकोण एवं आर्थिक मजबूती का दर्पण होता है। ये सर्वाधिक महत्वपूर्ण, व्यापक एवं दीर्घकालीन नीति होती है।
- **दीर्घकालीन नीति-** इस प्रकार की नीति लम्बे समय के लिए बनायी जाती है। इससे संस्था के दीर्घकालीन उद्देश्यों की पूर्ति की जाती है। यह प्रायः पाँच से दस वर्षों के लिये होती हैं।
- **मध्यकालीन नीति-** मध्यकालीन नीति 1 वर्ष से 5 वर्ष के लिए बनायी जाती है। इससे दीर्घकालीन उद्देश्यों की पूर्ति की जाती है।
- **अल्पकालीन नीति-** अल्पकालीन नीति का आशय छोटी अवधि की योजनाओं से होता है। ये योजनायें सामान्यतः मासिक, त्रैमासिक, अर्द्धवार्षिक एवं वार्षिक बनाई जाती है। इनका उद्देश्य तत्कालीन समस्याओं की पूर्ति करना होता है।
- **विस्तृत नीति-** संस्था की सभी समस्याओं के लिए बनाई गयी नीति को विस्तृत नीति कहते हैं। इसमें संस्था की सभी समस्याओं पर ध्यान दिया जाता है। इसमें सभी विभागों के उद्देश्यों एवं समस्याओं का विस्तृत विश्लेषण भी किया जाता है।
- **क्रियात्मक नीति-** विभागीय नियोजन संस्था के अलग-अलग विभागों के लिए किया जाता है- जैसे-क्रय, विक्रय, कर्मचारी, उत्पादन आदि के लिए किया गया नियोजन। इससे विशिष्ट या क्रियात्मक नियोजन भी कहते हैं। यह विस्तृत योजना उद्देश्यों के अनुसार तैयार की जाता है।
- **उच्च स्तरीय नीति-** इस प्रकार की नीति में प्रशासन द्वारा बनाई गयी योजनायें शामिल होती हैं। इनमें पूरी संस्था के लिये नीतियों, उद्देश्यों एवं बाजार का स्पष्ट उल्लेख होता है।
- **मध्य स्तरीय नीति-** इस प्रकार की नीति विभागीय प्रबन्धकों द्वारा बनायी जाती है। इन नीतियों का उद्देश्य विभागीय उद्देश्यों को पूर्ण करना होता है।
- **निम्न स्तरीय नीतियाँ-** पर्यवेक्षकों/निरीक्षकों द्वारा बनाई गयी नीतियों को निम्नस्तरीय या अल्पकालीन नीतियाँ कहते हैं। ये नीतियाँ वास्तव में कार्यकारी योजनायें होती हैं।

- **स्थायी नीति-** स्थायी नीतियों का तात्पर्य उन नीतियों से होता है, जिनका बार-बार प्रयोग अर्थात दोहराव किया जाता है।
- **अस्थाई नीति-** इस प्रकार की नीतियाँ किन्हीं विशिष्ट उद्देश्यों को धयान में रख कर बनायी जाती हैं।

एक अच्छी नीति की विषेशतायें क्या हो? इस सम्बन्ध में प्रायः विद्वानों, विश्लेषकों एवं प्रशासकों में मदभेद दृष्टिगत होते हैं। इन मतभेदों को कम से कम करने हेतु निम्नलिखित विशेषताओं का चयन किया जा सकता है। आइये इन्हे क्रमशः समझने का प्रयास करें-

1. नीति स्पष्ट, सरल तथा सुगम्य होनी चाहिये,
2. नीति संस्था के उद्देश्यों के अनुरूप होनी चाहिये,
3. व्यावहारिक रूप से विभागों की सहमति होनी चाहिये,
4. नीति लोचदार परिवर्तनीय, एवं समयानुकूल होनी चाहिये,
5. सम्भावित पर्यावरणीय कारकों के अनुरूप एवं पर्याप्त होनी चाहिये,
6. तथ्यों एवं आधारों के विश्लेषण पर आधारित होनी चाहिये, तथा
7. सुव्यवस्थित, सुसंगठित तथा विस्तृत कार्यविधि होनी चाहिए,
8. आर्थिक रूप से सरकारी नियमों तथा जनहित के अनुकूल होनी चाहिये,

होती हैं। इनमें पूरी संस्था के लिये नीतियों, उद्देश्यों एवं बाजार का स्पष्ट उल्लेख होता है।

- **मध्य स्तरीय नीति-** इस प्रकार की नीति विभागीय प्रबन्धकों द्वारा बनायी जाती है। इन नीतियों का उद्देश्य विभागीय उद्देश्यों को पूर्ण करना होता है।
- **निम्न स्तरीय नीतियाँ-** पर्यवेक्षकों/निरीक्षकों द्वारा बनाई गयी नीतियों को निम्नस्तरीय या अल्पकालीन नीतियाँ कहते हैं। ये नीतियाँ वास्तव में कार्यकारी योजनायें होती हैं।

- **स्थायी नीति-** स्थायी नीतियों का तात्पर्य उन नीतियों से होता है, जिनका बार-बार प्रयोग अर्थात दोहराव किया जाता है।
- **अस्थाई नीति-** इस प्रकार की नीतियाँ किन्हीं विशिष्ट उद्देश्यों को धयान में रख कर बनायी जाती हैं।

एक अच्छी नीति की विषेशतायें क्या हो? इस सम्बन्ध में प्रायः विद्वानों, विश्लेषकों एवं प्रशासकों में मदभेद दृष्टिगत होते हैं। इन मतभेदों को कम से कम करने हेतु निम्नलिखित विशेषताओं का चयन किया जा सकता है। आइये इन्हे क्रमशः समझने का प्रयास करें-

1. नीति स्पष्ट, सरल तथा सुगम्य होनी चाहिये,
2. नीति संस्था के उद्देश्यों के अनुरूप होनी चाहिये,
3. व्यावहारिक रूप से विभागों की सहमति होनी चाहिये,
4. नीति लोचदार परिवर्तनीय, एवं समयानुकूल होनी चाहिये,
5. सम्भावित पर्यावरणीय कारकों के अनुरूप एवं पर्याप्त होनी चाहिये,
6. तथ्यों एवं आधारों के विश्लेषण पर आधारित होनी चाहिये, तथा
7. सुव्यवस्थित, सुसंगठित तथा विस्तृत कार्यविधि होनी चाहिए,
8. आर्थिक रूप से सरकारी नियमों तथा जनहित के अनुकूल होनी चाहिये,
9. वर्तमान एवं भावी निर्णयों से सामजस्य होने के अनुरूप होनी चाहिए,तथा
10. सम्पूर्ण कार्य क्षेत्र के तत्वों की सीमाओं को स्पष्ट करने योग्य होनी चाहिए,

ज्ञातव्य हो कि नीति की उपरोक्त विशेषताओं के साथ-साथ निश्चित रूप से समायान्तर पर नीति के अच्छे और बुरे प्रभावों का मूल्यांकन किया जाना चाहिये जिससे महत्तम लाभ हेतु नकारात्मक प्रभावों को दूर करने के लिये समायनुसार आवश्यक संशोधन; जिससे नीति की उपयोगिता- संगठन, जनता एवं कर्मचारियों के हितों को पूर्णता प्रदान कर सके। अध्ययन को पूर्णतः प्रदान करते हुए आइये नीतियों के दो प्रमुख स्वरूप, यथा-दीर्घकालीन और अल्पकालीन के मध्य अन्तरों को विश्लेषण करने का प्रयास करें-

दीर्घकालीन नीतियाँ	**अल्पकालीन नीतियां**
कार्यकाल लम्बी अवधि का होता है।	नीतियों का कार्यकाल कम अवधि का होता है।
नीतियों में लक्ष्यों की प्रकृति बड़ी होती है।	इन नीतियों में अपेक्षाकृत छोटे लक्ष्य लिए जाते हैं।
इन नीतियों के क्रियान्ववयन में लागत अधिक आती है।	इन नीतियों को क्रियान्वित करने लागत कम आती है।
दीर्घकालीन नीतियों की रणनीति का क्षेत्र व्यापक होता है।	अल्पकालीन नीतियों की रणनीति का क्षेत्र सीमित होता है।

सुव्यवस्थित नीतियों के निर्माण से प्रशासन को शीघ्र निर्णय लेने में सुविधा होती है। एक बार संगठन के उद्देश्य निर्धारित हो जाने के पश्चात योजना का निर्माण किया जाता है। इससे समय और प्रयत्नों की बचत होती है तथा कर्मचारियों का पूर्ण सहयोग प्राप्त होता है। उच्च प्रबन्ध नीति के आधार पर अपने अधीनस्थों के मामलों के सम्बन्ध में अपने अधिकारों का भारार्पण करते हैं। इस प्रकार सुव्यवस्थित नीति के आधार पर अधीनस्थ अपने कर्तव्यों का निष्पादन प्रभावपूर्ण ढंग से, कुशलतापूर्वक करते हैं।

नीतियों की सहायता से कर्मचारियों की क्रियाओं पर नियन्त्रण रखाता है, क्योंकि नीतियों में संगठन के उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिये कर्मचारियों की क्रियायें निर्देशित होती हैं। इन्ही नीतियों की सहायता से प्रशासन संगठन की विभिन्न विभागीय क्रियाओं में समन्वय स्थापित करता है, जिससे संगठन की विविध क्रियाओं में समरूपता आ जाती है। वस्तुतः सुव्यवस्थित, संसगठित एवं सुप्रबन्धित नीतियों से श्रम और प्रबन्ध के सम्बन्ध मधुर रहते हैं, जिससे स्वस्थ एवं दीर्घकालीन सम्बन्धों की स्थापना होती है। जिसका प्रत्यक्ष लाभ जनता को कार्य निष्पादन एवं परदर्शिता के रूप के प्राप्त होता है।

19.6 निर्णयन

सुव्यवस्थित नीतियों के निर्माण से प्रशासन को शीघ्र निर्णय लेने में सुविधा होती है। एक बार संगठन के उद्देश्य निर्धारित हो जाने के पश्चात योजना का निर्माण किया जाता है। इससे समय और प्रयत्नों की बचत होती है तथा कर्मचारियों का पूर्ण सहयोग प्राप्त होता है। उच्च प्रबन्ध नीति के आधार पर अपने अधीनस्थों के मामलों के सम्बन्ध में अपने अधिकारों का भारार्पण करते हैं। इस प्रकार सुव्यवस्थित नीति के आधार पर अधीनस्थ अपने कर्तव्यों का निष्पादन प्रभावपूर्ण ढंग से, कुशलतापूर्वक करते हैं।

नीतियों की सहायता से कर्मचारियों की क्रियाओं पर नियन्त्रण रखाता है, क्योंकि नीतियों में संगठन के उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिये कर्मचारियों की क्रियायें निर्देशित होती हैं। इन्ही नीतियों की सहायता से प्रशासन संगठन की विभिन्न विभागीय क्रियाओं में समन्वय स्थापित करता है, जिससे संगठन की विविध क्रियाओं में समरूपता आ जाती है। वस्तुतः सुव्यवस्थित, संसगठित एवं सुप्रबन्धित नीतियों से श्रम और प्रबन्ध के सम्बन्ध मधुर रहते हैं, जिससे स्वस्थ एवं दीर्घकालीन सम्बन्धों की स्थापना होती है। जिसका प्रत्यक्ष लाभ जनता को कार्य निष्पादन एवं परदर्शिता के रूप के प्राप्त होता है।

19.6 निर्णयन

प्रत्येक प्रशासनिक संगठन में कार्य दिवसों के प्रारम्भ से लेकर अन्त तक निरन्तर किसी न किसी प्रकार के निर्णय लेने पड़ते हैं। साधारणतः निर्णयन से तात्पर्य किसी कार्य के लिए क्या करे, कैसे करे, क्या न करे के बीच अन्तिम निर्णय लेने से होता है। चूँकि संगठन में निर्णय लेना प्रशासन का कार्य है, इसलिये प्रशासनिक क्रिया को निर्णय लेने की प्रक्रिया भी कहा जाता है। किसी भी समस्या का समाधान करने के लिये प्रशासक के सम्मुख विभिन्न विकल्प होते हैं।

इन विभिन्न विकल्पों में पूर्व निर्धारित उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु सर्वोत्तम विकल्प का चयन करना ही निर्णयन के नाम से सम्बोधित किया जाता है। इस प्रकार प्रशासनिक संगठन में निर्णयन रक्त प्रवाहित के समान है। प्रशासक द्वारा सम्पादित कोई भी कार्य निर्णयन पर ही आधारित होते हैं। वस्तुतः निर्णयन की प्रक्रिया में प्रबन्धक द्वारा क्रमशः समस्या की पहचान, विश्लेशण, विकल्पों का चयन और अंततः सर्वोत्तम विकल्प का मूल्यांकन करना होता है।

निर्णयन को विद्वानों ने अपने-अपने दृष्टिककोण से परिभाषित किया है, किन्तु दृष्टिकोणों में विविधिता के बाद भी प्रक्रिया एक ही है। आदेश निर्णयन की विभिन्न परिभाषाओं को आत्मसात करने का पर्यास करें -

- पीटर एफ0 ड्रकर के अनुसार- प्रशासन की प्रत्येक क्रिया निर्णय पर आधारित होती है।"
- जार्ज आर0 टैरी के अनुसार- निर्णय लेना किसी कसौटी पर आधारित दो या दो से अधिक सम्भावित विकल्पों में से किसी एक का चयन है।

- अर्नेस्ट डेल के अनुसार- प्रशासकीय निर्णय वे निर्णय होते हैं, जो सदैव सही प्रशासकीय क्रियाओं जैसे- नियोजन, संगठन कर्मचारियों की भर्ती, निर्देशन, नियंत्रण, नवप्रवर्तन और प्रतिनिधित्व में से किसी एक के दौरान लिए जाते हैं।
- कुण्टज एवं ' ओ' डोनेल के अनुसार- निर्णयन एक क्रिया को करने के विभिन्न विकल्पों में से किसी एक का वास्तविक चयन है। यह नियोजन की आत्मा है।
- डी0 ई0 मैकफरलैड के अनुसार- निर्णय लेना चुनने की एक क्रिया है, जिसके द्वारा प्रशासक एक दी हुई परिस्थितिक में क्या किया जाना चाहिये, इस सम्बन्ध में निष्कर्ष पर पहुचता है। निर्णय किसी व्यवहार का प्रतिनिधित्व करता है, जिसका चयन अनेक सम्भव विकल्पों में से किया जाता है।
- आर0 एस0 डावर के अनुसार- निर्णय लेना एक ऐसा चयन है कि जो कि दो या दो से अधिक सम्भावित विकल्पों में से किसी एक व्यवहार के विकल्प पर आधारित होता है। तय करने से आशय काट देना अथवा व्यावहारिक रूप में किसी निष्कर्ष पर आना है।
- जी0 एल0 एस0 शेकल के अनुसार- निर्णय लेना रचनात्मक मानसिक क्रिया का वह केन्द्र बिन्दु होता है जहाँ ज्ञान, विचार, भावना तथा कल्पना कार्यपूर्ति के लिये संयुक्त ही जाते हैं।

उपर्युक्त परिभाषाओं के विश्लेषणात्मक अध्ययन के आधार पर कहा जा सकता है कि निर्णयन एक ऐसी प्रक्रिया है, जिसमें प्रशासक वर्ग विभिन्न वैकल्पिक विधियों में से सर्वश्रेष्ठ विधि का चयन करता है। अंततः उपरोक्त परिभाषाओं के आधार पर यह कहा जा सकता है कि निर्णयन प्रशासनिक सफलता के लिए अति आवश्यक प्रक्रिया है। इस प्रकार उपरोक्त निर्वाचन के आलोक में आइये निर्णयन की कुछ महत्वपूर्ण विशेषताओं को सूचिबद्ध कर समझने का प्रयास करें-

1. तर्क पूर्ण विचार-विमर्श के पश्चात् ही निर्णयन प्रक्रिया सम्पन्न की जाती है।

सम्भावित विकल्पों में से किसी एक का चयन है।

- अर्नेस्ट डेल के अनुसार- प्रशासकीय निर्णय वे निर्णय होते हैं, जो सदैव सही प्रशासकीय क्रियाओं जैसे- नियोजन, संगठन कर्मचारियों की भर्ती, निर्देशन, नियंत्रण, नवप्रवर्तन और प्रतिनिधित्व में से किसी एक के दौरान लिए जाते हैं।
- कुण्टज एवं ' ओ' डोनेल के अनुसार- निर्णयन एक क्रिया को करने के विभिन्न विकल्पों में से किसी एक का वास्तविक चयन है। यह नियोजन की आत्मा है।
- डी0 ई0 मैकफरलैड के अनुसार- निर्णय लेना चुनने की एक क्रिया है, जिसके द्वारा प्रशासक एक दी हुई परिस्थितिक में क्या किया जाना चाहिये, इस सम्बन्ध में निष्कर्ष पर पहुचता है। निर्णय किसी व्यवहार का प्रतिनिधित्व करता है, जिसका चयन अनेक सम्भव विकल्पों में से किया जाता है।
- आर0 एस0 डावर के अनुसार- निर्णय लेना एक ऐसा चयन है कि जो कि दो या दो से अधिक सम्भावित विकल्पों में से किसी एक व्यवहार के विकल्प पर आधारित होता है। तय करने से आशय काट देना अथवा व्यावहारिक रूप में किसी निष्कर्ष पर आना है।
- जी0 एल0 एस0 शेकल के अनुसार- निर्णय लेना रचनात्मक मानसिक क्रिया का वह केन्द्र बिन्दु होता है जहॉं ज्ञान, विचार, भावना तथा कल्पना कार्यपूर्ति के लिये संयुक्त ही जाते हैं।

उपर्युक्त परिभाषाओं के विश्लेषणात्मक अध्ययन के आधार पर कहा जा सकता है कि निर्णयन एक ऐसी प्रक्रिया है, जिसमें प्रशासक वर्ग विभिन्न वैकल्पिक विधियों में से सर्वश्रेष्ठ विधि का चयन करता है। अंततः उपरोक्त परिभाषाओं के आधार पर यह कहा जा सकता है कि निर्णयन प्रशासनिक सफलता के लिए अति आवश्यक प्रक्रिया है। इस प्रकार उपरोक्त निर्वाचन के आलोक में आइये निर्णयन की कुछ महत्वपूर्ण विशेषताओं को सूचिबद्ध कर समझने का प्रयास करें-

1. तर्क पूर्ण विचार-विमर्श के पश्चात् ही निर्णयन प्रक्रिया सम्पन्न की जाती है।
2. निर्णयन, अनेक विकल्पों में से सर्वोत्तम विकल्प चयन की प्रक्रिया है।
3. निर्णयन एक प्रशासकीय प्रक्रिया है इसलिए इसमें प्रशासक का पूर्ण ज्ञान, विवेक व अनुमान आदि का सम्मिश्रण होना चाहिए।
4. निर्णयन प्रक्रिया सुव्यवस्थित प्रारम्भ का प्रथम सोपन नियोजन से प्रारम्भ होती है।
5. निर्णयन की प्रकृति धनात्मक व ऋणात्मक दोनों हो प्रकार की हो सकती है।
6. निर्णयन कला और विज्ञान दोनों है, अतः यह साधन है साध्य नहीं।
7. निर्णयन का मूल्यांकन किया जा सकता है।
8. निर्णयन में समय काल और परिस्थितियों का विषेश महत्व होता है।

उपरोक्त विशेषताओं के आधार पर कहा जा सकता है कि निर्णय प्रक्रिया के अन्तर्गत पूर्व-निर्धारित उद्देश्यों की प्राप्ति के लिये अनेक विकल्पों में से किसी एक विकल्प को चुनने का कार्य किया जाता है। वस्तुतः निर्णय प्रायः किसी नीति, नियम, आदेश निर्देश या नियंत्रण के रूप में होता है। निर्णयन

की प्रकृति के सम्बन्ध में निम्नलिखित बातें विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। आइये इन्हें बिन्दुवार विश्लेषित कर आत्मसात् करने का प्रयास करें-

- **एक गत्यात्मक प्रक्रिया-** प्रत्येक प्रशासकीय घटना किसी न किसी रूप में निर्णयन को प्रभावित करती है। यदि पूर्व में कोई समस्या उदय होती है, तो वर्तमान में उस समस्या के समाधान के लिये वैकल्पिक विधियों पर विचार कर सर्वोत्तम विधि का चयन किया जाता है तथा आगे आने वाले समय में उस सर्वोत्तम विधि की सहायता से निर्णय लाया जाता है। इसलिये कहा जा सकता है कि निर्णयन एक नितान्त गत्यातमक प्रक्रिया है।
- **एक आधार रूप-** निणर्य लेने के पश्चात निर्णयकर्ता को आधार प्राप्त हो जाता है और उसे अपने निर्णय के आधारों के अनुसार ही समस्त नियोजन कार्य सम्पन्न करने पड़ते हैं तथा समस्त प्रशासनिक क्रियायें भी इन्हीं निर्णय रूपी आधारों के अनुरूप ही सम्पन्न की जाती है।
- **मूल्यांकन एवं पुर्नमूल्यांकन-** निर्णयन की प्रक्रिया में लिये गये निर्णयों का मूल्यांकन एवं पुर्नमूल्यांकन करना नितान्त आवश्यक है, क्योंकि निर्णय के परिणाम का मूल्यांकन करके अपेक्षित परिणामों से उसकी तुलना की जाती है और निर्णयों की साथर्कता का पता लगा कर पुर्नमूल्यांकन किया जा सकता है।
- **नये उप-निर्णयों की उत्पति-** अनेक निर्णय इस प्रकार के होते हैं, जिनके कारण कभी-

की प्रकृति के सम्बन्ध में निम्नलिखित बातें विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। आइये इन्हें बिन्दुवार विश्लेषित कर आत्मसात् करने का प्रयास करें-

- **एक गत्यात्मक प्रक्रिया-** प्रत्येक प्रशासकीय घटना किसी न किसी रूप में निर्णयन को प्रभावित करती है। यदि पूर्व में कोई समस्या उदय होती है, तो वर्तमान में उस समस्या के समाधान के लिये वैकल्पिक विधियों पर विचार कर सर्वोत्तम विधि का चयन किया जाता है तथा आगे आने वाले समय में उस सर्वोत्तम विधि की सहायता से निर्णय लाया जाता है। इसलिये कहा जा सकता है कि निर्णयन एक नितान्त गत्यातमक प्रक्रिया है।
- **एक आधार रूप-** निर्णय लेने के पश्चात निर्णयकर्ता को आधार प्राप्त हो जाता है और उसे अपने निर्णय के आधारों के अनुसार ही समस्त नियोजन कार्य सम्पन्न करने पड़ते हैं तथा समस्त प्रशासनिक क्रियायें भी इन्हीं निर्णय रूपी आधारों के अनुरूप ही सम्पन्न की जाती है।
- **मूल्यांकन एवं पुर्नमूल्यांकन-** निर्णयन की प्रक्रिया में लिये गये निर्णयों का मूल्यांकन एवं पुर्नमूल्यांकन करना नितान्त आवश्यक है, क्योंकि निर्णय के परिणाम का मूल्यांकन करके अपेक्षित परिणामों से उसकी तुलना की जाती है और निर्णयों की साथर्कता का पता लगा कर पुर्नमूल्यांकन किया जा सकता है।
- **नये उप-निर्णयों की उत्पति-** अनेक निर्णय इस प्रकार के होते हैं, जिनके कारण कभी-कभी अनेक उप-निर्णय लेने पड़ते हैं। अथवा पहले लिये गये निर्णयों की कमियों को दूर करने के लिये नये उप-निर्णय लेने पड़ते हैं। वस्तुतः यह प्रशासक की योग्यता पर निर्भर होता है।
- **तर्कसंगत प्रक्रिया-** निर्णयन की प्रक्रिया एक तर्कसंगत प्रक्रिया है, जिसके अन्तर्गत निर्णयकर्ता को तर्कपूर्ण विधि से विभिन्न उपलब्ध विकल्पों में से सर्वोतम विकल्प का अन्तिम चयन करना होता है। चूँकी यह पूरी प्रक्रिया पूर्व निर्धारित उद्देश्यों को पूर्ण करने हेतु सम्पादित होती है। अतः यह तर्क संगत प्रक्रिया होती है।

निर्णयन प्रशासक की एक सुव्यवस्थित, संगठित तथा क्रमबद्ध प्रक्रिया है। निर्णयन प्रकृति का सम्पन्न विश्लेषण यह इंगित करता है कि एक कुशल प्रशासक समय, काल, परिस्थिति के अनुसार विभिन्न प्रकार के निर्णय लेता है। लोक प्रशासक के विभिन्न विद्वानों ने निर्णय के प्रकारों का वर्गीकरण भिन्न-भिन्न प्रकार से किया है। आइये इसके विभिन्न स्वरूपों को समझने का प्रयास करें-

- **आवश्यक निर्णय-** प्रशासन की दैनिक क्रियाओं के सम्बन्ध में लिये गये निर्णयों को आवश्यक निर्णय के वर्ग में रखा जाता है। आवश्यक निर्णयों के अन्तर्गत वित्त, सेवी वर्गीय, आदि से सम्बन्धित महत्वपूर्ण कार्यों के सम्बन्ध में लिये गये निर्णयों को सम्मिलित किया

जाता है। इस वर्ग के निर्णय प्रायः उच्च प्रशासकों के द्वारा लिये जाते हैं। संगठन की सफलता से प्रत्यक्ष तौर इस प्रकार के निर्णय सम्बद्ध होते हैं।

- **अल्पअवधि के निर्णय-** इस प्रकार के निर्णयों को क्रियाशील निर्णयों के रूप में भी जाना जाता है। इस प्रकार के निर्णयों के लिये अपेक्षाकृत कम योग्यता तथा तर्कशाक्ति की आवश्यकता होती है, क्योंकि ऐसे निर्णय संगठन की सामान्य प्रकृति के सम्बन्ध में बार-बार लिये जाते है तथा कभी-कभी इनमें तिशीघ्र परिवर्तन भी करने पड़ते है।
- **अन्तर विभागीय निर्णय-** ऐसे निर्णय जो विभिन्न विभागों से सम्बन्धित होते हैं, उन्हें अन्तर-विभागीय निर्णयों के रूप मान्यता दी जाती है। ऐसे निर्णय सभी विभागों के विभागाध्यक्षों के द्वारा सर्वसम्मत्ति से लिये जाते हैं। इस प्रकार के निर्णयों की सहायता से ही प्रशासन की समस्त क्रियायें पूर्व-नियोजित ढंग से पूर्ण की जाती हैं।
- **एकल विभागीय निर्णय-** ऐसे निर्णय जो विभागीय प्रभारियों के द्वारा अपने विभागों के कार्य निष्पादन में सुधार लाने के सम्बन्ध में लिये जाते हैं, उन्हें एकल विभागीय निर्णय कहते हैं।
- **व्यक्तिगत निर्णय-** संगठन के किसी पदाधिकारी द्वारा अपने कार्य दायित्व के सम्बन्ध में लिये गये निर्णय व्यक्तिगत निर्णय के रूप में जाने जाते हैं। इस प्रकार के निर्णय संस्था के ऊपर, विभाग के ऊपर तथा आम जनों के लिये बाध्यकारी नहीं होते हैं।

प्रायः प्रशासनिक संगठन में निर्णय लेना प्रशासक का मुख्य कार्य होता है। यदि प्रशासक के कार्यों में से निर्णय लेने का कार्य विरक्त कर दिया जाये, तो निश्चय ही प्रशासन की प्रक्रिया निर्जीव हो जायेगी। वास्तव में जो व्यक्ति निर्णय लेता है वही व्यक्ति उत्तरदायी प्रशासक कहलाता है।

वर्तमान प्रशासनिक परिवेश में प्रशासन के प्रत्येक में निर्णय लेने पड़ते हैं। वास्तव में देखा जाये तो प्रशासक का प्रमुख कार्य प्रशासकीय कार्यों के सम्बन्ध में निर्णय लेना ही है। विभिन्न विद्वानों के

जाता है। इस वर्ग के निर्णय प्रायः उच्च प्रशासकों के द्वारा लिये जाते हैं। संगठन की सफलता से प्रत्यक्ष तौर इस प्रकार के निर्णय सम्बद्ध होते हैं।

- **अल्पअवधि के निर्णय-** इस प्रकार के निर्णयों को क्रियाशील निर्णयों के रूप में भी जाना जाता है। इस प्रकार के निर्णयों के लिये अपेक्षाकृत कम योग्यता तथा तर्कशाक्ति की आवश्यकता होती है, क्योंकि ऐसे निर्णय संगठन की सामान्य प्रकृति के सम्बन्ध में बार-बार लिये जाते है तथा कभी-कभी इनमें तिशीघ्र परिवर्तन भी करने पड़ते है।
- **अन्तर विभागीय निर्णय-** ऐसे निर्णय जो विभिन्न विभागों से सम्बन्धित होते हैं, उन्हें अन्तर-विभागीय निर्णयों के रूप मान्यता दी जाती है। ऐसे निर्णय सभी विभागों के विभागाध्यक्षों के द्वारा सर्वसम्मत्ति से लिये जाते हैं। इस प्रकार के निर्णयों की सहायता से ही प्रशासन की समस्त क्रियायें पूर्व-नियोजित ढंग से पूर्ण की जाती हैं।
- **एकल विभागीय निर्णय-** ऐसे निर्णय जो विभागीय प्रभारियों के द्वारा अपने विभागों के कार्य निष्पादन में सुधार लाने के सम्बन्ध में लिये जाते हैं, उन्हें एकल विभागीय निर्णय कहते हैं।
- **व्यक्तिगत निर्णय-** संगठन के किसी पदाधिकारी द्वारा अपने कार्य दायित्व के सम्बन्ध में लिये गये निर्णय व्यक्तिगत निर्णय के रूप में जाने जाते हैं। इस प्रकार के निर्णय संस्था के ऊपर, विभाग के ऊपर तथा आम जनों के लिये बाध्यकारी नहीं होते हैं।

प्रायः प्रशासनिक संगठन में निर्णय लेना प्रशासक का मुख्य कार्य होता है। यदि प्रशासक के कार्यों में से निर्णय लेने का कार्य विरक्त कर दिया जाये, तो निश्चय ही प्रशासन की प्रक्रिया निर्जीव हो जायेगी। वास्तव में जो व्यक्ति निर्णय लेता है वही व्यक्ति उत्तरदायी प्रशासक कहलाता है।

वर्तमान प्रशासनिक परिवेश में प्रशासन के प्रत्येक में निर्णय लेने पड़ते हैं। वास्तव में देखा जाये तो प्रशासक का प्रमुख कार्य प्रशासकीय कार्यों के सम्बन्ध में निणर्य लेना ही है। विभिन्न विद्वानों के अनुसार विभिन्न निर्णयों के आधार पर ही प्रशासकीय कार्यों का ढाँचा निर्मित होता है।

इस प्रकार कहा जा सकता हैं कि निर्णयन हेतु उपलब्ध विकल्पों में से सर्वोत्तम विकल्प के चयन के रूप में सम्बोधित किया जा सकता है। वस्तुतः निर्णयन वैकल्पिक कार्यमार्गों में से सचेतन रूप में चुनाव करने की प्रक्रिया है, वर्तमान में प्रशासन की सफलता का केन्द्र बन गया है।

वास्तव में जो प्रशासक सुव्यवस्थित, तर्कसंगत व्यवस्थापूर्ण निर्णय लेने में सफल होता है। उसकी योग्यता का गुणगान सर्वत्र होता है। इस प्रकार यह आवश्यक है कि यह समझ लिया जाये कि निर्णय, लेने की सर्व स्वीकार प्रक्रिया है। विद्वानों द्वारा प्रक्रिया के पाँच चरणों की स्थापना की गयी है। आइये इन्हें समझने का प्रयास करें-

- **समस्या का निर्धारण-** निर्णयन प्रक्रिया का प्रथम चरण, समस्या का निर्धारण किये बिना उसका उचित समाधान सम्भव नहीं है। निर्णयन की प्रक्रिया का प्रारम्भ किसी समस्या या अवसर के प्रत्यक्ष ज्ञान तथा उसके सम्बन्ध में निर्णय लेने की आवश्यकता से होता है।

- **समस्या का विश्लेषण-** प्रशासक द्वारा जब समस्या की पहचान कर ली जाती है तथा उसके स्वरूप को आत्मसात् कर लिया जाता है, तब समस्या के विश्लेषण का चरण प्रारम्भ होता है। इस चरण में प्रशासक को उन उद्देश्यों का निर्धारिण करना होता है, जिन्हें वह समस्या के समाधान द्वारा प्राप्त करने की इच्छा रखता है।
- **विकल्पों की स्थापना-** निर्णयन के तृतीय चरण में प्रशासक उन विकल्पों की खोज करता है, जो कि समस्या के समाधान महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है।
- **विकल्पों का मूल्यांकन-** विकल्पों का महत्व इस बात में निहित है कि उनसे किस सीमा तक वांछित समस्या का हल प्राप्त हो सकता है। इस चरण में निर्णयकर्ता विकल्पों के प्रभावों का पूर्वानुमान लगाता है, उसके क्या परिणामों का मूल्यांकन करने का प्रयास करता है।
- **अन्तिम विकल्प का चयन-** प्रशासकों को निर्णय लेते समय यह देखना पड़ता है कि संगठनात्मक परिस्थितियों तथा सीमाओं की दृष्टि से कौन सा विकल्प सर्वोत्तम तथा अन्तिम होगा, जो विकल्प निर्धारित समस्या का सुव्यवस्थित हल प्रदान कर सके, कम जोखिमपूर्ण हो, मितव्ययी हो, समयानुकूल हो, व्यावहारिक हो, वही विकल्प ही अन्तिम होता है।

अभ्यास प्रश्न-

1. किस विद्वान के अनुसार, नेतृत्व व्यक्ति का वह व्यावहारिक गुण है, जिसके द्वारा वह अन्य व्यक्तियों को प्रभावित व संगठित करके अभष्टि कार्य कराने में सफल हो जाता है।
   क. कीथ डेविस ख. बरनाई ग. टैरी घ. टेलर
2. नेतृत्व की कितनी शैलियाँ हैं?
   क. चार ख. पाँच ग. तीन घ. दो
3. नेतृत्व की किस शैली का भाव नकारात्मक होता है?

चुनाव करने की प्रक्रिया है, वर्तमान में प्रशासन की सफलता का केन्द्र बन गया है।

वास्तव में जो प्रशासक सुव्यवस्थित, तर्कसंगत व्यवस्थापूर्ण निर्णय लेने में सफल होता है। उसकी योग्यता का गुणगान सर्वत्र होता है। इस प्रकार यह आवश्यक है कि यह समझ लिया जाये कि निर्णय, लेने की सर्व स्वीकार प्रक्रिया है। विद्वानों द्वारा प्रक्रिया के पाँच चरणों की स्थापना की गयी है। आइये इन्हें समझने का प्रयास करें-

- **समस्या का निर्धारण-** निर्णयन प्रक्रिया का प्रथम चरण, समस्या का निर्धारण किये बिना उसका उचित समाधान सम्भव नहीं है। निर्णयन की प्रक्रिया का प्रारम्भ किसी समस्या या अवसर के प्रत्यक्ष ज्ञान तथा उसके सम्बन्ध में निर्णय लेने की आवश्यकता से होता है।

- **समस्या का विश्लेषण-** प्रशासक द्वारा जब समस्या की पहचान कर ली जाती है तथा उसके स्वरूप को आत्मसात् कर लिया जाता है, तब समस्या के विश्लेषण का चरण प्रारम्भ होता है। इस चरण में प्रशासक को उन उद्देश्यों का निर्धारिण करना होता है, जिन्हें वह समस्या के समाधान द्वारा प्राप्त करने की इच्छा रखता है।
- **विकल्पों की स्थापना-** निर्णयन के तृतीय चरण में प्रशासक उन विकल्पों की खोज करता है, जो कि समस्या के समाधान महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है।
- **विकल्पों का मूल्यांकन-** विकल्पों का महत्व इस बात में निहित है कि उनसे किस सीमा तक वांछित समस्या का हल प्राप्त हो सकता है। इस चरण में निर्णयकर्ता विकल्पों के प्रभावों का पूर्वानुमान लगाता है, उसके क्या परिणामों का मूल्यांकन करने का प्रयास करता है।
- **अन्तिम विकल्प का चयन-** प्रशासकों को निर्णय लेते समय यह देखना पड़ता है कि संगठनात्मक परिस्थितियों तथा सीमाओं की दृष्टि से कौन सा विकल्प सर्वोत्तम तथा अन्तिम होगा, जो विकल्प निर्धारित समस्या का सुव्यवस्थित हल प्रदान कर सके, कम जोखिमपूर्ण हो, मितव्ययी हो, समयानुकूल हो, व्यावहारिक हो, वही विकल्प ही अन्तिम होता है।

अभ्यास प्रश्न-

1. किस विद्वान के अनुसार, नेतृत्व व्यक्ति का वह व्यावहारिक गुण है, जिसके द्वारा वह अन्य व्यक्तियों को प्रभावित व संगठित करके अभष्टि कार्य कराने में सफल हो जाता है।
   क. कीथ डेविस ख. बरनाई ग. टैरी घ. टेलर
2. नेतृत्व की कितनी शैलियों हैं?
   क. चार ख. पाँच ग. तीन घ. दो
3. नेतृत्व की किस शैली का भाव नकारात्मक होता है?
   क. प्रबन्धकीय ख. सहभागिता ग. हस्तक्षेप रहित घ. एक तंत्रीय
4. नेतृत्व, प्रबन्ध का कौन सा भाग है?
   क. बाध्य ख. आन्तरिक ग. मध्य घ. उच्चस्तरीय
5. किस विद्वान के अनुसार नीतियाँ एक पूर्व निर्धारित मार्ग होती हैं?
   क. डेल ग्रोडर ख. फिलिप्पो ग. टेलर घ. मेयो
6. जिन नीतियों में लक्ष्यों की प्रकृति बड़ी होती है, वे किस प्रकार की नीति होती है?
   क. दीर्घ कालीन ख. लघुकालीन ग. मध्य कालीन घ. समसामजिक
7. जिन नीतियों के क्रियान्वयन में लागत कम आती है तथा जिनका क्षेत्र सीमित होता है, वे किस प्रकार की नीतियाँ होती हैं?
   क. दीर्घ कालीन ख. लघुकालीन ग. मध्यकालीन घ. समसामयिक

19.7 सारांश

लोक सेवा के क्षेत्र में सबसे महत्वपूर्ण कार्य, किसी समूह, संगठन या संस्था के समूचे कार्य को वांछित उद्देश्यों की ओर संचालित और निर्देशित करने के लिए नेतृत्व प्रदान करना है। सरकारी तंत्र के अंतर्गत संगठनों के फैलाव, दिनों दिन बढ़ती संख्या के कारण नेतृत्व और भी अधिक महत्वपूर्ण हो गया है। नेतृत्व का तात्पर्य प्रबन्धकों के उस व्यावहारिक गुण से है, जिसके द्वारा वे अपने अधीनस्थों को प्रभावित करके उनके विश्वास को जीतने का प्रयास करते हैं, उनका स्वाभिमान जाग्रत करते हैं, उनका सहयोग प्राप्त करते हैं तथा अपने अधीनस्थ-समुदाय को संगठित करके पूर्व निर्धारित उद्देश्यों के प्रति उनका मार्ग-दर्शन करते हैं।

नीतियाँ एक प्रकार का विस्तृत विवरण होती हैं, जो कि प्रशासनिक संगठन के पूर्व-निर्धारित लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिये संगठन के निर्णयों के लिये मार्गदर्शन करने का कार्य करती हैं। यह स्पष्ट करती हैं कि किसी विशिष्ट परिस्थिति में संगठन के सदस्य किस प्रकार व्यवहार करेंगे तथा निर्णय लेंगें।

क. दीर्घ कालीन ख. लघुकालीन ग. मध्य कालीन घ. समसामजिक

7. जिन नीतियों के क्रियान्वयन में लागत कम आती है तथा जिनका क्षेत्र सीमित होता है, वे किस प्रकार की नीतियाँ होती हैं?

क. दीर्घ कालीन ख. लघुकालीन ग. मध्यकालीन घ. समसामयिक

19.7 सारांश

लोक सेवा के क्षेत्र में सबसे महत्वपूर्ण कार्य, किसी समूह, संगठन या संस्था के समूचे कार्य को वांछित उद्देश्यों की ओर संचालित और निर्देशित करने के लिए नेतृत्व प्रदान करना है। संरकारी तंत्र के अंतर्गत संगठनों के फैलाव, दिनों दिन बढ़ती संख्या के कारण नेतृत्व और भी अधिक महत्वपूर्ण हो गया है। नेतृत्व का तात्पर्य प्रबन्धकों के उस व्यावहारिक गुण से है, जिसके द्वारा वे अपने अधीनस्थों को प्रभावित करके उनके विश्वास को जीतने का प्रयास करते हैं, उनका स्वाभिमान जाग्रत करते हैं, उनका सहयोग प्राप्त करते हैं तथा अपने अधीनस्थ-समुदाय को संगठित करके पूर्व निर्धारित उद्देश्यों के प्रति उनका मार्ग-दर्शन करते हैं।

नीतियाँ एक प्रकार का विस्तृत विवरण होती हैं, जो कि प्रशासनिक संगठन के पूर्व-निर्धारित लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिये संगठन के निर्णयों के लिये मार्गदर्शन करने का कार्य करती हैं। यह स्पष्ट करती हैं कि किसी विशिष्ट परिस्थिति में संगठन के सदस्य किस प्रकार व्यवहार करेंगे तथा निर्णय लेगें।

प्रत्येक प्रशासनिक संगठन में कार्य दिवसों के प्रारम्भ से लेकर अन्त तक निरन्तर किसी न किसी प्रकार के निर्णय लेने पड़ते हैं। साधारणतः निर्णयन से तात्पर्य किसी कार्य के लिए क्या करें, कैसे करें, क्या न करें के बीच अन्तिम निर्णय लेने से होता है। चूँकि संगठन में निर्णय लेना प्रशासन का कार्य है, इसलिये प्रशासनिक क्रिया को निर्णय लेने की प्रक्रिया भी कहा जाता है। किसी भी समस्या का समाधान करने के लिये प्रशासक के सम्मुख विभिन्न विकल्प होते हैं।

19.8 शब्दावली

अधिकार- आदेश देने की शक्ति तथा यह निश्चित कर लेना कि इन आदेशों का पालन किया जा रहा है।

प्रशासन- नियमों तथा कानूनों के अन्तर्गत प्रकार्यों को सुनिश्चित करने वाली संस्था।

प्रबंध की सार्वभौमिकता- प्रबंध विज्ञान के मूल अथवा प्रमुख तत्व, सिद्धांत, अवधारणाएँ सभी प्रकार की परिस्थितियों में सभी स्थानों पर लागू होत हैं, व्यवहार में उनका प्रयोग सांस्कृतिक अंतरों, संभावनाओं अथवा परिस्थितियों के अनुसार किया जाता है।

नेतृत्व- समूह के लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए व्यक्तियों को प्रभावित करने की प्रक्रिया की कला।

निर्णयन- किसी कार्य को करने के विभिन्न विकल्पों में से सर्वश्रेष्ठ विकल्प का चयन या किसी कार्य के निष्पादन के लिए विवेकपूर्ण चयन।

नियंत्रण- अधीनस्थों के कार्यों का मापन तथा सुधार, जिससे यह आश्वस्त हो सके कि कार्य नियोजन के अनुसार किया गया है।

संकल्पनात्मक कुशलता- संगठन की समस्त गतिविधियों व हितों को समझने तथा संयोजित करने में प्रबंधक की योग्यता।

19.9 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1-ख, 2-ग, 3-घ, 4-ख, 5- क, 6-क, 7-ख

19.10 सन्दर्भ ग्रन्थ-सूची

1. हारोल्ड कून्टज एवं हेनीज विचरिच, इशनशियल्स ऑफ मैनेजमेंन्ट, मैग्राहिल इन्टरनेशनल, नई दिल्ली-2000,
2. प्रशान्त के0 घोष, कार्यालय प्रबन्धन, सुल्तान चन्द एण्ड सन्स, 2000,
3. डॉ0 जे0 के0 जैन, प्रबन्ध के सिद्धान्त, प्रतीक पब्लिकेशन, इलाहाबाद-2002,
4. डॉ0 एल0 एम0 प्रसाद , प्रबन्ध के सिद्धान्त, सुल्तान चन्द एण्ड सन्स, नई दिल्ली- 2005,

19.11 सहायक उपयोगी पाठ्य सामग्री

1. Barnsard Chester I. Organisation and Mangenent: Harvard Unversity Cambridge 1948,
2. Hicks, Herbert G and Gullett, C. Ray, Organisations: Theory and Behaviour: McGraw Hill Book Company: New York, 1975.
3. Luthans, Fred, Mangement in the Public Service: McGraw Hill Book Company Inc: New York, 1954.
4. Nigo, Felix A and Nigro Lloyd G. Modem Public Administration: Happer and Row Publishers: New York, 1973.

4:50
46
46

अध्याय-6
निर्णय-निर्माण पद्धतिः हरबर्ट साईमन
(Decision-Making Approach: Herbert Simon)

प्रबन्ध की सभी समस्याओं में से निर्णय करने की समस्या सबसे कठिन है। साधारण जीवन में भी कार्य करने से पहले यह निर्णय करना कि यह कार्य किया जाये अथवा न किया जाय, बहुत कठिन काम है। व्यक्ति परामर्श, मार्ग-दर्शन तथा सुझाव लेता रहता है तथा जब निर्णय लेता है तो बहुत देर हो जाती है और फिर उसका मन बदल जाता है। प्रायः यह हम सभी के साथ होता है। सर लाप गोर बूथ जो कभी भारत में ब्रिटिश हाई कमिशनर थे, ने ठीक ही कहा है कि निर्णय लेना कितना कठिन है, "यदि आप यह कार्य सुगम समझते हैं तो सूट खरीदने पर ही इसको लागू कीजिए। किसी निश्चित दिन आप यह निर्णय करें कि आगामी डेढ़ वर्ष में आपको एक सूट की आवश्यकता है। विद्यमान सामाजिक परिस्थितियों को द ष्टि में रखते हुए सप्लाई करने वालों तथा उनके नमूनों, रंगों तथा स्टाइलों के बारे में विस्त त सूचना वांछित होगी इसलिए आप सभी दरजियों (उनको भी जो दूर हैं) से सूचना मंगवाएँगे तथा इसमें तीन मास लग जाएंगे जिसमें आपको तीन मास और लग जायेंगे। तब आप संक्षिप्त सूचना एक समिति मांगेंगे जिसमें आपको तीन मास और लग जायेंगे। तब आप संक्षिप्त सूचना एक समिति के सम्मुख प्रस्तुत करेंगे जिसमें आपकी पत्नी, भाई तथा अन्य मित्र सम्मिलित होंगे। इसमें एक वर्ष और लग जायेगा तथा निस्सन्देह आपने एक आदर्श सूट आदर्श कीमत पर लिया है किन्तु तब तक स्टाइल बदल चुका हेगा।"[1]

किन्तु यह कोई संगठन हमारी तरह निर्णय ले सकता है? क्या वे इस तरह निर्णय निलम्बित कर सकते हैं? व्यापार में तो निर्णय बहुत शीघ्र लेने पड़ते हैं, नहीं तो व्यापार चौपट हो जाता है। किन्तु लोक प्रशासन में निर्णय लेना इतना सुगम नहीं है जितना ब्यापारिक जगत् में है चाहे इसमें निर्णय बहुत देर तक निलम्बित नहीं किये जा सकते। व्यापार में शीघ्र निर्णयों की आवश्यकता है किन्तु लोक प्रशासन में ठीक निर्णयों की आवश्यकता है। सर इरनेस्ट गोवरस (Sir Ernest Gowers) ने व्यापारिक तथा सरकारी निर्णयों के अन्तर की ओर विशेष ध्यान दिया है और कहा है कि व्यापारिक जगत् में यदि लिये गये दस निर्णयों में से सात अच्छे, दो न अच्छे न बुरे तथा एक बुरा निर्णय हो तो वर्ष के अन्त में शेयर होल्डरों के लिए परिणाम संतोषजनक होगा। दूसरी ओर, यदि सरकार यह प्रतिशतता प्राप्त करे तो अच्छे निर्णयों को उपेक्षित कर दिया जायेगा और ऐसे निर्णयों की, जो न अच्छे हैं न बुरे, बहुत आलोचना की जायेगी तथा बुरे निर्णय को विरोधी दल कभी द ष्टि से ओझल नहीं होने देंगें।

इसके अतिरिक्त, लोक प्रशासन में निर्णय लेने का कार्य बाह्य प्रभावों से मुक्त नहीं है। कई प्रकार के प्रत्यक्ष तथा अप्रत्यक्ष दबाव डाले जाते हैं तथा कई बार अनिच्छा से निर्णय लेना पड़ जाता है। दूसरी ओर, व्यापारिक प्रशासन स्वतंत्र होता है तथा अपने निर्णय स्वतंत्रता से ले सकता है।

प्रभावी प्रबन्ध, चाहे वह सरकारी संगठन का हो अथवा गैर-सरकारी संगठन का, का अन्ततः अर्थ यह होता है कि उस से संबंधित ठीक था उत्तरदायी निर्णय किये जाएँ। एक अच्छा नेता वह होता है जो निर्णय ले सके, जो इस समस्या को हल कर सके कि कोई विशेष कार्य किया जाए अथवा न किया जाये तथा जो निर्णय करने का उत्तरदायित्व सहर्ष स्वीकार कर सके। प्रायः यह देखा गया है कि आलोचना की स्थिति में मंत्री भी कई बार किये गये निर्णयों का उत्तरदायित्व स्वीकार नहीं करते तथा कैबिनेट के सामूहिक उत्तरदायित्व की आड़ लेते हैं। वस्तुतः उत्तरदायित्व का भार हम सहर्ष नहीं संभालते, कई तो इसे स्वीकार करने के लिए तैयार ही नहीं होते। निर्णय लेने लेने की क्षमता तथा इच्छा के बिना प्रबन्ध कार्य चलाना सम्भव नहीं है।

कोई भी मनुष्य त्रुटिरहित नहीं है। सभी निर्णय व्यक्तियों को पसन्द नहीं आ सकते। साइमन (Simon) के विचार में संगठन की सारी समस्या को सामाजिक तथा मनोवैज्ञानिक परिप्रेक्ष्य में देखने से यह स्पष्ट हो जाता है कि निर्णय

47

लेने का कार्य अनिवार्यतः तार्किक (rational) नहीं है। "किसी संगठन के सदस्यों के केवल मशीनी यन्त्र नहीं समझा जाना चाहिए। उन्हें व्यक्ति समझा जाना चाहिए, जिनकी आवश्यकताएँ, उद्देश्य, प्रेरणाएँ होती हैं, जिनका ज्ञान सीमित होता है, सीख सकने की क्षमता तथा समस्याओं के हल करने की क्षमता सीमित होती है।" इसके, अतिरिक्त कई समस्याओं का समाधान करना होता है तब किसी कार्यकारी अधिकारी के लिए यह निर्णय करना कठिन होता है कि प्रत्येक निर्णय पर कितना समय लगेगा। वस्तुतः बहुत सी समस्याओं के लिए बहुत अल्प समय मिलता है। मार्च (March) के शब्दों में, "व्यापारिक संगठन के जटिल वातावरण में किसी कार्यकारी अधिकारी को निर्णय लेते समय तीन अवस्थाएँ पार करी

Edit Annotate Fill & Sign Convert All

कोई भी मनुष्य त्रुटिरहित नहीं है। सभी निर्णय व्यक्तियों को पसन्द नहीं आ सकते। साइमन (Simon) के विचार में संगठन की सारी समस्या को सामाजिक तथा मनोवैज्ञानिक परिप्रेक्ष्य में देखने से यह स्पष्ट हो जाता है कि निर्णय

लेने का कार्य अनिवार्यतः तार्किक (rational) नहीं है। "किसी संगठन के सदस्यों के केवल मशीनी यन्त्र नहीं समझा जाना चाहिए। उन्हें व्यक्ति समझा जाना चाहिए, जिनकी आवश्यकताएँ, उद्देश्य, प्रेरणाएँ होती हैं, जिनका ज्ञान सीमित होता है, सीख सकने की क्षमता तथा समस्याओं के हल करने की क्षमता सीमित होती है।" इसके, अतिरिक्त कई समस्याओं का समाधान करना होता है तब किसी कार्यकारी अधिकारी के लिए यह निर्णय करना कठिन होता है कि प्रत्येक निर्णय पर कितना समय लगेगा। वस्तुतः बहुत सी समस्याओं के लिए बहुत अल्प समय मिलता है। मार्च (March) के शब्दों में, "व्यापारिक संगठन के जटिल वातावरण में किसी कार्यकारी अधिकारी को निर्णय लेते समय तीन अवस्थाएँ पार करी पड़ती हैं:

१ अनेक समस्याओं में से किसी समस्या की ओर वह ध्यान दे;

२. उस समय की अनिश्चितता का समाधाना करने के लिये वह कितना समय, यत्न था धन लगाये; तथा

३. समस्या का क्या समाधान किया जाये।"

निर्णय का अर्थ
(Meaning of Decision)

शब्दकोश के अनुसार 'निर्णय' का अर्थ है "अपने मन में किसी विचार अथवा कार्रवाई के बारे में निर्धारित (determine) करना।" प्रस्तुत कई विकल्पों में से एक विकल्प चुनना होता है।" वस्तुतः निर्णय लम्बी सोच-विचार का निष्कर्ष है। टैरी के शब्दों में, "निर्णय प्रायः नीति द्वारा निर्धारित सीमाओं के अंतर्गत लिया जाता है। नीति अपेक्षाकृत विस्त त तथा कई समस्याओं को प्रभावित करने वाली होती है। इसके उलट निर्णय किसी विशेष समस्या से सम्बन्धित होता है तथा इसमें निरन्तरता नहीं होती"[1] किन्तु यह भी उल्लेखनीय है कि नीति स्वयं भी निर्णय का परिणाम है। निर्णय एक साधन है, अपने आप में साध्य नहीं है। उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए निर्णय लेने होते हैं; कई बार दोबारा निर्णय लेना पड़ता है। निर्णय स्थायी नहीं होते क्योंकि उन्हें परिवर्तित परिस्थितियों का ध्यान रखना पड़ता है। अब्राहम लिंकन द्वारा एक समिति के सम्मुख जनरल ग्रांट के पक्ष में कहे गए शब्द इसका सर्वोत्तम उदाहरण हैं। वह समिति जनरल ग्रांट की शिकायत कर रही थी। समिति के अध्यक्ष ने कहा, "राष्ट्रपति महोदय, आप जानते हैं कि जनरल ग्रांट कई निर्णय लेता है। वह एक के बाद दूसरा ठीक निर्णय लेता है और कई बिल्कुल गलत निर्णय लेता।" लिंकन ने शान्तिपूर्वक सुना और एक क्षण मौन रहने के बाद कहने लगा, "अध्यक्ष महोदय, आप ठीक कहते हैं किन्तु मेरे विचार में यदि वह एक गलत निर्णय लेता है, उसे शीघ्र ही ज्ञान हो जाता है, वह तुरन्त ही इसे बदल देता है। मैं उसे पदासीन रखने का प्रस्ताव रखता हूँ।"

निर्णय के निम्नलिखित तत्त्व (elements) हैं-

१ निर्णय लेना चयन की प्रक्रिया है तथा लक्ष्य सर्वोत्तम विकल्प चयन करना है;

२. निर्णय का उद्देश्य संगठन के प्रयोजनों को प्राप्त करना होता है;

३. निर्णय-निर्धारण में उपलब्ध विकल्पों का मूल्यांकन निहित है;

४. निर्णय-निर्धारण एक मानसिक प्रक्रिया है;

५. निर्णय-निर्धारण तर्कसंगत होता है।

परन्तु कभी-कभी निर्णय लेते समय इनमें से किसी तत्त्व को उपेक्षित कर दिया जाता है।

निर्णय लेने की प्रक्रिया में उठाये जाने वाले पग
(Steps in the Process of Decision Making)

निर्णय लेने की प्रक्रिया में उठाये जाने वाले पग निम्नलिखित हैं-

1. **समस्या की पहचान करना** (Problem Identification): एक तर्कशील निर्णय लेने की प्रक्रिया में सबसे पहला पग होता है समस्या की सही पहचान करना। एक कार्यपालक की समस्या की पहचान करने की योग्यता की तुलना एक डाक्टर द्वारा मानवीय समस्याओं की पहचान करने से की जा सकती है। परन्तु डाक्टर को इस बात का लाभ होता है कि वह

रोगी की जांच प्रयोगशाला में भी कर सकता है। परन्तु एक प्रशासकीय संगठन के कार्यपालक के पास ऐसी सुविधा नहीं होती। कई बार निर्णण लेने वाला विभिन्न प्रणालियों को ही कारण समझ लेता है तो वह अपने सही मार्ग से भटक जाता

(Steps in the Process of Decision Making)

निर्णय लेने की प्रक्रिया में उठाये जाने वाले पग निम्नलिखित हैं-

1. **समस्या की पहचान करना** (Problem Identification)**:** एक तर्कशील निर्णय लेने की प्रक्रिया में सबसे पहला पग होता है समस्या की सही पहचान करना। एक कार्यपालक की समस्या की पहचान करने की योग्यता की तुलना एक डाक्टर द्वारा मानवीय समस्याओं की पहचान करने से की जा सकती है। परन्तु डाक्टर को इस बात का लाभ होता है कि वह

रोगी की जांच प्रयोगशाला में भी कर सकता है। परन्तु एक प्रशासकीय संगठन के कार्यपालक के पास ऐसी सुविधा नहीं होती। कई बार निर्णण लेने वाला विभिन्न प्रणालियों को ही कारण समझ लेता है तो वह अपने सही मार्ग से भटक जाता है, और जब वह आखिरकार (Symptoms) लक्षणों का इलाज करने लगता है, तो वह समस्या के कारणों को दूर करने में असफल हो जाता है। इस लिए यह आवश्यक है कि समस्या की सही पहचान की जाये और केवल उस के लक्षणों की पहचान करना ही काफी नहीं होगा। इस कदम पर निर्णय करने वाले को प्रासंगिक (Relevant) को असंगिठत (irrelevant) से अलग-करना चाहिए; तथा महत्वपूर्ण को गैर-जरूरी से भी अलग करना चाहिए इस निर्णय लेने वाले को समस्या का वर्णन सरल शब्दों में करना चाहिए। एक बार समस्या की सही पहचान हो गई तो फिर निर्णय लेने वाले के लिए इस को काफी हद तक हल करने के अधिक अवसर पैदा हो जायेंगे।

2. **समस्या का विश्लेषण** (Problem Analysis)**:** अगला पग समस्या के विश्लेषण का है। यदि समस्या बड़ी है तो यही अच्छा रहेगा कि इसको कई भागों में बाँटकर इस का विश्लेषण किया जाये। इससे उसको हल करने में आसानी ही होगी। समस्या का वर्गीकरण भी किया जाना चाहिए। लक्षणों को समस्या से अलग किया जाये, समस्या का कारण, किस्म तथा उसकी प्रकृति का भी पता लगाया जाना चाहिए। समस्या से सम्बन्धित आंकड़े एकत्र किये जाये तथा उन का विश्लेषण किया जाए। इन आंकड़ों का मूल्यांकन करके उन्हें समस्या के लक्षणों तथा कारणों से सम्बन्धित किये जाये। इस से समस्या के प्रारम्भिक समाधान का विकास शुरू हो जायेगा।

3. **सम्भावित विकल्पों को निर्धारित करना** (Determine Possible Alternative)**:** निर्णय लेने की प्रक्रिया में यह एक कठिन पग है। निर्णय लेने वाले को समस्या के सभी सम्भावित अथवा तर्क संगत समाधानों के लिए अपने दिमाग को खुला रखना चाहिए और उसे न केवल उन्हीं समाधानों के बारे में सोचना चाहिए जो उसके द्वारा पूर्व-निर्णीत अथवा उसे प्रिय हो। समस्या के पहले किये गये समाधानों के प्रभाव को कम करने के लिए यत्न किया जाए। समस्या के पहले किये गये समाधानों (Solutions) पर विचार करना बुरा नहीं, परन्तु फिर भी इस बात से बचाव ही करना चाहिए कि समस्या के पहले समाधान ही विचारों के केवल एक मात्र स्रोत हैं। नये विकल्पों को खोजने के लिए यह आवश्यक है कि सभी प्रकार के सम्भावित विकल्पों की सूची तैयार कर ली जानी चाहिए। वास्तव में विकल्प समाधान ही हमारा एकमात्र शस्त्र है, जिस से हम अपने अन्दाजों को क्रियात्मक रूप दे सकते हैं।

4. **विकल्पों के प्रभाव का मूल्यांकन करना** (Evaluate the impact of Alternatives)**:** निर्णय करने वाला अब प्रत्येक विकल्प के प्रभाव का मूल्यांकन करता है। वास्तव में वह विभिन्न विकल्पों को लागू किये जाने पर उन के प्रभावों का अनुमान लगाता है। यदि निर्णय राष्ट्रीय महत्त्व का है तो सार्वजनिक सलाहकार समिति तथा दबाव समूहों के विचार भी जान लिए जाने चाहिएं। इस स्टेज पर निर्णय लेने वाले को निम्नलिखित चार पग उठाने चाहिए-

   (i) ***स्रोतों की पहचान करना:*** समस्या को सुलझाने में सहायक हो सकने वाले जितने भी स्रोत हों उन की पहचान की जाये।

   (ii) ***विकल्प समाधानों को तैयार करना:*** समस्या को हल करने के लिए स्रोतों के विभिन्न जोड़ (Combinations) तैयार करना। इस से समस्या के समाधान के लिए विभिन्न विकल्प तैयार हो सकेंगे।

   (iii) ***प्रत्येक विकल्प का परीक्षण करना:*** प्रत्येक विकल्प का परीक्षण किया जाये। विश्लेषण द्वारा इस बात का पता लगाया जाये कि प्रत्येक विकल्प समस्या को पूरी तरह हल करेगा अथवा उसके कुछ भाग को हल करेगा? क्या वह समस्या को हमेशा के लिए हल करेगा अथवा कुछ समय के लिए? क्या यह व्यावहारिक हो सकेगा? इस पर कितना खर्च होगा? क्या हम इतना खर्च सहन कर सकेंगे? वे लोग जो इस के लिए उत्तरदायी होंगे तथा जो इससे सम्बन्धित होंगे क्या वे इसे स्वीकार करेंगे?

   (iv) ***प्रत्येक विकल्प के लाभों, खर्चों तथा खतरों की सूची तैयार करना:*** क्या प्रत्येक विकल्प एक सुधार है? क्या लाभों तथा क्रिया पर आने वाले खर्चे को मापा जा सकता है? प्रत्येक विकल्प की सफलता की क्या विषमताएं (Odds) होंगी?

4:50 46

करना। इस से समस्या के समाधान के लिए विभिन्न विकल्प तैयार हो सकेंगे।

(iii) ***प्रत्येक विकल्प का परीक्षण करना:*** प्रत्येक विकल्प का परीक्षण किया जाये। विश्लेषण द्वारा इस बात का पता लगाया जाये कि प्रत्येक विकल्प समस्या को पूरी तरह हल करेगा अथवा उसके कुछ भाग को हल करेगा? क्या वह समस्या को हमेशा के लिए हल करेगा अथवा कुछ समय के लिए? क्या यह व्यावहारिक हो सकेगा? इस पर कितना खर्च होगा? क्या हम इतना खर्च सहन कर सकेंगे? वे लोग जो इस के लिए उत्तरदायी होंगे तथा जो इससे सम्बन्धित होंगे क्या वे इसे स्वीकार करेंगे?

(iv) ***प्रत्येक विकल्प के लाभों, खर्चों तथा खतरों की सूची तैयार करना:*** क्या प्रत्येक विकल्प एक सुधार है? क्या लाभों तथा क्रिया पर आने वाले खर्चे को मापा जा सकता है? प्रत्येक विकल्प की सफलता की क्या विषमताएं (Odds) होंगी?

49

5. **एक विकल्प का चुनाव करना** (Selection of an Alternative): यह निर्णय करने की अन्तिम स्टेज होती है। अब निर्णय करने वाले को विभिन्न विकल्पों में से सर्वोत्तम विकल्प का चुनाव करना होता है। ऐसा करते समय निम्नलिखित चार बातों का ध्यान रखना चाहिए-

(i) ***लाभों तथा खतरों की तुलना करना:*** निर्णय लेने वाले को अब अपनी क्रिया द्वारा प्राप्त होने वाले लाभों तथा उसमें आने वाले खतरों की तुलना करनी चाहिए। जिस विकल्प में उसे खतरों की अपेक्षा लाभ अधिक दिखाई देते हों, उसे उस विकल्प का चुना करना चाहिए।

(ii) ***प्रयत्न में मितव्ययिता:*** उस विकल्प को चुना जाये जिस के लागे करने के लिए प्रयत्न कम करना पड़े तथा उसके परिणाम सबसे अधिक हों।

(iii) ***समय के अनुसार:*** सही समय पर सही निर्णय लेना ही सब से कठिन कार्य है। पर निर्णय लेने वाले को यदि अपना निर्णय सफलता से लागू करना है तो उसे ठीक समय पर ही निर्णय ले लेना चाहिए। यदि उसने देर कर दी तो सफलता उसके हाथ नहीं लगेगी।

(iv) ***मानवीय स्रोत:*** सभी स्रोतों में से सब से महत्वपूर्ण स्रोत है- मानवीय शक्ति क्योंकि वे मानव ही होंगे जो निर्णय को लागू करेंगे। इसलिए निर्णय लेने वाले को संगठन के अंदर तथा संगठन के बार ऐसे योग्य व्यक्तियों का पता लागाना होगा जो उसके निर्णय को कुशलतापूर्वक लागू कर सकें।

अच्छा निर्णय लेने में सहायक होने वाले तत्त्व
(Factors Helpful in Good Decision Making)

अच्छा निर्णय लेने में बहुत से तत्त्वों का हाथ होता है। निर्णय लेने वाले को एक योग्य, अच्छा तथा कुशल निर्णय लेने के लिए जो तत्व सहायक होते हैं, वह इस प्रकार हैं-

1. **क्रियाविधि को सरल बनाना** (Simplification of Procedures): लम्बी तथा जटिल क्रियाविधि, गैर-जरूरी नियम तथा विनियम पक्षपातीय झुकाव पैदा करते हैं। इस लिए यह जरूरी है कि कार्यविधि के उन्नत नियम स्थापित किये जायें तथा गैर-ज़रूरी नियमों तथा विनियामों को समाप्त किया जाये।
2. **बोर्ड की किस्म वाले संगठनों का प्रयोग** (Use of Board Type Organisation): बोर्ड की किस्म वाले संगठनों का प्रयोग मन मर्जी के निर्णय करने में कमी लाने में सहायक होता है। क्योंकि इस प्रकार के संगठन में सत्ता व्यक्तियों के समूह में बंटी होती है तथा प्रत्येक व्यक्ति एक-दूसरे द्वारा पक्षपात को रोकने के लिए यत्न करता है।
3. **बाहरी दबाव की रखा** (Protection from External Pressures): कर्मचारियों को बाहरी दबाव से बचाना चाहिए, ताकि वे ठीक निर्णय कर सकें। मन्त्रियों, विधान मण्डल के सदस्यों, राजनीतिक दलों के नेताओं, कई सरकारी तथा गैर-सरकारी संगठनों द्वारा सरकारी कर्मचारियों पर प्रभाव डाले जाते हैं। यह तरीका बहुत गलत है। इससे सरकारी कर्मचारियों की स्वतंत्रता तथा उनमें पहलकदमी (Initiative) करने की भावना समाप्त हो जाती है। इसलिए सरकारी कर्मचारियों को बाहरी दबाव से बचाने के लिए हर प्रकार का प्रयत्न किया जाना चाहिए।
4. **सलाहकार संस्थाओं का प्रयोग** (Use of Consultative Bodies): निर्णय लेने से पहले सलाहकार संस्थाओं से सलाह लेना भी लाभदायक सिद्ध होता हैं ये हमें विभिन्न प्रकार की सूचनाएं प्रदान करती हैं। ये किसी विशेष नीति से सम्बन्धित विभिन्न द ष्टिकोण पेश करती हैं। अन्तिम निर्णय लेने से पहले इन सुझावों पर विचार किया जा सकता है।
5. **पक्षपात का परिहार करना** (Avoid Bias): निर्णय करते समय पक्षपात से काम नहीं लेना चाहिए। निर्णय लेने वाले को खुले हृदय तथ पूर्ण सोच-विचार से निर्णय लेना चाहिए। उसे अपने तथा किसी व्यक्ति विशेष के हितों तथा लाभों को ध्यान में रख कर निर्णय नहीं करना चाहिए। उसे पक्षपातीय भावना का परिहार करना चाहिए।
6. **निर्णयों का प्रचार** (Publicity of Decisions): निर्णय लेने में बहुत से पक्षपातीय झुकावों को रोका जा सकता है, यदि निर्णय करने के योग्य कारणों का प्रचार करने का उपबन्ध किया जाये। ऐसा प्रचार शासन को विनियमित रखने वाली गतिविधियों के सम्बन्ध में विचार किया जाना अति आवश्यक है। उदाहरणतया, यदि लोगों को सरकारी रिकार्ड

Edit Annotate Fill & Sign Convert All

वाले गतिविधियों के सम्बन्ध में विचार किया जाना अति आवश्यक है। उदाहरणतया, यदि लोगों को सरकारी रिकार्ड

की जांच करने की अनुमति प्राप्त हो तथा सरकारी कर्मचारियों को अपनी स्थिति स्पष्ट करने के लिए कहा जाए, तो वे निर्णय करते समय अधिक चेतन रहेंगे। गलत निर्णय करने पर लोग ही उनका पीछा नहीं छोड़ेंगे।

7. **शिक्षा तथा प्रशिक्षण** (Education and Training): योग्य तथा सही निर्णय लेने के लिए यह अति आवश्यक है कि सरकारी कर्मचारियों को इस से सम्बन्धित शिक्षा तथा प्रशिक्षण देने के लिए अच्छे ढंग की व्यवस्था की जाये। हमारी सरकार ने सरकारी अधिकारियों के लिए प्रशिक्षण के कई प्रकार के प्रबन्ध किये हैं। परन्तु यह पर्याप्त नहीं है तथा न ही इन के अन्तर्गत सभी सरकारी अधिकारी एवं कर्मचारी आते हैं। जो नीति को लागू करने में भाग लेते हैं। इसलिए यह आवश्यक है कि ऐसे प्रशिक्षण कार्यक्रमों का विस्तार किया जाये, ताकि सरकारी कर्मचारी अधिक योग्यता, अनुभव या दक्षता से निर्णय ले सकें और उन्हें देश के सामूहिक विकास के लिए कुशलतापूर्वक लागू कर सकें।

हरबर्ट साईमनः निर्णय निर्माण पद्धति
(Herbert Simon's Decision Making Approach)

1945 में हर्बर्ट ए. साइमन ने प्रशासनिक व्यवहार (Administrative Behaviour) नाम से एक पुस्तक का प्रकाशन किया जो एक प्रशासनिक संगठन में निर्णय-निर्माण की प्रक्रिया का अध्ययन है। इसमें कुल 11 अध्याय हैं। अध्याय II एवं III में कुछ प्रविधीय मसलों पर विचार किया गया है ताकि मानवीय तार्किक चयन की संरचना का विश्लेषण किया जा सके। अध्याय IV और V में तार्किक चयन का सिद्धान्त रचा गया है ताकि एक संगठनात्मक पर्यावरण में निर्णय-निर्माण पर पड़ने वाले प्रभावों को समझ सकें। अध्याय VII और X में इन प्रभाव प्रक्रियाओं का विस्तार से अध्ययन किया गया है ताकि निर्णय-निर्माण की प्रक्रिया पर, संगठन के प्रभावों पर विचार किया जा सके। अध्याय XI में यह देखा गया है कि इस विश्लेषण का उपयोग संगठनात्मक संरचना में किस प्रकार किया जा सकता है। इसमें व्यक्ति एवं संगठन के मध्य अभिप्रेरणात्मक कड़ी प्रस्तुत की गई है ताकि यह स्पष्ट किया जा सके कि संगठनात्मक प्रभाव और विशेष रूप से सत्ता के प्रभाव मानवीय व्यवहार के रूप में निर्धारण में कितनी प्रभावशाली शक्तियाँ हैं।

साइमन की पुस्तक 'मानवीय व्यवहार' में प्रशासनिक व्यवहार सम्बन्धी जो विषय सामग्री उपलब्ध होती है उसका वर्णन हम संक्षेप में निम्नलिखित प्रकार से कर रहे हैं।

प्रशासनिक व्यवहार के अध्ययन का महत्त्व
(Importance of the Study of Administrative Behaviour)

प्रो. साइमन का मत है कि संगठन का अध्ययन करते समय ध्यान का मुख्य केन्द्र-बिन्दु कार्यरत कर्मचारी होता है। क्योंकि संरचना की सफलता इसमें उसकी कार्य-सम्पन्नता के आधार पर जाँच की जाएगी।[1] यदि हम किसी संगठन की संरचना और कार्य के विषय में अन्तर्दृष्टि चाहते हैं तो इसके लिए श्रेष्ठ तरीका यह है कि जिस प्रकार संगठन में तथा संगठन द्वारा इन कर्मचारियों के निर्णयों एवं व्यवहार को प्रभावित किया जाता है उस तरीके का विश्लेषण करें। संगठन के उद्देश्यों को पूरा करने का वास्तविक कार्य नीचे स्तर के कार्यकर्त्ताओं के द्वारा किया जाता है। किसी भवन का निर्माण कोई इन्जीनियर या ओवरसीयर के हाथों नहीं वरन् मिस्त्री के हाथों होता है। इसलिए प्रशासनिक पदसोपान में निम्नस्तम्भ स्तर पर कार्य करने वाले व्यक्ति किसी प्रकार कम महत्वपूर्ण नहीं होते वरन् उसका संगठन की लक्ष्य प्राप्ति में उल्लेखनीय योगदान रहता है। इस निम्नतम या कार्यात्मक स्तर ने ऊपर वाले कर्मचारियों का भी महत्व होता है। वे संगठन में उल्लेखनीय भूमिका अदा करते हैं। यह सच है कि मेजर द्वारा युद्ध क्षेत्र में वास्तविक बन्दूक चलाने वाले से किसी प्रकार से कम नहीं होता। जब प्रशासनिक प्रक्रिया का इस रूप में वर्णन करते हैं तो यह सामाजिक मनोविज्ञान की एक समस्या बन जाती है जिसमें कार्यकर्ताओं के एक समूह पर पर्यवेक्षकों का एक समूह और रखना पड़ता है जा कि कार्यशील समूह को समन्वित एवं प्रभावशाली व्यवहार की ओर मोड़ सके।

ब्यवहार करते समय कर्त्ता द्वारा चयन किया जाता है। साइमन ने लिखा है कि समस्त व्यवहार कर्ता के लिए तथा उन लोगों के लिए जिन पर वह प्रभाव एवं सत्ता का प्रयोग करता है, भौतिक रूप से सम्भव समस्त कार्यों में से विशेषण कार्यों का चेतन अथवा अचेतन रूप से चयन करना है। कार्यों का चयन कभी तो अचेतन और अनजाने रूप में होता है तथा कभी यह नियोजित अथवा निर्धारित क्रिया के रूप में होत है।

ब्यवहार पर मूल्यों एवं तथ्यों का प्रभाव
(Influence of Values and Facts on Behaviour)

अधिकांश मानवीय व्यवहार ओर विशेष रूप से प्रशासनिक संगठनों में मानवीय व्यवहार उद्देश्यपूर्ण होता है जो लक्ष्य अथवा

4:51
46

पर्यवेक्षकों का एक समूह और रखना पड़ता है जा कि कार्यशील समूह को समन्वित एवं प्रभावशाली व्यवहार की ओर मोड़ सके।

व्यवहार करते समय कर्त्ता द्वारा चयन किया जाता है। साइमन ने लिखा है कि समस्त व्यवहार कर्ता के लिए तथा उन लोगों के लिए जिन पर वह प्रभाव एवं सत्ता का प्रयोग करता है, भौतिक रूप से सम्भव समस्त कार्यों में से विशेषण कार्यों का चेतन अथवा अचेतन रूप से चयन करना है। कार्यों का चयन कभी तो अचेतन और अनजाने रूप में होता है तथा कभी यह नियोजित अथवा निर्धारित क्रिया के रूप में होत है।

51

व्यवहार पर मूल्यों एवं तथ्यों का प्रभाव

(Influence of Values and Facts on Behaviour)

अधिकांश मानवीय व्यवहार ओर विशेष रूप से प्रशासनिक संगठनों में मानवीय व्यवहार उद्देश्यपूर्ण होता है जो लक्ष्य अथवा उद्देश्यों के प्रतत उन्मुख होता है। यह उद्देश्यपूर्णता उसके व्यवहार के प्रति मान में एकीकरण लाती है जिसके अभाव में प्रशासन अर्थहीन होता है। प्रशासन का अर्थ कार्य का सम्पन्न करना होता है तो 'उद्देश्य' क्या कार्य किया जाना चाहिए इसके लिए एक प्रमुख मापदण्ड त्रस्त करता है। विशिष्ट कार्यों को प्रशासित करने वाले छोटे-छोटे निर्णय अपरिहार्य रूप से उद्देश्य एवं प्रणाली से सम्बन्धित व्यापक निर्णयों को प्रभावित करते हैं। चलने वाला व्यक्ति एक कदम उठाने के लिए अपने पाँव की माँस-पेशियों को सक्रिय करता है; वह अपने उद्देश्य की ओर आगे बढ़ने के लिए एक कदम उठाता है; वह अपने उद्देश्य का लक्ष्य 'डाक के डिब्बे' तक उसमें पत्र डालने जाता है; वह पत्र इसलिए डालता है ताकि कुछ सूचना अन्य व्यक्ति को दे सके आदि-आदि। इस प्रकार मानवीय व्यवहार चयन की एक न टूटने वाली शृंखला है। यह तब तक चलती है जब तक कि अन्तिम लक्ष्य तक नहीं पहुंच जाते। जो निर्णय अन्तिम लक्ष्य के चयन की आरे ले जाते हें उनको मूल्यात्मक निर्णय कहा जाता है तथा जो निर्णय इस लक्ष्य को कार्यान्वित कराते हें वे तथ्यात्मक निर्णय कहे जाते हैं। कभी-कभी एक ही उद्देश्य में मूल्य तथा तथ्यात्मक तत्व मिला दिए जाते हैं।

प्रशासनिक व्यवहार उद्देश्यपूर्ण (Purposive) तथा तार्किक (Rational) होता है। जहाँ तक सामान्य लक्ष्य अथवा उद्देश्य से निर्देशित है वहाँ तक यह उद्देश्यपूर्ण तथा जब यह पहले से चयनित लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए उचित विकल्पों का चयन करता है वहाँ तक यह तार्किक हैं वास्तविक व्यवहार में प्रत्येक निर्णय एक प्रकार से समझौता होता है। अन्तिम रूप से जिस विकल्प का चयन किया जाता है। वह लक्ष्य की पूर्ण प्राप्ति को कभी सम्भव नहीं बनता किन्तु वह तत्कालीन परिस्थितियों में उपलब्ध सर्वश्रेष्ठ समाधान मात्र नहीं बनता। किन्तु वह तत्कालिन परिस्थितियों में उपलब्ध सर्वश्रेष्ठ समाधान मात्र होता हे। पारिस्थितिक स्थितियाँ अपरिहार्य रूप से उपलब्ध विकल्पों को सीमित करती हैं।

प्रशासनिक व्यवहार निर्णय प्रक्रिया

(Administrative Behaviour is Decisional Processes)

प्रशासनिक क्रिया एक सामूहिक क्रिया है। इसको सम्पन्न करने के लिए संगठित कार्य आवश्यक है जिन तकनीकों से यह कार्य-सम्पन्नता सुविधाजनक बनती है उनको प्रशासनिक क्रिया कहते हें। उल्लेखनीय है कि प्रशासनिक क्रियाएँ अथवा व्यवहार मूल रूप से निर्णय निर्माण की प्रक्रिया है। इसके अन्तर्गत संगठन के सदस्यों के निर्णयों में कुछ तत्व डाले जाते हैं, इन तत्वों के चयन एवं निर्धारण के लिए नियमित संगठनात्मक प्रक्रिया स्थापित की जाती हैं तथा इनकी सूचना से गठन के सम्बन्धित सदस्यों तक पहुंचाई जाती हैं संगठन व्यक्ति से उसके स्वयं निर्णय लेने की कुछ स्वायत्तता को छीन लेता है तथा इसके स्थान पर संगठनात्मक-निर्णय प्रक्रिया की स्थापना करता है।

प्रशासनिक व्यवहार जो कि एक निर्णय प्रक्रिया है, वास्तव में समन्वय विशेषज्ञता और दायित्व से युक्त होता है। समन्वय इसलिए जरूरी है क्योंकि सामूहिक व्यवहार में केवल सही निर्णय लेना ही पर्याप्त नहीं है वरन् निर्णय उस समूह के सभी सदस्यों द्वारा पारित भी होने चाहिए। सत्ता या प्रभाव के माध्यम से यह कार्य किया जा सकता है। कार्यात्मक स्तर पर विशेषज्ञता का लाभ प्राप्त करने की द ष्टि से एक संगठन का कार्य इस प्रकार विभाजित किया जाता है ताकि सभी विशेषज्ञता पूर्ण प्रक्रियाएँ वैसी योग्यता रखने वाले लोगों द्वारा ही सम्पन्न की जा सकें। इसी प्रकार निर्णयों में योग्यता लाने की द ष्टि से निर्णय लेने का उत्तरदायित्व भी इस प्रकार आबंटित किया जाए ताकि विशेष योग्यता की अपेक्षा वाले निर्णय ऐसी योग्यता रखने वालों द्वारा ही लिए जाएँ। प्रत्येक संगठन के सदस्यों से यह अपेक्षा की जाती है कि वे समूह द्वारा निर्धारित मानकों का अनुशीलन करें। अधीनस्थ सेवीवर्ग की स्वेच्छा उन नीतियों द्वारा सीमित हो जाती है जो प्रशासनिक पदसोपान में शीर्ष पर स्थित लोगों द्वारा बनाई जाती है।

प्रशासनिक व्यवहार पर सगंठनात्मक प्रभाव

(Organisational Influence over Administrative Behaviour)

संगठन में उच्च स्तरों पर लिए गए निर्णयों का प्रभाव केवल तभी हो सकता है जबकि उनको नीचे तक संचारित किया जाए। यह प्रभाव दो प्रकार का होता है। प्रथम, कार्य करने वाले कर्मचारी में स्वमेव द ष्टिकोण, आदतों एवं ऐसी मनःस्थिति की स्थापना

52

Edit Annotate Fill & Sign Convert All

संगठन में उच्च स्तरों पर लिए गए निर्णयों का प्रभाव केवल तभी हो सकता है जबकि उनको नीचे तक संचारित किया जाए। यह प्रभाव दो प्रकार का होता है। प्रथम, कार्य करने वाले कर्मचारी में स्वमेव द ष्टिकोण, आदतों एवं ऐसी मनःस्थिति की स्थापना

की जाती हैं ताकि वह संगठन, के लिए उपयोगी निर्णय ले सके। दूसरे, संगठन में अन्य कहीं लिए गए निर्णयों को कार्य करने वाले कर्मचारियों को प्रभावित करने की द ष्टि से सत्ता का विशेष महत्व है। जब कोई अधीनस्थ कर्मचारी अपने उच्च अधिकारी के निर्णयों का अनुशीलन करता है तो वह एक से उसकी सत्ता से निर्देशित होता है। सत्ता का प्रयोग करते समय यह आवश्यक नहीं कि उच्च अधिकारी अधीनस्थ को समझाकर प्रभवित करे किन्तु वास्तविक व्यवहार में सुझाव एवं समझाने-बुझाने की कार्यवाही चलने लगी है। सत्ता का प्रयोग ऊपर, नीचे तथा अगल-बगल में होता है। सत्ता का एक औपचारिक रूप भी विकसित हो जाता है। जो इस संगठन के दिन-प्रतिदन के कार्यों में सहयोग करता है। औपचारिक सत्ता मुख्य रूप से विवादों के निपटारे के लिए सुरक्षित करती है।

साइमन का कहना है कि मानवीय व्यवहार की यह प्रभावी विशेषता है कि एक संगठित समूह के सदस्य स्वयं को इस समूह के साथ समरूप बना लेते हैं। निर्णय लेते समय संगठन के प्रति स्वामीभक्ति से प्रभावित होकर वे कार्य के विकल्पों में से चयन करने में अपने कार्यों के संगठन पर होने वाले परिणामों का विचार करते हैं। जब कोई व्यक्ति एक कार्य इसलिए करने का निर्णय लेता है कि वह भारत के लिए कल्याणकारी है तो वह स्वयं को भारत के साथ एक रूप कर लेता है। राष्ट्र, वर्ग या संगठन के प्रति एक रूप होना आधुनिक समाज की संरचना में मौलिक महत्व की बात है। एकरूपता का आभास या संगठनात्मक स्वामिभक्ति प्रशासन में महत्वपूर्ण कार्य सम्पन्न करती है। इसके कारण निर्णय लेना तथा व्यवहार करना सरल तथा सुनिश्चित बन जाता है अन्यथा प्रत्येक निर्णय लेना तथा व्यवहार करना सरल तथा सुनिश्चित बन जाता है अन्यथा प्रत्येक निर्णय के समय समस्त मानवीय मूल्यों पर विचार करना पड़े। मूल्यों के सीमित क्षेत्र पर केन्द्रीकृत होना इसलिए भी मूलभूत है ताकि प्रशासन को उसके निर्णयों के लिए उत्तरदायी ठहराया जा सके।

प्रशासनिक व्यवहार के औचित्य का मापदण्ड मुख्य रूप से कार्यकुशलता होती है। यह सभी तर्कपूर्ण व्यवहारों पर लागू होता है। कार्यकुशलता का अर्थ संक्षेप में यह है कि छोटा से छोटा रास्ता अपनाया जाए, सस्ते साधन अपनाए जाएँ ताकि लक्ष्य प्राप्ति में समय और साधन दोनों कम से कम लगे। संगठन के सदस्यों पर पड़ने वाला प्रभाव मुख्यतः अनौपचारिक प्रकृति का होता है। सूचना एवं परामर्श के माध्यम से सम्पूर्ण संगठन की सभी दिशाओं में प्रभाव डाला जाता है।

संगठनात्मक स्वामिभक्ति एवं कार्यकुशलता के मापदण्डों की भाँति प्रशिक्षण द्वारा भी संगठन के निर्णय एवं प्रशासनिक व्यवहार को प्रभावित किया जाता है। प्रशिक्षण द्वारा एक कर्मचारी को स्वयं निर्णय लेने के लिए तैयार किया जाता है। इसमें सत्ता एवं परामर्श के निरन्तर प्रयोग की आवश्यकता नहीं रहती प्रशिक्षण सेवाकालीन अथवा सेवा पूर्व दोनों प्रकृतियों का हो सकता है जब अनेक निर्णयों में एक जैसे तत्व निहित होते हें तो उस विषय में कर्मचारी को प्रशिक्षण प्रदान किया जाता हैं प्रशिक्षण द्वारा प्रशिक्षणार्थी को आवश्यक तथ्य पिए जाते है। उसके चिन्तन हेतु एक संदर्भ दिया जाता है, उसे मान्य समाधान प्रस्तुत किए जाते हैं तथा उन मूल्यों का आरोपण किया जाता है जो निर्णय लेते समय ध्यान में रखे जाने चाहिए।

प्रशासन में निर्णय लेने का स्थान

साईमन के लिए प्रशासन "कार्य कराने" की कला है। उन्होंने उन प्रक्रियाओं तथा विधियों पर बल दिया जिनसे कार्यवाही सुनिश्चित हो। वह कहते हें कि प्रशासनिक विश्लेषण में उस चयन पर पर्याप्त ध्यान नहीं दिया गया है जो कार्यवाही से पहले किया जाना है। "वस्तुतः कार्यवाही" की अपेक्षा "क्या करनी है" के प्रश्न के निर्धारण पर उचित ध्यान नहीं मिला निर्णय लेना चयन की वह प्रक्रिया है जिस पर कार्यवाही आधारित होती है। साईमन ने इस ओर ध्यान दिलाया है कि इस आयाम को भली प्रकार समझने के अभाव में, प्रशासन का अध्ययन अधिकांश रूप में अपर्याप्त रहेगा क्योंकि यही संगठन में व्यक्ति के व्यवहार का सुस्थिर करता है।

व्यवहारवादी उपागम में, कार्यवाही से पूर्व की प्रक्रिया को समझने का प्रयास किया जाए इसे निर्णय लेने की प्रक्रिया के नाम से जाना जाता है। निर्णय लेने की आवश्यकता उस समय उत्पन्न होती है जब व्यक्ति के पास किसी कार्य को करने के लिए बहुत से विकल्प हाते हैं। परन्तु व्यक्ति को छटनी की प्रक्रिया के माध्यम से केवल एक ही विकल्प चुनना होता हैं अतः निर्णय-निर्माण अनेक विकल्पों का हटाकर एक विकल्प पर लाने की प्रक्रिया के रूप में परिभाषित किया गया है। मानव की बुद्धिमत्ता इसमें है कि वह ऐसे विकल्प का चुनाव करे जिससे अधिकतम सकारात्मक तथा न्यूनतम नकारात्मक

परिणाम निकले। किसी संगठन के प्रयत्नों पर की कुशलता केवल किसी संगठन द्वारा एक कार्य के कारगर रूप से सम्पन्न

परिणाम निकले। किसी संगठन के प्रयत्नों पर की कुशलता केवल किसी संगठन द्वारा एक कार्य के कारगर रूप से सम्पन्न करने पर ही निर्भर नहीं करती बल्कि यह उन सिद्धांतों पर भी निर्भर है जो सही निर्णय-निर्माण सुनिश्चित करें जो बदले में कार्य की सफलता का निर्धारण करते हैं।

किसी भी संगठन में कार्योत्पादक स्तर से ऊपर के लोग महत्वपूर्ण समझे जाते हैं क्योंकि उन्हें निर्णय लेने के अधिक महत्वपूर्ण कार्य सम्पन्न करने पड़ते हैं। उन्हें संगठनात्मक लक्ष्यों या उद्देश्यों को प्राप्त करने में बहुत महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह करना पड़ता है। कार्मिकों के व्यवहार को प्रभावित करने में उनकी महत्वपूर्ण भूमिका है। उदाहरण के लिए सिपाही युद्ध के मैदान में लड़ते हैं और अपने स्तर पर कुछ निर्णय भी लेते हैं परन्तु जनरल द्वारा बनाई गई व्यापक नीति (Strategy) ही युद्ध का परिणाम निर्धारित करती है। इसी प्रकार मोटर उद्योग में असैम्बली लाईन के कारीगरों द्वारा कार बनाई जाती है।

प्रशासनिक व्यवहार में तार्किकता
(Rationality in Adminsitrative Behaviour)

फ्रायड के बाद व्यवहारवादी वैज्ञानिकों की अतीत कालीन संतति द्वारा यह प्रमाणित करने का प्रयास किया गया कि व्यक्ति उतना तार्किक नहीं होता जितना कि यह समझा जाता है। बाद की संततियों ने इसके विपरीत इस बात पर जोर दिया कि व्यक्ति तार्किक होता है। प्रत्येक प्रशासक यह प्रयास करता है कि वह सही निर्णय ले। प्रशासनिक निर्णय का सही होना एक सापेक्षित बात है। वह तब सही है जबकि निर्धारित लक्ष्यों की पूर्ति के लिए सही साधनों का चयन करता हो। एक तर्कशील प्रशासक इन प्रभावशाली साधनों के चयन से सम्बन्ध रखता है। निर्णय की प्रक्रिया में उन विकल्पों को चुना जाता है जो वाँछित लक्ष्यों पर पहुंचने के सही साधन होते हैं। लक्ष्य स्वयं भी प्रायः अन्तिम उद्देश्य के लिए साधन मात्र ही होते हैं। इस प्रकार उद्देश्यों की एक श ंखला अथवा पदसोपान होता है। तार्किकता (Ratonality) का अर्थ साधन-साध्य की कड़ियों की रचना करना है। मनोवैज्ञानिक स्तर पर भी साधन-साध्य सम्बन्ध व्यवहार को एकीकृत करने की चेष्टा करते हैं। साधन तथा साध्य का पदसोपान जिस प्रकार व्यक्ति के व्यवहार की विशेषता है उसी प्रकार यह संगठन के व्यवहार की भी विशेषता है।

प्रत्येक क्षण में व्यक्ति या संगठन के सम्मुख वैकल्पिक व्यवहारों की बहुत बड़ी संख्या होती हैं इनमें से कुछ तो व्यक्ति के चतना पटल पर होते हैं और कुछ नहीं होते। चयन अथवा निर्णय का अर्थ यह है कि इनमें से प्रत्येक क्षण के लिए एक व्यवहार को छाँट लिया जाता हे। कुछ सयम तक व्यवहार का निर्धारित करने वाली निर्णयों को ऐसी श ंखला को रणनीति (Strategy) कहा जाता है। प्रत्येक 'रणनीति' के अपने कुछ सम्भावित परिणाम होते हैं। तार्किक निर्णय का कार्य ऐसी रणनीति का चयन करना है जो अपेक्षित परिणामें की द ष्टि से पसन्द की जाती है। निर्णय की प्रक्रिया मेंं तीन कदम होते हैं। तार्किक निर्णय का कार्य ऐसी निर्णय का चयन करना है जो अपेक्षित परिणामों की द ष्टि से पसन्द की जाती है। निर्णय की प्रक्रिया में तीन कदम होते है- पहले सभी वैकल्पिक रणनीतियों की सूची बनायी जाती है, दूसरे, प्रत्येक रणनीति के सभी परिणामों का निर्धारण किया जाता है तथा तीसरे, इन परिणाम पुँजों का तुलनात्मक अध्ययन किया जाता है। एक बार जब एक रणनीति अपना ली जाती है तो उसे बदल कर दूसरी रणनीति अपनाया जाना उचित नहीं होता क्योंकि समय का बड़ा महत्व होता है। उदाहरण के लिए, यदि एक व्यक्ति डाक्टर बनने के लिए अपने जीवन के सात वर्ष प्रशिक्षण में व्यतीत किए और दस वर्ष उसके व्यवहार में लगा दिए गए तो इसके बाद उसके यह सोचने का प्रश्न नहीं उठता कि उसे डाक्टर बनाना चाहिए, अथवा इन्जीनियर बनाना चाहिए। यही बात प्रशासनिक व्यवहार पर लागू होती है।

प्रशासनिक व्यवहार में ज्ञान की महत्वपूर्ण भूमिका है। ज्ञान के द्वारा यह निर्धारित होता है कि किन वैकल्पिक रणनीतियों से कौन से परिणाम प्राप्त होंगे। कोई व्यक्ति प्रत्यक्ष रूप से अपने कार्यों के परिणामों को नही जान सकता। वह भविष्य के परिणामों की अपेक्षा कर सकता है। ये अपेक्षाएँ ज्ञातअनुभवात्मक सम्बन्धों तथा वर्तमान स्थिति के बारे में सूचना पर आधारित होते हैं। उदाहरण के लिए सेवीवर्ग के चयन की प्रशासनिक निर्णय प्रक्रिया का उल्लेख किया जा सकता है। इसमें प्रत्येक प्रत्याशी की स्थिति के बारे में परीक्षाओं से, सेवा मूल्याँकन से तथा अन्य साधन स्रोतों से आँकड़े एकत्रित किए जाते हें। इन आँकड़ों पर कौन सा प्रत्याशी सबसे सन्तोषजनक कार्य करेगा। यदि भविष्यवाणी सही हैं तो सही निर्णय लिया जा सकेगा।

गैर सरकारी संगठनों में निर्णय लेने की समस्या सरकारी प्रभिकरणों की अपेक्षा अधिक सरल होती है। गैर-सरकारी संगठनों में केवल उन्हीं परिणामों को ध्यान में रखा जाता है जो संगठन को प्रभावित करते हैं जबकि सरकारी अभिकरण में निर्णयों

को सामाजिक मूल्यों के प्रकाश में देखा जाता है। उदाहरण के लिए जब एक गैर-सरकारी निगम का अध्यक्ष अपने किसी सम्बन्धी को फर्म में पद सौंपना चाहता है तो उसे यह देखना होगा कि नियुक्ति का फर्म की कार्य-कुशलता पर क्या प्रभाव पड़ेगा। किन्तु यदि उसी पद पर लोक सेवा में नियुक्ति करनी हो तो उसे यह देखना होगा कि इस कार्य का लोक सेवा में अवसर की समानता के सिद्धान्त पर क्या प्रभाव पड़ेगा।

सगठन में व्यक्ति का व्यवहार सामूहिक प्रकृति का होता है इसलिए कोई निर्णय लेते समय संगठन के सदस्य को अन्य सदस्यों के निर्णयों से भी प्रभावित होना पड़ता हैं प्रत्येक व्यक्ति को अपने कार्यो के परिणामों के बारे में सोचने के साथ साथ दूसरों

4:51
46

की अपेक्षा कर सकता है। ये अपेक्षाएँ ज्ञातअनुभवात्मक सम्बन्धों तथा वर्तमान स्थिति के बारे में सूचना पर आधारित होते हैं। उदाहरण के लिए सेवीवर्ग के चयन की प्रशासनिक निर्णय प्रक्रिया का उल्लेख किया जा सकता है। इसमें प्रत्येक प्रत्याशी की स्थिति के बारे में परीक्षाओं से, सेवा मूल्याँकन से तथा अन्य साधन स्रोतों से आँकड़े एकत्रित किए जाते हैं। इन आँकड़ों पर कौन सा प्रत्याशी सबसे सन्तोषजनक कार्य करेगा। यदि भविष्यवाणी सही हैं तो सही निर्णय लिया जा सकेगा।

गैर सरकारी संगठनों में निर्णय लेने की समस्या सरकारी प्रभिकरणों की अपेक्षा अधिक सरल होती है। गैर-सरकारी संगठनों में केवल उन्हीं परिणामों को ध्यान में रखा जाता है जो संगठन को प्रभावित करते हैं जबकि सरकारी अभिकरण में निर्णयों

को सामाजिक मूल्यों के प्रकाश में देखा जाता है। उदाहरण के लिए जब एक गैर-सरकारी निगम का अध्यक्ष अपने किसी सम्बन्धी को फर्म में पद सौंपना चाहता है तो उसे यह देखना होगा कि नियुक्ति का फर्म की कार्य-कुशलता पर क्या प्रभाव पड़ेगा। किन्तु यदि उसी पद पर लोक सेवा में नियुक्ति करनी हो तो उसे यह देखना होगा कि इस कार्य का लोक सेवा में अवसर की समानता के सिद्धान्त पर क्या प्रभाव पड़ेगा।

सगठन में व्यक्ति का व्यवहार सामूहिक प्रकृति का होता है इसलिए कोई निर्णय लेते समय संगठन के सदस्य को अन्य सदस्यों के निर्णयों से भी प्रभावित होना पड़ता हैं प्रत्येक व्यक्ति को अपने कार्यो के परिणामों के बारे में सोचने के साथ साथ दूसरों के कार्यों पर भी विचार करना होता है। यह कारक सम्पर्ण प्रशासनिक व्यवहार की प्रक्रिया का एक मूलभूत तत्व है। प्रशासक 'क' को कोई रणनीति चुनने से पूर्व यह देखना होगा कि 'क' ने क्या रणनीति अपनायी है। प्रशासनिक कार्य एक प्रकार से टीमवर्क होता है। इसमें प्रत्येक सदस्य को अपना कार्य तो कुशलता से करना ही है साथ ही अन्य के कार्यो की अपेक्षा का ध्यान भी रखना है। सभी के कार्यों की अपेक्षा का ध्यान भी रखना है। सभी के कार्यो में समन्वय रहता है तथा प्रत्येक को दूसरों के नियोजित कार्यो की सूचना प्रदान की जाती है। समन्वय के अभाव में सहयोग प्रभावहीन बन जाता है तथा अपने लक्ष्य प्राप्त नहीं कर पाता।

प्रशासनिक व्यवहार की सीमाएँ

(Limits of the Administrative Behaivour)

किसी एक अलग-अलग व्यक्ति का व्यवहार तार्किकता की उच्च श्रेणी तक पहुँच जाए या असम्भव है। प्रत्येक व्यक्ति के सामने विकल्पों की संख्या इतनी अधिक रहती है तथा उसे प्राप्त सूचना इतनी व्यापक होती है कि वस्तुगत तार्किकता के करीब-करीब पहँचना भी असम्भव होता है। व्यक्तिगत चन कुछ 'प्रदत्तों' के परिवेश में होता है। इन प्रदत्तों (givens) दारा निर्धारित द्वारा निर्धारित सीमाओं के अन्तर्गत की व्यवहार को समायोजित किया जाता है।

प्रशासनिक व्यवहार की वस्तुगत वास्तविकता के लिए तीन बातों का होना आवश्यक है-

(क) तार्किकता के लिए आवश्यक है कि पूर्ण ज्ञान हो तथा प्रत्येक चयन के प्रत्याशित परिणामों का पूर्वानुमान हो। वास्तव में परिणामों का ज्ञान हमेशा अधूरा रहता है।

(ख) ये परिणाम भविष्य में प्राप्त होते हैं अतः कल्पनात्मक रूप से उनके साथ संलग्न मूल्यों का ध्यान रखा जाए। इन मूल्यों का अनुमान भी केवल अपूर्ण रूप से भी लगाया जाता है।

(ग) तार्किकता के लिए यह आवश्यक है कि सभी सम्भावित वैकल्पिक व्यवहारों में से चयन किया जाए। वास्तविक व्यवहार में इन सभी सम्भावित व्यवहारों में से केवल कुछ ही दिमाग में आ पाते हैं। इन कारणों से प्रशासनिक व्यवहार की तार्किकता सीमित हो जाती है।

प्रशासनिक सिद्धान्त का सम्बन्ध मूल रूप से मानवीय सामाजिक व्यवहार के तार्किक एवं गैर-तार्किक पहलुओं के बीच की सीमा-रेखा से होता है। प्रशासनिक क्षेत्र में यद्यपि मानवीय व्यवहार तार्किक होता है किन्तु उसकी यह तार्किकता सीमित है और इसीलिए संगठन तथा प्रशासन के उपयुक्त सिद्धान्त के लिए यहाँ स्थान रहता है।

प्रशासनिक व्यवहार को समझने की द ष्टि से यहाँ आर्थिक व्यवहार के साथ उसकी तुलना कर ली जाय तो उचित होगा। साइमन ने आर्थिक व्यक्ति और उसके चचेरे भाई प्रशासिनक व्यक्ति के मध्य अन्तर किया है। उसके मतानुसार आर्थिक व्यक्ति उसके लिए उपलब्ध सभी विकल्पों में से सर्वश्रेष्ठ का चयन करता है जबकि प्रशासनिक व्यक्ति केवल सन्तोषजनक या ठीक-ठाक कार्य से ही सन्तुष्ट हो जाता है। आर्थिक व्यक्ति इसकी समस्त जटिलताओं के साथ वास्तविक दुनिया पर विचार करता है। प्रशासनिक व्यक्ति यह मानता है कि उसके द्वारा देखी गयी दुनिया एक मनमानी तथा भ्रम प्रसारित करती दुनिया का एक सरलीकृत प्रतिरूप है। वह इस सरलीकरण से इसलिए सन्तुष्ट हो जाता है क्योंकि वह मानता है कि वास्तविक दुनिया मुख्यतः खाली है। वास्तविक दुनिया के अधिकांश तथ्य उसके सामने आने वाली समस्याओं के सन्दर्भ में अधिक संगति नहीं रखते। अपनी इन दो विशेषताओं के कारण प्रशासनिक व्यक्ति सभी सम्भावित, व्यवहारिक विकल्पों की परीक्षा किए बिना ही अपना चयन कर लेता है। वह अपने निर्णय अपेक्षाकृत सरल नियमों के आधार पर ले लेता है।

Edit Annotate Fill & Sign Convert All